[illegible] ---- [illegible]--
[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

एक ई-बुक प्रस्तुति द्वारा

और भी मुफ्त पुस्तकों के लिए वेबसाइट देखें: www.spiritualbee.com

प्रिय पाठक,
यह पुस्तक स्वामी अभेदानंद के संपूर्ण कार्यों के खंड 4 से यहां पुन: प्रस्तुत की गई है। यह पुस्तक अब भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका में सार्वजनिक डोमेन में है, क्योंकि इसका मूल कॉपीराइट समाप्त हो चुका है। “मृत्यु के परे जीवन” स्वामी अभेदानंद द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका में दिए गए व्याख्यानों का संग्रह है। इस विषय पर लिखी गई अधिकांश पुस्तकों के विपरीत, जिनमें मुख्यतः भूत-प्रेतों और अन्य प्रकार की अलौकिक गतिविधियों का वर्णन होता है, यह पुस्तक इस रहस्य को एक ठोस तर्कसंगत और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखती है।
इन व्याख्यानों की शुरुआत चेतना के भौतिक सिद्धांत के विरुद्ध तर्कसंगत दलीलें प्रस्तुत करने पर केंद्रित है, जिसके अनुसार चेतना मस्तिष्क की गतिविधि के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है और इसलिए मृत्यु के बाद चेतना भी समाप्त हो जाती है, अतः मृत्यु के बाद जीवन जैसी कोई चीज नहीं है। पुस्तक के आगे के भाग में, स्वामी अभेदानंद ईसाई धर्मशास्त्र में मृत्यु के बाद आत्मा के भाग्य से संबंधित कई हठधर्मी विचारों का भी खंडन करते हैं: जैसे कि नरक में शाश्वत दंड, मृत्यु के बाद भौतिक शरीर का पुनरुत्थान और यह विश्वास कि आत्मा का जन्म तो होता है, लेकिन मृत्यु नहीं होती।
ऐसा करने में स्वामी अभेदानंद, जिनके मन में ईसा मसीह के प्रति गहरा प्रेम और सम्मान था, ने

यह बात उनकी कई अन्य रचनाओं में भी स्पष्ट है, जैसे कि "क्या ईसा मसीह एक योगी थे" (पुस्तक "हाउ टू" से)।
(क्या आप योगी बन सकते हैं?) अपने अमेरिकी श्रोताओं के समक्ष मृत्यु के बाद के जीवन से संबंधित उच्चतर और अधिक तर्कसंगत वेदांतिक अवधारणाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहे थे, जिन पर भारत के योगियों ने हजारों वर्षों से गहन शोध किया है। जैसा कि स्वामी अभेदानंद स्वयं इस पुस्तक में व्यक्त करते हैं: "विश्व में कोई अन्य राष्ट्र ऐसा नहीं है, जिसे इन विषयों में भारत के समान परिपूर्ण ज्ञान हो।"
चूंकि यह पुस्तक स्वामी अभेदानंद द्वारा दिए गए विभिन्न व्याख्यानों का संकलन है, इसलिए पाठकों को कई अध्यायों में अनेक अवधारणाएँ दोहराई हुई मिलेंगी। इस पुस्तक में दिए गए फुटनोट (पृष्ठ 47 और 58 को छोड़कर) स्वामी अभेदानंद द्वारा अत्यंत सावधानीपूर्वक विस्तृत किए गए हैं।
1
स्वामी प्रज्ञानानंद के संपूर्ण कार्यों के खंड 4 में दिए गए इन कथनों को मैंने यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत किया है। इसलिए संपूर्ण नोट्स और परिशिष्टों के लिए कृपया संपूर्ण कार्यों के खंड 4 को देखें। जहाँ भी संभव हो, मैंने स्वामी प्रज्ञानानंद द्वारा विस्तृत रूप से वर्णित अनेक पुस्तकों के लिंक भी दिए हैं, जिन्हें निःशुल्क डाउनलोड किया जा सकता है। सादर धन्यवाद,
पुलकित माथुर | संस्थापक, द स्पिरिचुअल बी

• • •

स्वामी अभेदानंद के बारे में
स्वामी अभेदानंद श्री रामकृष्ण के 16 प्रत्यक्ष संन्यासी शिष्यों में से एक थे और प्रसिद्ध स्वामी विवेकानंद के आध्यात्मिक भाई थे। वे एक विपुल बुद्धिजीवी और असाधारण आध्यात्मिक अनुभूतियों के धनी थे। यह न केवल उनके अद्भुत लेखन की गहराई से स्पष्ट है, बल्कि श्री रामकृष्ण के मार्गदर्शन में प्राप्त उनके दीक्षा अनुभव से भी स्पष्ट है, जिसका दस्तावेजीकरण उन्होंने अपनी आत्मकथा में किया है।
“एक रविवार की सुबह, मैं दक्षिणेश्वर के मंदिर उद्यान में पहुँचा जहाँ मेरी मुलाकात महान योगी रामकृष्ण परमहंस से हुई। मेरे पिछले जन्म के बारे

में जानने के बाद उन्होंने कहा: ‘आप अपने पिछले जन्म में एक महान योगी थे।’ फिर उन्होंने मुझे दीक्षा दी और एकाग्रता और ध्यान के निर्देश दिए। उन्होंने मेरे सीने को स्पर्श किया और मेरी रीढ़ की हड्डी के आधार पर स्थित कुंडलिनी शक्ति, ‘सर्प शक्ति’ को जागृत किया, और मैं समाधि, अतिचेतना की अवस्था में चला गया।”
श्री रामकृष्ण के मार्गदर्शन में अपने शिष्यत्व काल के दौरान, स्वामी अभेदानंद स्वामी विवेकानंद के एक विश्वसनीय आध्यात्मिक भाई बन गए और दोनों अक्सर वेदांत दर्शन और तत्वमीमांसा पर कई बौद्धिक चर्चाओं में संलग्न रहते थे। 1897 में स्वामी विवेकानंद ने स्वामी अभेदानंद को संयुक्त राज्य अमेरिका आमंत्रित किया और न्यूयॉर्क की वेदांत सोसाइटी की बागडोर उनके सक्षम हाथों में सौंप दी।
स्वामी अभेदानंद द्वारा पश्चिम में अपना पहला सार्वजनिक व्याख्यान देने के बाद, स्वामी विवेकानंद अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा: "भले ही मैं इस दुनिया से चला जाऊं, मेरा संदेश इन प्रिय होठों से गूंजेगा और दुनिया इसे सुनेगी।"
स्वामी अभेदानंद की रचनाएँ पढ़ने वाले किसी भी व्यक्ति को इन शब्दों की सत्यता स्पष्ट हो जाएगी।
वेदांत दर्शन पर विपुल ग्रंथ।
सादर धन्यवाद,
पुलकित माथुर | संस्थापक, द स्पिरिचुअल बी
2

□□□□□□□□

□□□□□□ □□□□□

1. □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ □□□□□□□□□□□□□..... 4
2. □□□□ □□□□□□ □□ □□□ □□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□ □□? 8
3. □□□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□□□□□□□□..... 21
4. □□□□□□ □□ □□□ □□□□□..... 32
5. □□□□□ □□ □□□□□□□□□..... 39
6. □□□□□ □□ □□□□ □□□□□..... 50
7. □□□□□-□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□□..... 56
8. □□□□□-□□□□□□□□ □□ □□□□□..... 67
9. □□□□□□□ □□ □□□□□..... 74
10. □□□□□□□□□□□..... 85
11. □□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□..... 96
12. □□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□ □□□□..... 108
13. □□□□□□□□□□ □□□□□□□□..... 114
14. □□□□□□□□ □□□□□-□□□□..... 122
15. □□□□□□ □□ □□□ □□□□ □□..... 126
16. □□□□□□ □□ □□□□□ – □□□ 1..... 141
17. □□□□□□ □□ □□□□□ – □□□ 2..... 145
149
□□□□□□□□: □□□□□□□ □□ □□□ □□□□□.....

अध्याय 1

आधुनिक विज्ञान और उच्च आध्यात्मिकता
पिछले साठ वर्षों में अध्यात्मवाद ने काफी प्रगति की है, और इसने मृत्यु के बाद मनुष्य के अस्तित्व की सच्चाई की खोज में जुटे कई वैज्ञानिकों को आश्वस्त किया है। प्रायोगिक अध्यात्मवाद की शुरुआत 1870 में अमेरिका में हुई। अगले वर्ष, महान ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक और असाधारण प्रतिभा के धनी सर विलियम क्रूक्स ने माध्यम श्रीमती फ्लोरेंस कुक की सहायता से अपने शोध कार्य शुरू किए।
सर क्रूक्स द्वारा उस प्रसिद्ध माध्यम के साथ तीन वर्षों तक चले प्रयोगों के विस्तृत विवरण में जाना अनावश्यक होगा। इस दौरान, उन्होंने संभावित धोखाधड़ी या छल-कपट से बचने के लिए हर संभव सावधानी बरती और सूक्ष्म उपकरणों के साथ अवलोकन और प्रयोग की वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया। ये सत्र उनके अपने घर में ईमानदार मित्रों के साथ आयोजित किए गए थे, जो आत्माओं से संबंधित घटनाओं में सच्चाई जानने के लिए समान रूप से उत्सुक थे।
कई अमेरिकी श्रीमती फ्लोरेंस कुक की आत्मा-नियंत्रित शक्ति, केटी किंग के नाम से परिचित हो गए। वह स्वयं प्रकट हुईं, उनकी नब्ज़ें रिकॉर्ड की गईं, उनके दिल की धड़कन सुनी गई और उसकी तस्वीरें ली गईं, और उन्होंने अपने प्रकट बालों की लटें वहाँ उपस्थित लोगों में बाँट दीं। हमें याद है कि यह सब उनके अपने कमरों में सख्त परीक्षण की स्थितियों में हुआ, जहाँ दीवारों पर घंटियों के साथ बिजली के तार लगाए गए थे ताकि बाहर से आने वाली थोड़ी सी भी घुसपैठ का तुरंत पता लगाया जा सके। सर विलियम क्रूक्स को पहले वैज्ञानिक जगत ने उपहास का पात्र बनाया, लेकिन उनमें अपने दृढ़ विश्वास का साहस था जिसने उन्हें अपने प्रयोगों की रिपोर्ट प्रकाशित करने के लिए प्रेरित किया, और तब से वे लगातार प्रयोग करते रहे।
सर डब्ल्यू. क्रूक्स को एक अन्य प्रसिद्ध माध्यम, श्री डी.डी. होम का भी सहयोग प्राप्त था, जो प्रतिकूल प्रभावों का सामना करने में श्रीमती फ्लोरेंस कुक से कहीं अधिक सक्षम थे, और उनके अधिकांश सत्र अंधेरे में नहीं, बल्कि प्रकाश में होते थे। अध्यात्मवाद की घटनाओं के वैज्ञानिक

अध्ययन के लिए, इंग्लैंड के प्रख्यात वैज्ञानिकों के संरक्षण में 1885 में लंदन में मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सोसायटी की स्थापना की गई थी। इसे आमतौर पर एस.पी.आर. के नाम से जाना जाता है। इस सोसायटी के अभिलेखों से पता चलता है कि एडमंड गर्नी, डॉ. एफ.डब्ल्यू.एच. मायर्स, फ्रैंक पॉडमोर और उनके उत्तराधिकारियों जैसे लोगों का वैज्ञानिक धैर्य और कर्तव्यनिष्ठा कितनी अद्भुत थी। जिन लोगों ने मायर्स की महान कृति "मानव व्यक्तित्व और शारीरिक मृत्यु के बाद उसका अस्तित्व" पढ़ी है, वे इस कथन की सत्यता को समझेंगे।

1. मानव व्यक्तित्व और शारीरिक मृत्यु के बाद उसका अस्तित्व, डॉ. एफ.डब्ल्यू.एच. मायर्स द्वारा – खंड 1 और खंड 2। 4
(मुफ्त डाउनलोड)
अल्फ्रेड रसेल वालेस, रॉबर्ट डेल ओवेन, प्रोफेसर अकसाकोफ, रिचर्ड हॉजसन, हार्वर्ड के विलियम जेम्स और इंग्लैंड के बर्मिंघम विश्वविद्यालय के प्रिंसिपल सर ओलिवर लॉज जैसे अन्य वैज्ञानिक विचारकों ने आध्यात्मिक अभिव्यक्तियों की सत्यता के संबंध में परीक्षण स्थितियों के तहत सही जांच करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। मौरिस मेटरलिंक ने उनके श्रमसाध्य कार्य का जिक्र करते हुए ठीक ही कहा है:
कोई भी घटना तब तक स्वीकार नहीं की जाती जब तक कि वह निर्विवाद गवाही, निश्चित लिखित अभिलेखों और ठोस पुष्टि से समर्थित न हो; संक्षेप में, उनमें से अधिकांश की मूलभूत सत्यता पर विवाद करना लगभग असंभव है, जब तक कि हम मानवीय साक्ष्य को कोई सकारात्मक मूल्य देने से इनकार करने का निश्चय न कर लें।1
हम सभी इस तथ्य से परिचित हैं कि प्रोफ़ेसर मायर्स, जो कई वर्षों तक एस.पी.आर. के अध्यक्ष रहे, ने अपने मित्रों से वादा किया था कि वे अपनी शारीरिक मृत्यु के बाद निर्णायक रूप से लौटेंगे। उन्होंने अपना वादा निभाया और अपनी मृत्यु के एक महीने बाद, उन्होंने प्रसिद्ध माध्यम श्रीमती थॉम्पसन के माध्यम से सर ओलिवर लॉज से संवाद किया, जब वे सम्मोहन की अवस्था में थीं। मायर्स की पहचान उनके बोले गए पहले कुछ शब्दों से ही हो गई थी, और यह वास्तव में वे ही थे, कोई और नहीं। उन्होंने कहा कि माध्यमों के माध्यम से अपने विचारों को व्यक्त करना उनके लिए बहुत कठिन था।

उन्होंने कहा: "वे अनुवाद ऐसे कर रहे थे जैसे कोई स्कूली बच्चा वर्जिल 2 की पहली पंक्ति का अनुवाद करता है।" अपनी वर्तमान स्थिति का जिक्र करते हुए, मायर्स ने कहा कि वे किसी मार्ग से भटक रहे थे, मानो उन्हें पता ही न हो कि वे मर चुके हैं। उन्हें लगा कि वे किसी अनजान शहर में रास्ता भटक गए हैं, और यहाँ तक कि जब उन्होंने उन लोगों को देखा, जिन्हें वे जानते थे कि वे मर चुके हैं, तब भी उन्हें लगा कि वे केवल भ्रम हैं।3
डॉ. हॉजसन, जो एस.पी.आर. की अमेरिकी शाखा के सचिव थे, जिसके विलियम जेम्स उपाध्यक्ष थे, ने अपनी मृत्यु के बाद वापस आने का वादा किया था, और उनके जाने के एक सप्ताह बाद, वे वापस आए और श्रीमती पाइपर के माध्यम से स्वचालित लेखन द्वारा संवाद किया, और विलियम जेम्स इन बैठकों में उपस्थित थे। हार्वर्ड के विलियम जेम्स ने भी अपनी बारी में, अपनी मृत्यु के बाद वापस आने का वादा किया था। उन्होंने अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंटिफिक रिसर्च के अध्यक्ष और पूर्व में मिशिगन विश्वविद्यालय में अनुप्रयुक्त गणित के प्रोफेसर श्री सी.एन. जोन्स से संपर्क करके अपना वादा निभाया। श्री सी.एन. जोन्स ने न्यूयॉर्क पेपर्स में प्रकाशित अपने लेख में इन संवादों का विस्तृत विवरण दिया।4
पहला पत्र 22 अक्टूबर, 1910 की शाम को प्राप्त हुआ। इसके बाद पाँच और पत्र आए और अंतिम पत्र 11 मार्च, 1911 को प्राप्त हुआ। इन पत्रों में प्रो. जेम्स ने अपनी व्यक्तिगत पहचान स्थापित करने का भरसक प्रयास किया, और श्री जोन्स और वहाँ उपस्थित अन्य सभी लोग इससे संतुष्ट थे। अन्य रोचक बातों के अलावा, प्रो. जेम्स ने कहा:
1. मौरिस मेटरलिंक द्वारा लिखित 'हमारी अनंतता', पृष्ठ 82-83। (निःशुल्क डाउनलोड)
2. वर्जिल: एक प्राचीन रोमन कवि। (स्रोत: विकिपीडिया)
3. मौरिस मेटरलिंक द्वारा हमारी अनंतता, पृष्ठ 103।
4. टाइम्स, 10 दिसंबर, 1911।
मैं आभारी हूं कि कुछ लोग ऐसे भी हैं जो पूरी तरह से चाहते हैं कि मैं यहां आऊं।
मेरा मतलब है, ये भले आदमी जो मेरे बगल में खड़ा है और मुझे उनका इस्तेमाल करने देता है।

उसे—उसके शरीर को। वह बाहर आता है और मुझे अपने शरीर का उपयोग करने देता है और मैं आभारी हूँ। मैं नहीं चाहती
उसे किसी भी तरह से नुकसान पहुंचाना या उसे उसके लिए अनुपयुक्त बनाना।" कहा जाता है कि प्रो. जेम्स ने अपने मित्रों से हाथ मिलाया। सर ओलिवर लॉज ने श्रीमती पाइपर और अन्य माध्यमों की सहायता से कई वैज्ञानिक प्रयोग करने के बाद अब यह विश्वास कर लिया है कि मृत्यु के बाद जीवन का अस्तित्व है। उन्होंने सितंबर 1913 में ब्रिटिश एसोसिएशन के समक्ष अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा:
अपने और अपने सहकर्मियों के प्रति न्यायसंगत भाव रखते हुए, मुझे अपने उपस्थित श्रोताओं को नाराज करने का जोखिम उठाना ही होगा।
न केवल इस बात को रिकॉर्ड में दर्ज करके कि अब रहस्यमय घटना मानी जाती है विज्ञान की विधियों द्वारा सावधानीपूर्वक जांच और क्रमबद्ध किया जा सकता है।
लगातार लागू किया गया, लेकिन इससे आगे बढ़कर और अत्यंत संक्षिप्त रूप से यह कहकर कि
पहले से ही जांचे गए तथ्यों ने मुझे आश्वस्त कर दिया है कि स्मृति और स्नेह एक दूसरे के विपरीत नहीं हैं।
वे पदार्थ के साथ केवल उसी संबंध तक सीमित हैं जिसके द्वारा वे स्वयं को प्रकट कर सकते हैं।
वर्तमान क्षण में, और वह व्यक्तित्व शारीरिक मृत्यु के बाद भी बना रहता है। इसके प्रमाण यह हैं कि
मेरे विचार से, यह सिद्ध होता है कि कुछ निश्चित परिस्थितियों में, निराकार बुद्धि,
भौतिक पक्ष पर हमसे संपर्क कर सकते हैं, इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से हमारे वैज्ञानिक दायरे में आ सकते हैं।
केन।"
महान अंग्रेज वैज्ञानिक अल्फ्रेड आर. वालेस ने भी यही कहा था: “आध्यात्मिकता को साबित करने के लिए और अधिक सबूतों की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि कोई भी स्वीकृत तथ्य
विज्ञान के पक्ष में अधिक या मजबूत प्रमाण मौजूद हैं।

डॉ. थॉमस जे हडसन, जिन्होंने 'मानसिक घटनाओं का नियम' नामक पुस्तक लिखी है, ने कहा:
आज जो व्यक्ति अध्यात्मवाद का खंडन करता है, उसे संशयवादी कहलाने का अधिकार नहीं है, वह तो
बिल्कुल अज्ञानी।
कैमिल फ्लेमरियन, डब्ल्यू. टी. स्टीड, प्रोफेसर हायलॉप और अन्य लोग भी इस बात से पूरी तरह आश्वस्त थे कि निराकार आत्माएं हमसे संवाद कर सकती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि विज्ञान के ऐसे महान विद्वानों ने, जैसा कि मैंने उल्लेख किया है, उस सत्य को पहले ही स्वीकार कर लिया है जिस पर आधुनिक अध्यात्मवाद आधारित है।
हालांकि कई पेशेवर माध्यमों का धोखाधड़ी के रूप में पर्दाफाश हो चुका है, फिर भी कुछ वास्तविक माध्यम और प्रामाणिक आध्यात्मिक अभिव्यक्तियाँ मौजूद हैं जिन्हें टेलीपैथी या किसी अन्य सिद्धांत से नहीं समझाया जा सकता, सिवाय इसके कि ये निराकार आत्माओं के बीच संवाद का सिद्धांत है। कई बार, श्रोता पृथ्वी पर मौजूद आत्माओं द्वारा भ्रमित हो जाते हैं।
भौतिक जगत में घटित होने वाली घटनाएं, जैसे मेज पलटना, आत्मा का आभास होना आदि, आमतौर पर अध्यात्मवाद के अंतर्गत आती हैं। लेकिन ये सभी घटनाएं अध्यात्मवाद या प्रेतवाद की निम्न श्रेणी में आती हैं, जैसा कि कई लोग इसे कहते हैं। प्रेतवाद केवल हमारी जिज्ञासा को संतुष्ट कर सकता है और हमारे किसी भी जीवन संबंधी प्रश्न का उत्तर नहीं देता।
लेकिन सच्चे अध्यात्मवाद को उस अवस्था से अलग समझना चाहिए जिसे प्रेतवाद कहा जाता है। इसलिए, उच्चतर अध्यात्मवाद वह है जो मृत्यु के बाद जीवन में विश्वास से शुरू होकर आत्मा के स्वरूप और ईश्वर के साथ उसके संबंध को प्रकट करता है।
यह उच्च आध्यात्मिकता विश्व के सभी महान धर्मों की जड़ है। तथाकथित स्वर्गदूतों या ईश्वर के दूतों, या भारत में जिन्हें प्रकाशमान आत्माएँ कहा जाता है, उनसे संवाद करना पुराने और नए नियम के पैगंबरों और द्रष्टाओं के ज्ञान और प्रेरणा का स्रोत रहा है। इब्राहीम, याकूब और मूसा के समय से लेकर ईसा मसीह और उनके शिष्यों के समय तक, सभी पैगंबरों और द्रष्टाओं ने आत्माओं को देखा, उनकी वाणी सुनी और उनके उपदेशों का अनुसरण किया। जैसा कि ईसाई धर्म और यहूदी धर्म में है, वैसा ही विश्व के अन्य धर्मों में भी है।

जिस प्रकार अतीत के सच्चे और गंभीर आत्माओं को ईश्वरीय संदेश प्राप्त हुए, उसी प्रकार इस युग में भी प्राप्त हो रहे हैं।
जिन लोगों ने स्टैनटन मोसेस के माध्यम से प्राप्त आध्यात्मिक शिक्षाओं को पढ़ा है, उन्हें याद होगा कि कैसे डॉक्टर, रेक्टर, इंपेरेटर के नाम से उच्च आत्माओं ने मानवता को मौजूदा चर्चों के हठधर्मिता, मत और अंधविश्वास से बाहर निकालने में मदद करने के लिए अपने संदेश प्रकट किए।
यहां हमें यह याद रखना चाहिए कि स्टेनटन मोसेस इंग्लैंड के एक रूढ़िवादी एंग्लिकन पादरी थे। वे सिद्धांतवादी और धर्मनिष्ठ थे, लेकिन फिर भी उनके माध्यम से ऐसे संदेश आए जो न केवल उनके लिए, बल्कि संपूर्ण ईसाई जगत के लिए आश्चर्यजनक थे।

1. स्टेनटन मोसेस एक अंग्रेज पादरी और ख्यातिप्राप्त माध्यम थे जिन्होंने स्पिरिट टीचिंग्स नामक पुस्तक लिखी थी। 7
(मुफ्त डाउनलोड)

अध्याय II

क्या मृत्यु के बाद आत्मा का अस्तित्व रहता है?
उपनिषदों की सबसे काव्यमय रचनाओं में से एक, मेरा तात्पर्य कथा से है, जिसका अनुवाद सर एडविन अर्नोल्ड ने 'मृत्यु का रहस्य' शीर्षक से किया है, इस प्रश्न से शुरू होती है:
“यह संदेह बना रहता है; जब कोई व्यक्ति मर जाता है तो कुछ लोग कहते हैं कि वह हमेशा के लिए चला गया है, कि वह
कुछ लोगों का मानना है कि वह जीवित नहीं है, जबकि अन्य लोगों का मानना है कि वह अभी भी जीवित है; इनमें से कौन सा कथन सत्य है?
इस प्रश्न के अनेक उत्तर दिए गए हैं, और तत्वमीमांसा, दर्शनशास्त्र, विज्ञान और धर्म ने भी इस समस्या को हल करने का प्रयास किया है। साथ ही, इस प्रश्न को दबाने और मृत्यु के बाद मनुष्य के अस्तित्व की जाँच को रोकने के प्रयास भी किए गए हैं। सैकड़ों विचारकों ने इस महत्वपूर्ण विषय से संबंधित प्रश्नों को समाप्त करने के लिए तरह-तरह के तर्क प्रस्तुत किए हैं।
प्राचीन काल से ही भारत में नास्तिक और अज्ञेयवादी विचारक रहे हैं, जो शरीर की मृत्यु के बाद आत्मा के अस्तित्व को नकारते थे। इन्हें चार्वाक कहा जाता है। उनका मानना है कि शरीर ही आत्मा है, और आत्मा शरीर के बाहर विद्यमान नहीं है, और शरीर के मरने के साथ ही आत्मा भी मर जाती है। वे ऐसी किसी भी चीज़ में विश्वास नहीं करते जिसे इंद्रियों द्वारा अनुभव न किया जा सके। उनका आदर्श वाक्य है:
जब तक आप जीवित हैं, आनंद लेना न भूलें। सुखमय जीवन जिएं और जीवन के सुखों का लुत्फ़ उठाएं।
जीवन। भविष्य के बारे में मत सोचो। अपनी सभी ज़रूरतों और इच्छाओं को पूरा करो; अगर तुम्हारे पास नहीं है
अगर पैसा चाहिए तो भीख मांगकर या उधार लेकर ले लो, क्योंकि जब शरीर जलकर राख हो जाएगा तो किसी के पास नहीं बचेगा।
अपने कर्मों के लिए जवाबदेह होना। 3

ऐसे चार्वाक हमें लगभग हर देश में मिलते हैं। उदाहरण के लिए, पुराने नियम में हम पढ़ते हैं, सुलेमान कहते हैं:
जाओ, आनंद से अपनी रोटी खाओ और प्रसन्न मन से अपनी शराब पियो।
पत्नी के साथ आनंदपूर्वक—जो कुछ भी तुम्हारा हाथ करने को पाए, उसे पूरी शक्ति से करो; क्योंकि
कब्र में न कोई काम है, न कोई युक्ति है, न कोई ज्ञान है, न कोई बुद्धि है, जहाँ तुम हो।
जाता है।” (उपदेशक 7, 9, 10)
1. मृत्यु का रहस्य (निःशुल्क पुस्तक) – सर एडविन अर्नोल्ड द्वारा कठोपनिषद का अनुवाद।
2. कठ उपनिषद (जिसे कठोपनिषद भी कहा जाता है) – श्लोक 1.1.20 (अध्याय 1, खंड 1, श्लोक संख्या...)
20). मूल संस्कृत श्लोकों और उनके विस्तृत अंग्रेजी अनुवाद को पढ़ने के लिए कृपया देखें
स्वामी चिन्मयानंद द्वारा रचित कठोपनिषद.
3. 14 वीं शताब्दी के विद्वान माधव आचार्य द्वारा रचित सर्व-दर्शन-संग्रह एक ऐसी पुस्तक है जिसमें विस्तृत वर्णन है।
प्राचीन भारतीय दर्शन के सभी ज्ञात (16) स्कूलों के प्रमुख सिद्धांत। पुस्तक का पहला अध्याय 8
यह चार्वाक दर्शन के नाम से जाने जाने वाले भौतिकवादी और नास्तिक दर्शन के विचारों की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।
लोकायत। सर्व-दर्शन-संग्रह का अंग्रेजी अनुवाद और मूल संस्करण दोनों उपलब्ध हैं।
संस्कृत। (दोनों संस्करण मुफ्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध हैं।)
ऐसे विचारकों के अनुयायी बहुत तेजी से फैल रहे हैं और उनकी संख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इन्हें अब नास्तिक, अज्ञेयवादी, भौतिकवादी आदि के नाम से जाना जाता है। इस वर्ग के विचारकों के अनुसार, जो लोग शरीर से अलग आत्मा के अस्तित्व में या मृत्यु के बाद जीवन में विश्वास करते हैं, वे अज्ञानी और अंधविश्वासी मूर्ख हैं, जबकि उनके विचारों का अनुसरण करने वाले चतुर और बुद्धिमान प्राणी हैं। इनमें से अधिकांश का मानना है कि आत्मा जैसी कोई चीज नहीं है। कोई भी तर्क उन्हें मना नहीं सकता या उनके

विचारों को बदल नहीं सकता, क्योंकि वे ऐसी किसी भी चीज के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते जो उनकी इंद्रियों की पहुंच से परे हो या जिसे इंद्रियों की सीमित शक्तियों द्वारा अनुभव नहीं किया जा सकता हो। उन्होंने आत्मा के अस्तित्व के विरुद्ध अनेक ग्रंथ लिखे हैं और मन के ऐसे निरर्थक प्रश्नों को रोकने का प्रयास किया है, परन्तु क्या उनके प्रयासों के बावजूद वे उस सहज प्रश्न को रोक पाए हैं: ‘मृत्यु के बाद क्या शेष रहता है’ जो लगभग प्रत्येक मनुष्य के हृदय में स्वतः ही उठता है? नहीं, वे सफल नहीं हुए हैं। वही प्रश्न आज भी उठता है, जैसे हजारों वर्ष पूर्व उठता था, परन्तु कोई इसे रोक नहीं सकता, क्योंकि यह हमारे स्वभाव से अविभाज्य रूप से जुड़ा हुआ है।
यही सवाल संतों और पापियों ने, पैगंबरों और पुजारियों ने, राजाओं और भिखारियों ने, सभी देशों और सभी जगहों पर पूछा था। आज हम भी इसी सवाल पर चर्चा कर रहे हैं, और भविष्य में भी करते रहेंगे। जीवन की उथल-पुथल और संघर्षों में हम इसे कुछ समय के लिए भूल सकते हैं; सुख-सुविधाओं, विलासिता और इंद्रिय सुखों में डूबे रहने पर हम इसे नहीं पूछते; हम तरह-तरह के झूठे तर्कों से खुद को बहला सकते हैं। लेकिन जिस क्षण मृत्यु अचानक हमारे सामने आती है, जिस क्षण हम देखते हैं कि हमारा कोई प्रियजन अंतिम सांस ले रहा है, हम एक पल के लिए रुकते हैं और अपने भीतर से पूछते हैं: यह क्या है? वह कहाँ चला गया? क्या वह अब भी जीवित है? उसका क्या हुआ?
वे दबे हुए प्रश्न नए रूपों में फिर से प्रकट होते हैं और हमारी मन की शांति भंग करते हैं। तब हम उनके बारे में फिर से पूछताछ शुरू करते हैं; लेकिन हमारी पूछताछ की दहलीज पर ही हमें एक ऐसी अभेद्य दीवार मिलती है जिसे तोड़ना लगभग असंभव है। कमजोर बुद्धि वाले लोग वहीं रुक जाते हैं और उस दीवार को पार करने के उनके कमजोर प्रयास व्यर्थ हो जाते हैं। वह दीवार और कुछ नहीं बल्कि यह विश्वास है कि शरीर आत्मा का स्रोत है और आत्मा उस भौतिक रूप का परिणाम है जिसे हम शरीर कहते हैं।
जो लोग इस प्रबल बाधा को पार कर सकते हैं, वे समझ सकते हैं कि मृत्यु के बाद आत्मा का अस्तित्व है या नहीं। मृत्यु के बाद आत्मा के अस्तित्व और सभी पुरुषों, महिलाओं और बच्चों के लिए भविष्य के जीवन का अनुमान लगाने का पुराना, असत्य तरीका, जो किसी एक व्यक्ति के चमत्कारिक पुनरुत्थान की परंपरा पर आधारित था, अब हमारी तर्कशक्ति को आकर्षित नहीं करता। किसी के

भी कथन पर आँख बंद करके विश्वास करने के दिन बीत चुके हैं। हम अब बच्चे नहीं हैं, हमें परिपक्व तर्कशक्ति की आवश्यकता है, और
1. माधव आचार्य द्वारा रचित सर्व-दर्शन-संग्रह। 9 हम उस प्रश्न पर और अधिक गहराई से चर्चा करना चाहते हैं। जो लोग उस चमत्कारिक पुनरुत्थान में विश्वास करते हैं, वे शायद कहेंगे कि जो लोग इसमें विश्वास नहीं करते, उनके लिए कोई आशा नहीं है। लेकिन हम अब उनके कथनों को स्वीकार नहीं करते। अब समय आ गया है जब हम इस प्रश्न पर वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक, आध्यात्मिक और अन्य सभी संभावित तरीकों से चर्चा करना चाहते हैं।
अब देखते हैं कि शरीर को आत्मा का कारण बताने वाली व्याख्या संतोषजनक है या नहीं। यह मानकर चलें कि आत्मा, या बुद्धि का समूह, या आप इसे जो भी नाम दें, शरीर को बनाने वाले पदार्थों के संयोजन का परिणाम है, तो हम पूछते हैं: उस शरीर का कारण क्या है? कौन सी शक्ति पदार्थों को शरीर के रूप में संयोजित करती है? वह कौन सी शक्ति है जो आपके शरीर को एक रूप में और मेरे शरीर को दूसरे रूप में बनाती है? इन भिन्नताओं का कारण क्या है? भौतिकवादी चार्वाक उत्तर देंगे कि यह शरीर माता-पिता के दूसरे शरीर से उत्पन्न हुआ है। जैसे माता-पिता इस शरीर को उत्पन्न करते हैं, वैसे ही माता-पिता का शरीर इस शरीर का कारण है। लेकिन यह सही उत्तर नहीं है, क्योंकि इस शरीर और पदार्थों के इस संयोजन के कारण को समझाने के बजाय, वे हमें पदार्थों का एक और संयोजन दिखाते हैं, और प्रश्न वही रहता है। पदार्थों के संयोजन का कारण क्या है? वे उत्तर देते हैं, लेकिन साथ ही पदार्थों का एक और संयोजन भी प्रस्तुत करते हैं। इसलिए, पदार्थ के संयोजन के कारण का उत्तर देने और समझाने के बजाय, वे कहते हैं कि यह संयोजन किसी अन्य संयोजन का परिणाम है, जो अंततः अनंत प्रतिगमन की भ्रांति की ओर ले जाता है। शरीर के आधार पर आत्मा की व्याख्या करना, कारण को परिणाम से समझाने के समान है, यानी उल्टी बात करना।
आधुनिक शरीर क्रिया विज्ञानियों, शरीर रचना विज्ञानियों, रोग विज्ञानियों और अन्य कई भौतिकवादी और अज्ञेयवादी विचारकों का मानना है कि शरीर, या पदार्थ का संयोजन, विचार, बुद्धि, चेतना, मन या आत्मा का उत्पादन करता है। वे सिखाते हैं कि विचार, बुद्धि या चेतना मस्तिष्क की क्रिया के अलावा कुछ नहीं है। इसके अलावा, वे यह भी मानते हैं कि विचार का प्रत्येक विशेष रूप मस्तिष्क के एक विशेष भाग की गतिविधि का परिणाम है। जब हम

वस्तुओं को देखते हैं, या देखी गई वस्तुओं के बारे में सोचते हैं, तो हमारे मस्तिष्क की प्रकाशीय संरचनाएं सक्रिय होती हैं। जब हम सुनते हैं, तो कान के पर्दे का एक निश्चित भाग सक्रिय होता है, इत्यादि।
आधुनिक वैज्ञानिकों में से जो मस्तिष्क द्वारा विचार उत्पादन का समर्थन करते हैं, उनका कहना है कि मन मस्तिष्क के कार्यों से जुड़ा हुआ है। यदि मस्तिष्क के कार्य बंद हो जाएं, तो मन, बुद्धि, चेतना और सभी मानसिक घटनाएँ तुरंत रुक जाएंगी। चेतना की घटनाएँ मस्तिष्क के विशिष्ट भागों की क्रियाओं से संबंधित होती हैं। उनका कहना है कि आत्मा जैसी कोई चीज नहीं है; इसलिए, मृत्यु के बाद इसके अस्तित्व का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। वे आत्मा के अस्तित्व को पूरी तरह से नकारते हैं। जब शारीरिक अवस्थाएँ बदलती हैं तो संवेदनाएँ क्षीण हो जाती हैं और जब शरीर की कार्यप्रणाली रुक जाती है तो वे भी रुक जाती हैं। मस्तिष्क चेतना के उस पदार्थ को अस्तित्व में लाता है जिससे हमारा मन बनता है। कुछ लोग उस प्रक्रिया की व्याख्या करते हैं जिसके द्वारा विचार उत्पन्न होता है।
1. बृहदारण्यक उपनिषद 4.5.13 (अध्याय 4, खंड 5, श्लोक संख्या 13)। 10 मस्तिष्क द्वारा उत्पन्न, यह कहकर कि मस्तिष्क की विशिष्ट संरचना विचार और चेतना उत्पन्न करने के लिए नियत है, जैसे पेट पाचन का कार्य करता है और यकृत पित्त स्रावित करता है। जैसे भोजन के पदार्थ पेट में गिरने के बाद परिवर्तित होकर नए गुण ग्रहण करते हैं, वैसे ही मस्तिष्क की छापें तंत्रिकाओं के माध्यम से विचारों, चिंतन, भावना, इच्छाशक्ति, चेहरे के भाव, वाणी, स्वभाव आदि में रूपांतरित हो जाती हैं। इस प्रकार विचार या आत्मा मस्तिष्क का स्राव है और जब मस्तिष्क नष्ट हो जाता है, तो आत्मा का अस्तित्व नहीं रह सकता। यहाँ छापों की तुलना भोजन से की गई है, मानो छापें पदार्थ के स्थूल रूप हों, या मानो वे एक बोधगम्य मन से अलग अस्तित्व में रह सकें। सबसे प्रसिद्ध भौतिकवादियों में से एक, बुचनर कहते हैं:
"सोच को सामान्य प्राकृतिक गति के एक विशेष प्रकार के रूप में माना जाना चाहिए।"
जे. लुइस कहते हैं:
“जैसे किसी धधकती भट्टी में रखी धातु की छड़ धीरे-धीरे गर्म होती है और चमकीले लाल से गहरे लाल और फिर सफेद रंग में बदलती जाती है तथा तापमान बढ़ने के साथ-साथ ऊष्मा और प्रकाश उत्पन्न करती है; उसी प्रकार सजीव

संवेदनशील कोशिकाएं, उन्हें प्रेरित करने वाली उत्तेजनाओं की उपस्थिति में, अपनी आंतरिक संवेदनशीलता के स्तर तक उत्तरोत्तर उन्नत होती जाती हैं।”
पर्सीवल लोवेल कहते हैं:
“जब हमारे मन में कोई विचार आता है, तो हमारे अंदर कुछ इस तरह घटित होता है: आणविक परिवर्तन की तंत्रिका धारा नसों से होकर गुजरती है और अंत में गैन्ग्लिया से होते हुए कॉर्टिकल कोशिकाओं तक पहुँचती है। कॉर्टिकल कोशिकाओं तक पहुँचने पर, उसे ऐसे अणु मिलते हैं जो इस विशेष परिवर्तन के अभ्यस्त नहीं होते। धारा को प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है और इस प्रतिरोध को पार करते हुए, वह कोशिकाओं को प्रज्वलित कर देती है। कोशिकाओं के इस प्रज्वलन को हम चेतना कहते हैं। संक्षेप में, चेतना संभवतः तंत्रिका-प्रज्वलन है।”
इस प्रकार पश्चिमी भौतिकवादी, जो मानते हैं कि भौतिक शक्तियाँ विचारों, सोच और संवेदनाओं में रूपांतरित होती हैं, इस परिवर्तन की प्रक्रिया का वर्णन करते हैं। हर्बर्ट स्पेंसर, जो एक अज्ञेयवादी हैं, भौतिक शक्तियों के चेतना की अवस्थाओं में रूपांतरित होने का समर्थन करते हैं, लेकिन वे इस प्रक्रिया का वर्णन नहीं करते। वे इसे एक रहस्य के रूप में छोड़ देते हैं जिसे समझना असंभव है। अर्थात्, वे नहीं जानते कि यह रूपांतर कैसे होता है, लेकिन उन्हें यकीन है कि यह होता है। हालाँकि, स्पेंसर आत्मा को मस्तिष्क के साथ जोड़ते हैं और इसकी तुलना पियानो से करते हैं। वे कहते हैं:

11
विचार क्रमिक रूप से उत्पन्न होने वाले स्वरों और लय की तरह होते हैं, जो क्रमिक रूप से
जैसे ही अन्य ध्वनियाँ सुनाई देती हैं, वैसे ही ये भी मर जाती हैं, और यह कहना उतना ही उचित होगा कि ये
इसके बाद पियानो में पासिंग कॉर्ड्स और कैडेंस मौजूद होते हैं, जैसा कि कहना उचित है कि
इसके बाद क्षणिक विचार मस्तिष्क (आत्मा) में विद्यमान रहते हैं।
लेकिन यहाँ श्री स्पेंसर यह भूल जाते हैं कि पियानो से संगीतमय ध्वनि उत्पन्न करने के लिए एक कलाकार की आवश्यकता होती है। यदि कलाकार के मन में

संगीत का अस्तित्व न हो, तो पियानो स्वयं संगीत उत्पन्न नहीं कर सकता। इसलिए, उनकी तुलना अपूर्ण और अधूरी है। यह तुलना तब पूर्ण होती जब वे यह मान लेते कि व्यक्ति की आत्मा या मन मस्तिष्क से अलग है और उसके तंत्रिका केंद्रों और मस्तिष्क कोशिकाओं पर उसी प्रकार प्रभाव डालता है जैसे एक कलाकार पियानो की कुंजियों पर वादन करता है।
एक अन्य भौतिकवादी विचारक, प्रोफेसर डब्ल्यू.के. क्लिफोर्ड, जो संयोजन सिद्धांत में विश्वास रखते हैं, कहते हैं:
“चेतना एक जटिल चीज है जो तत्वों से बनी है, भावनाओं की एक धारा है। मस्तिष्क की क्रिया भी एक जटिल प्रक्रिया है जो कई तत्वों से मिलकर बनी होती है, जैसे तंत्रिकाओं का एक प्रवाह।
संदेश। चेतना में मौजूद हर भावना के साथ-साथ एक तंत्रिका भी जुड़ी होती है।
मस्तिष्क का संदेश। चेतना कोई सरल चीज नहीं है, बल्कि जटिल है; यह मस्तिष्क का संदेश है।
भावों का एक प्रवाह में संयोजन। अटल तथ्य हमारी चेतना को जोड़ते हैं।
इस शरीर के साथ जिसे हम जानते हैं; और यह कि न केवल संपूर्ण रूप में, बल्कि इसके अंग भी
हमारे मस्तिष्क की क्रिया के विभिन्न भागों से जुड़ा हुआ है। यदि कोई समान संबंध मौजूद है।
आध्यात्मिक शरीर के साथ, यह स्वाभाविक है कि आध्यात्मिक शरीर की मृत्यु भी उसी समय होनी चाहिए।
प्राकृतिक वाले के साथ।"
इस प्रकार, भौतिकवादी विचारक, जो आत्मा को मस्तिष्क से अलग या भौतिक शरीर से स्वतंत्र नहीं मानते, पदार्थ से या पदार्थ के संयोजन से मन और बुद्धि को निकालने का प्रयास करते हैं, या तो उत्पादन के सिद्धांत को लागू करके या संयोजन के सिद्धांत को लागू करके।
भारत में, चार्वाकों ने भी इसी प्रकार के सिद्धांत प्रतिपादित किए, जो स्थूल शरीर से अलग आत्मा के अस्तित्व में विश्वास नहीं करते थे। बौद्धों का मानना था कि शरीर मन और बुद्धि का कारण है, और चेतना निर्जीव पदार्थ और भौतिक प्रकृति की निराकार शक्तियों के संयोजन का परिणाम है। उन्होंने

मादक पदार्थों के नशे की शक्ति का उदाहरण दिया, जो कुछ विशिष्ट तत्वों के रासायनिक संयोजन से उत्पन्न होती है।
1. लोकायत (चार्वाक) संप्रदाय का मानना है कि चेतना या आत्मा भौतिक शरीर की उपज है।
इसमें कहा गया है कि आत्मा चार भौतिक तत्वों, पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु का ही उप-उत्पाद है, —“पृथ्वी अपाहा तेजो वायुः इति चत्तरी तत्त्वनी तेभ्य चैतन्यम् इति।” लोकायतों (चार्वाकों) के अनुसार, भौतिक शरीर की मृत्यु के साथ ही आत्मा या चेतना का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, —“परलोकिनोभवत् परलोकभव इति।” इसलिए, मृत्यु के बाद लोक जैसी कोई चीज नहीं है। उनके अनुसार, आत्मा का अर्थ है 12
भौतिक शरीर जो मर जाता है। – स्वामी प्रज्ञानानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता। लेकिन वेदांत दार्शनिकों ने इन दोनों भौतिकवादी सिद्धांतों के मूल तर्कों की त्रुटि को उजागर करके उनका खंडन किया। वेदांत कहता है कि ब्रह्मांड का आधा भाग पदार्थ या वस्तु है, और दूसरा आधा भाग मन या आत्मा है। एक से दूसरे को निकालना असंभव है।
सर्वप्रथम, यदि हम पदार्थ और बल के अपने ज्ञान का विश्लेषण करें, तो हम पाते हैं कि हम पदार्थ को स्वयं से नहीं जान सकते, न ही बल को स्वयं से; जो कुछ हम जानते हैं वह मात्र एक मानसिक परिवर्तन है। पदार्थ का ज्ञान उस मानसिक परिवर्तन का ज्ञान मात्र है जिसके प्रति हम सचेत हैं। जब हम कहते हैं कि पदार्थ का अस्तित्व है, तो हम एक विशिष्ट मानसिक परिवर्तन के प्रति सचेत होते हैं, जिसके परे हम नहीं जान सकते। मन स्वयं से परे नहीं जा सकता। यहाँ तक कि हमारा यह ज्ञान कि आत्मा, या मन, मस्तिष्क का एक कार्य है, किसी अन्य मन या ज्ञाता के अस्तित्व को पूर्वकल्पित करता है। जब भी हम कहते हैं कि चेतना या आत्मा पदार्थ के संयोजन का परिणाम है, तो इस कथन के लिए भी किसी अन्य मन का उस विचार के प्रति सचेत होना आवश्यक है। जॉन स्टुअर्ट मिल का यह कहना सही था कि मानव मस्तिष्क का विच्छेदन करने के बाद जब उसमें आत्मा या मन का कोई अंश नहीं मिलता और वह उसके अस्तित्व से इनकार करता है, या यह दावा करता है कि मन या आत्मा मस्तिष्क का कार्य है, तो वह यह भूल जाता है कि ऐसा ज्ञान अनिवार्य रूप से उसके मन या आत्मा के अस्तित्व को दर्शाता है। चूंकि पदार्थ, मस्तिष्क या किसी भी अन्य प्रकार का ज्ञान आत्मचेतना पर निर्भर करता है, इसलिए उस चीज की प्राथमिकता से इनकार करना बेतुका होगा जो

चेतना, बुद्धि और समस्त ज्ञान का आधार है, और जिसकी सहायता से पदार्थ या उसके संयोजनों के अस्तित्व को जाना जा सकता है।
जी.जे. रोमेन्स कहते हैं:
“हम बाह्य प्रकृति के किसी भी तथ्य पर विचार तब तक नहीं कर सकते जब तक कि हम उस मन के अस्तित्व को पूर्वकल्पित न कर लें जो उन पर विचार करता है, और इसलिए, कम से कम जहाँ तक हमारा संबंध है, मन अनिवार्य रूप से अन्य सभी चीजों से पहले आता है। यह हमारे लिए अस्तित्व का एकमात्र ऐसा रूप है जो अपने आप में वास्तविक है और इसे एक मानक के रूप में, अस्तित्व के अन्य सभी रूपों को संदर्भित करना होगा जिन्हें अनुमानित किया जा सकता है। इसलिए, यदि हम कहते हैं कि मन गति का एक कार्य है, तो हम केवल कुछ हद तक भ्रमित शब्दावली में कह रहे हैं कि मन स्वयं का एक कार्य है। इस प्रकार, मैं इसे भौतिकवाद का एक सामान्य खंडन मानता हूँ।”
यदि यह वैज्ञानिक सत्य है कि गति से केवल गति ही उत्पन्न होती है, जैसा कि आधुनिक विज्ञान ने स्थापित किया है, तो हम यह कैसे मान सकते हैं कि मस्तिष्क की कोशिकाओं की आणविक गति चेतना या बुद्धि उत्पन्न करती है, जो गति के समान नहीं है, बल्कि गति का ज्ञाता है? इसलिए वेदांत दर्शन सिखाता है कि चेतना का स्रोत पदार्थ में नहीं पाया जा सकता, बल्कि वह उससे स्वतंत्र है। जिसे हम पदार्थ कहते हैं, वह केवल वह माध्यम है जिसके द्वारा चेतना स्वयं को प्रकट करती है।
पश्चिमी विचारक डॉ. शिलर भी इसी तरह की राय रखते हुए कहते हैं:
1. इस विषय पर गहन चर्चा के लिए कृपया स्वामी अभेदानंद की पुस्तक, 'स्वयं- ज्ञान' देखें।
ज्ञान, अध्याय 1 - आत्मा और पदार्थ। 13
2. जी.जे. रोमेन्स: मन और गति और अद्वैतवाद, पृष्ठ 21
पदार्थ वह नहीं है जो चेतना उत्पन्न करता है, बल्कि वह है जो इसे सीमित करता है और
इसकी तीव्रता को कुछ सीमाओं के भीतर सीमित रखता है; भौतिक संगठन निर्माण नहीं करता है
चेतना परमाणुओं की व्यवस्था से उत्पन्न होती है, लेकिन अपने भीतर ही अपनी अभिव्यक्ति को संकुचित करती है।
वह दायरा जिसकी यह अनुमति देता है।" 1

कुछ अन्य अज्ञेयवादी विचारक भी हैं जो कहते हैं:
"आत्मा को एक ठोस वस्तु के रूप में देखने की धारणा मात्र कल्पना की उपज है।"
कांट कहते हैं:
ऐसा कोई साधन नहीं है जिससे हम इसके बारे में कुछ भी जान सकें।
आत्मा की संरचना, जहाँ तक उसके स्वतंत्र अस्तित्व की संभावना का संबंध है।"
डेविड ह्यूम, कुछ बौद्ध दार्शनिकों की तरह, मानते हैं कि मानव आत्मा विचारों और छापों का एक समूह मात्र है। ह्यूम कहते हैं:
जब मैं अपने आप को गहराई से समझने की कोशिश करता हूँ, तो मुझे हमेशा कुछ न कुछ ठोकर लग जाती है।
गर्मी या ठंड, प्रकाश या छाया, प्रेम या घृणा, दर्द या किसी अन्य प्रकार की विशेष अनुभूति
आनंद। जब मेरी इंद्रियां कुछ समय के लिए दूर हो जाती हैं, जैसे गहरी नींद से, तो
लंबे समय तक मैं स्वयं के प्रति असंवेदनशील रहता हूँ और सचमुच यह कहा जा सकता है कि मेरा अस्तित्व ही नहीं है। और यदि मेरे सभी
मृत्यु ने मेरी सारी धारणाएँ छीन लीं और मैं न तो सोच सकता था, न महसूस कर सकता था, न देख सकता था, न प्यार कर सकता था।
न ही मेरे शरीर के विघटन के बाद घृणा। मैं पूरी तरह से नष्ट हो जाऊंगा; और न ही मैं
कल्पना कीजिए कि मुझे पूर्णतः अस्तित्वहीन बनाने के लिए और क्या आवश्यक है।
तो, ह्यूम के अनुसार, हमारी आत्मा हर रात गहरी नींद में मर जाती है। मुझे लगता है कि हममें से बहुत कम लोग ही मानव आत्मा की प्रकृति की इस व्याख्या को स्वीकार करने के लिए तैयार होंगे।
जो लोग केवल इंद्रिय बोध पर निर्भर रहते हैं, वे मस्तिष्क का विच्छेदन करके आत्मा को खोजने का प्रयास करते हैं, परन्तु जब इंद्रियों से आत्मा प्रकट नहीं होती, तो वे उसके अस्तित्व को नकार देते हैं। वे चाहें तो आत्मा को हृदय या पेट में भी खोज सकते हैं, जैसा कि प्राचीन आत्मा के साधकों ने किया था। यदि हम ठीक से विश्लेषण करें, तो हमें उन सभी भौतिकवादी और

अज्ञेयवादी तर्कों में तार्किक त्रुटियाँ और असंगतताएँ दिखाई देंगी जो इस सिद्धांत का समर्थन करते हैं कि आत्मा शरीर का परिणाम है, या पदार्थ के संयोजन का, या फिर आत्मा का अस्तित्व ही नहीं है।
प्राचीन काल से ही विभिन्न देशों के विचारकों ने बार-बार ऐसे भौतिकवादी निष्कर्ष निकाले हैं। लेकिन क्या हमारा मन ऐसे विचारों से संतुष्ट हो जाता है, और क्या हम बार-बार यह सवाल पूछना बंद कर देते हैं: क्या मृत्यु के बाद कोई जीवन है? यदि हम लाखों बार सुनते हैं कि 'आत्मा नहीं है', तब भी हम पूरी तरह से आश्वस्त नहीं हो सकते कि मृत्यु के बाद हमारा अस्तित्व समाप्त हो जाएगा; हम यह विश्वास नहीं कर सकते कि हमारी व्यक्तिगत पहचान हमेशा के लिए खो जाएगी। ऐसे समाधान पर्याप्त नहीं हैं।
1. ऑक्सफोर्ड के दार्शनिक एफ.सी.एस. शिलर ने अपनी पुस्तक: रिडल्स ऑफ द स्फिंक्स, पृष्ठ 295 में लिखा है कि डॉ. शिलर ने 14 पहेलियाँ रखी थीं। इसके लेखक अज्ञात हैं और इसलिए पुस्तक के आवरण से संकेत मिलता है कि इसे एक "ट्रोग्लोडाइट" (एक गुफावासी) द्वारा लिखा गया था।
ये कथन हमारी बुद्धि को चुनौती देते हैं। ये हमारे मन को संतुष्ट नहीं करते, न ही हमारी आत्मा को कोई सांत्वना देते हैं। ये कथन केवल वही हैं जो शाश्वत रूप से विद्यमान हैं। यदि अस्तित्व आज सत्य है, तो वह शाश्वत रूप से भी सत्य होना चाहिए।
यदि हम शरीर से स्वतंत्र आत्मा के अस्तित्व को नकारते हैं, तो हम अपने जीवनकाल में घटित होने वाली अनेक घटनाओं, और यूरोप और अमेरिका की मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सोसायटी की रिपोर्टों में वर्णित वास्तविक घटनाओं की व्याख्या नहीं कर सकते। हम उन अज्ञेयवादियों के तथ्यों को भी अनदेखा नहीं कर सकते जिन्होंने अपने कमरे में सोफे या आरामकुर्सी पर अकेले बैठे हुए अपने 'द्वंदी' को स्वयं से बाहर देखा है। ऐसे दृष्टांतों के बोलने, चलने या अन्य कई कार्य करने के उदाहरण भी मिलते हैं। इन तथ्यों की व्याख्या कैसे की जा सकती है? भारत में योगियों के दृष्टांतों के प्रकट होने के अनेक वर्णन मिलते हैं। इन घटनाओं को दृष्टिगत भ्रम या मस्तिष्क के मतिभ्रम बताकर समझाने के कई प्रयास किए गए हैं। लेकिन यदि इनकी पुष्टि हो जाती है, तो हम इन्हें दृष्टिगत भ्रम या मतिभ्रम नहीं कह सकते।
हमशक्ल के प्रकट होने के कई प्रमाणित उदाहरण मौजूद हैं। मान लीजिए कि रात को सोने से पहले, कोई व्यक्ति अपने कमरे में अकेला बैठा है, दरवाजा अंदर से

बंद कर चुका है, और उसका मन किसी महत्वपूर्ण व्यावसायिक प्रश्न या गणितीय समस्या को लेकर बहुत परेशान है। अचानक उसे अपने जैसा ही एक दूसरा व्यक्ति अपनी मेज पर कलम लिए बैठा हुआ दिखाई देता है, जो कागज के एक टुकड़े पर कुछ लिख रहा है, और जांच करने पर उसे पता चलता है कि यह उसके प्रश्न का उत्तर है या उस समस्या का सही हल है जिसने उसे कई दिनों से उलझा रखा है।
आप क्या स्पष्टीकरण देंगे? यह किस प्रकार का भ्रम है? इससे अधिक ठोस और संतोषजनक प्रमाण आप क्या चाहते हैं? ऐसी घटना को अंतर्ज्ञान या टेलीपैथी से नहीं समझाया जा सकता। कुछ लोग इसे झूठी कहानी कह सकते हैं, लेकिन मात्र दावे से तथ्य गलत साबित नहीं हो जाते। किसी तथ्य का खंडन करने से उसका स्वरूप नहीं बदल जाता। तथ्य, तथ्य ही रहते हैं, चाहे हम उन्हें मानें या न मानें, चाहे हमारा वर्तमान सिद्धांत उन्हें समझा पाए या न समझा पाए। अंतर्ज्ञान, टेलीपैथी और विचार हस्तांतरण भी इन मामलों को समझाने में विफल रहे हैं। ऐसे तथ्यों को केवल आत्मा के अस्तित्व के सिद्धांत से ही समझाया जा सकता है, जो शरीर से अविभाज्य है।
विज्ञान के अनुसार, वह सिद्धांत सत्य है जो अधिकांश तथ्यों की व्याख्या कर सकता है, और हमें इसे तब तक स्वीकार करना चाहिए जब तक कोई बेहतर सिद्धांत या बेहतर व्याख्या सामने न आ जाए। जो लोग उत्पादन या संयोजन के सिद्धांत में विश्वास करते हैं, वे ऐसे तथ्यों को अनदेखा कर देंगे। लेकिन जो लोग संचरण सिद्धांत में विश्वास करते हैं, या दूसरे शब्दों में, जो मानते हैं कि मानव शरीर का मस्तिष्क वह साधन है जिसके माध्यम से आत्मा अपनी शक्तियों को प्रकट करती है, उन्हें 'द्वैत' से संबंधित सभी वास्तविक घटनाओं की व्याख्या करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। संचरण सिद्धांत
15 स्वयं को अनुभवों के एक पूरे वर्ग के संपर्क में भी रखता है जिसे उत्पादन सिद्धांत द्वारा समझाना मुश्किल है।
मृत्यु के तुरंत बाद व्यक्तियों के अपने मित्रों को दर्शन देने के प्रामाणिक उदाहरण भी मौजूद हैं। भारत, यूरोप और हर देश में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसे उदाहरणों में, मित्रों को दर्शन देने वाले व्यक्ति अपने बच्चों की देखभाल करने का अनुरोध कर सकते हैं या कोई संदेश दे सकते हैं। इन अनुभवों को प्राप्त करने के लिए आध्यात्मिक सत्रों में जाने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे अनेक अनुभव व्यक्तियों के निजी जीवन में और उनके अपने घरों में हुए हैं, और इनकी पुष्टि भी हो चुकी है।

आध्यात्मिक सत्रों में, आत्माओं के प्रकट होने के सौ में से निन्यानवे मामले धोखाधड़ी से भरे होते हैं, और कई पेशेवर माध्यमों का यहाँ-वहाँ पर भंडाफोड़ हो चुका है। पेशेवर माध्यमों का मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना या जीविका चलाना होता है।
भारत में हिंदू पेशेवर माध्यमों पर भरोसा नहीं करते। इसके विपरीत, वे कहते हैं कि पैसे के लिए सार्वजनिक séances आयोजित करना पाप है। बेचारे प्रेतों का शोषण करके जीविका कमाना तो और भी बुरा है। बेचारे प्रेतों को अपने दर्शन कराकर जीविका कमाने की कोशिश क्यों करते हो? ऐसा करने वालों को साधारण फकीर माना जाता है।
हालांकि कई माध्यमों का पर्दाफाश हो चुका है और कई आत्माओं के प्रकट होने के मामले जादू या बाज़ीगरी जैसे साबित हुए हैं, फिर भी इन धोखाधड़ी भरे मामलों को शरीर से अलग आत्मा के अस्तित्व या मृत्यु के बाद के जीवन के अस्तित्व को नकारने का कारण नहीं बनाया जा सकता। अब सवाल यह उठता है: यदि मृत्यु के बाद आत्मा का अस्तित्व है, तो क्या वह अपनी विशिष्टता बनाए रखती है? वेदांत दर्शन कहता है, हाँ, ऐसा होता है। पृथ्वी पर रहने वाली आत्माओं की भी अपनी विशिष्टता बनी रहती है।
हिंदू दर्शन के बारे में बहुत कम जानकारी रखने वाले कुछ पश्चिमी लेखक कहते हैं कि हिंदू धर्म का सर्वोच्च आदर्श आत्मा का विनाश है। ये बचकाने बयान उनकी अज्ञानता और पूर्वाग्रह को दर्शाते हैं। ऐसी बातें हम उन लेखकों से सुनते हैं जो ईसाई मिशनरियों द्वारा दिए गए हिंदू धर्म के वर्णन को पढ़कर खुद को महान विद्वान समझते हैं, जो अपने धर्म के अलावा किसी अन्य धर्म में अच्छाई नहीं देखते और जो केवल अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए लिखते हैं। हालांकि, हिंदुओं के विशाल ग्रंथों में आपको एक भी वाक्य ऐसा नहीं मिलेगा जो यह सिखाता हो कि मृत्यु के बाद आत्मा नष्ट हो जाएगी। इसके विपरीत, आप पढ़ेंगे कि आत्मा शाश्वत, अमर, अमर और जन्म रहित है।
भगवद् गीता में कहा गया है:
1. जैसा कि कैरिंगटन और मीडर ने अपनी पुस्तक, मृत्यु, इसके कारण और घटनाएँ, पृष्ठ 382 में समझाया है - “यह
यह संभव हो सकता है कि यह दिवंगत आत्मा अपने मित्रों के समक्ष, या तो तत्काल रूप से, स्वयं को प्रकट कर सके।

आस-पास, या यहाँ तक कि दूर से भी… मृत्यु के क्षण में, विदा होती आत्मा की अभिव्यक्तियाँ 16 द्वारा देखी जा सकती हैं।
ये बिल्कुल भी असामान्य नहीं हैं, बल्कि इसके विपरीत, इनकी संख्या बहुत अधिक है।"
फ्रांसीसी खगोलशास्त्री कैमिल्ले फ्लेमरियन ने इस प्रकार की कुछ घटनाओं को दर्ज किया है।
उनकी पुस्तक द अननोन, पृष्ठ 100, 108, 169-172।
“मनुष्य की आत्मा अविनाशी है; उसे तलवार से भेदा नहीं जा सकता; आग उसे जला नहीं सकती; हवा उसे सुखा नहीं सकती; पानी उसे नम नहीं कर सकता।”
“यदि हत्यारा यह सोचता है कि उसने हत्या कर दी है, या यदि मारा गया व्यक्ति यह सोचता है कि उसकी हत्या कर दी गई है, तो दोनों ही यह नहीं जानते कि आत्मा न तो हत्या कर सकती है और न ही मारी जा सकती है।” 2
राल्फ वाल्डो एमर्सन ने भगवद गीता का अध्ययन करने के बाद, इस अंश को अपनी कविता 'ब्रह्म' में पद्य रूप में प्रस्तुत किया।
यदि लाल हत्यारा सोचता है कि वह हत्या करता है,
या यदि मृतक को लगता है कि वह मारा गया है,
वे सूक्ष्म तरीकों को अच्छी तरह नहीं जानते।
मैं चलता रहता हूँ, आगे बढ़ता हूँ, और फिर मुड़ जाता हूँ।3
वैयक्तिकता के बने रहने के संबंध में, वेदांत कहता है कि प्रत्येक आत्मा मृत्यु के बाद पृथ्वी पर अर्जित सभी अनुभवों, छापों और विचारों को अपने साथ ले जाती है। वह अपने मन, बुद्धि, विवेक और इंद्रियों की शक्तियों को साथ ले जाती है और अपने विचारों और कर्मों के फल का आनंद लेती है।
हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार, मृत्यु के बाद रिश्तेदार दिवंगत आत्मा के नाम पर अच्छे कर्म करते हैं, यह मानते हुए कि उनके नाम पर किए गए अच्छे विचार, प्रार्थनाएँ और अच्छे कार्य दिवंगत आत्मा की सहायता करेंगे। हिंदू यह भी मानते हैं कि यदि हम लगातार उनका स्मरण करते हैं और केवल अपनी संतुष्टि के लिए उन्हें अपने साथ रहने के लिए आमंत्रित करते हैं, तो हम उन्हें उस विशेष व्यक्तित्व में ही सीमित कर देते हैं जो उनके पार्थिव शरीर से जुड़ा था। व्यक्तित्व हमेशा भौतिक शरीर से जुड़ा होता है। शरीर के प्रत्येक जन्म में, परिवेश के अनुसार हमारा एक निश्चित व्यक्तित्व होता है, और यदि हम एक आत्मा को एक ही व्यक्तित्व या परिवेश में सीमित रखते हैं,

तो आत्मा उच्चतर लोकों में प्रगति नहीं कर पाएगी। इसलिए बेहतर यही है कि हम अपने दिवंगत मित्रों को अपने लोक में न घसीटें, बल्कि उनके लिए अच्छे विचार भेजकर उनकी सहायता करते रहें।
वैदिक युग के सबसे प्राचीन लेखकों ने यह दर्शाया है कि वे पितरों (पिताओं) के आध्यात्मिक लोक में विश्वास करते थे, जहाँ मृत्यु के बाद आत्माएँ जाती हैं। इस लोक के राजा या शासक को यम कहा जाता है। वे मृत्युलोक में प्रवेश करने वाले पहले मनुष्य थे और बाद में आने वालों के शासक बने।
1. भगवद् गीता, अध्याय 2, श्लोक 23 और 24।
2. भगवत गीता, अध्याय 2, श्लोक 19.
3. स्वामी अभेदानंद ने अपनी डायरी के पन्ने में समझाया है, - “जब राल्फ वाल्डो एमर्सन गए
लंदन में कार्लाइल से मिलने के लिए, कार्लाइल ने एमर्सन को अंग्रेजी अनुवाद की एक प्रति भेंट की।
चार्ल्स विल्किंस द्वारा रचित भगवद गीता का अध्ययन करते हुए उन्होंने कहा, 'मैं भगवद गीता की शिक्षाओं से प्रेरित हुआ हूँ।'
गीता और मुझे आशा है कि आप भी उनसे इसी प्रकार प्रेरित होंगे।’ गीता पढ़ने के बाद एमर्सन ने लिखा कि 17
ब्रह्म पर लिखी गई सुंदर कविता।
4. ऋग्वेद, 10 वां मंडल (अध्याय), सूत्र (खंड) 14, श्लोक 7 और 8।
हिंदू स्वर्ग में विश्वास करते हैं, लेकिन नरक में नहीं। हिंदू स्वर्ग ईसाई या मुस्लिम स्वर्ग से भिन्न है। हिंदुओं का मानना है कि स्वर्ग एक ऐसा लोक है जहाँ दिवंगत आत्माएँ अपने अच्छे और सदाचारी कर्मों के फल भोगने जाती हैं, वहाँ कुछ समय तक रहती हैं जब तक कि उनके अच्छे कर्मों का फल पूरी तरह से प्राप्त नहीं हो जाता, और उसके बाद वे इस भौतिक संसार में फिर से लौट आती हैं।1
ईसाई, मुसलमान और पारसी धर्म सभी प्रकार के इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण स्वर्ग में विश्वास करते हैं, जहाँ बिना किसी कष्ट या पीड़ा के निरंतर सुख प्राप्त होते हैं। हिंदुओं के अनुसार, यह एक वांछनीय अवस्था नहीं है। हिंदू कहते हैं कि ये सभी स्वर्गीय सुख क्षणभंगुर और अस्थायी हैं। मान लीजिए कि कोई आत्मा स्वर्ग में दस लाख वर्षों या एक चक्र तक रहती है, तब भी अनंत काल की तुलना में यह बहुत कम समय है। इसलिए वे कहते हैं कि उन लोकों

में अच्छे कर्मों के फल भोगने के बाद, व्यक्ति को अपनी प्रवृत्ति और क्षमताओं के अनुसार या तो यहीं या किसी अन्य ग्रह पर पुनर्जन्म लेना ही पड़ता है।
इसलिए भगवद् गीता में कहा गया है:
“सर्वोच्च स्वर्ग से शुरू होने वाले आत्माओं के सभी विभिन्न लोक, अवस्थाएँ हैं
जहां लौटना ही पड़ता है। क्योंकि वे घटनाओं के दायरे में आते हैं और परिवर्तनशील। परन्तु जो परम सत्य की अनुभूति प्राप्त कर लेता है, वह सब कुछ पार कर जाता है।
घटनाएँ और उन्हें नियंत्रित करने वाले नियम। 2
प्राचीन फारसी मानते थे कि मृत्यु के तीन दिन बाद आत्मा का पुनरावलोकन होता है और वह अपने विचार, वाणी और कर्म के अनुसार स्वर्ग या नरक में जाती है। स्वर्ग के इस फारसी विचार को बाद में यहूदियों और ईसाइयों ने भी अपनाया। प्राचीन इब्रानियों को मृत्यु के बाद के जीवन की चिंता नहीं थी। उनका मानना था कि ईश्वर मनुष्य की नाक में जीवन की साँस फूँकता है, और यहोवा से आने वाली यह साँस वापस उन्हीं के पास जाती है, और सभी प्राणियों की जीवन-साँस उसी स्रोत में लौट जाती है जहाँ से वह आई थी। जो मनुष्य के साथ होता है, वही निम्न प्राणियों के साथ भी होता है। इस जीवन-साँस को कभी- कभी नेफेश, रूआच या नेशमा कहा जाता था।
प्राचीन मिस्रवासी एक 'द्वितीय' (डबल) में विश्वास करते थे, जो शरीर की परछाई की तरह होता था और शरीर के रहने तक बना रहता था। इसी से मृतकों के शरीरों को ममी बनाने की प्रथा का जन्म हुआ। यदि शरीर के किसी भी हिस्से में चोट लगती थी, तो आत्मा (डबल) को भी वैसी ही चोट पहुँचती थी। इसलिए आत्मा को सुरक्षित रखने के लिए वे शरीरों को संरक्षित करते थे।
प्राचीन कसदियों 3 का भी मानना था कि शरीर के नष्ट होने पर एक 'द्वितीय' रूप नष्ट हो जाएगा। वे शव के पुनरुत्थान की आशा रखते थे। कई ईसाइयों का भी ऐसा ही विचार या विश्वास है। इसी विचार से शव को संरक्षित करने और दफनाने की प्रथा का जन्म हुआ।
1. भगवत गीता, अध्याय 9, श्लोक 21. 18
2. भगवत गीता, अध्याय 8, श्लोक 16.

3. चालडियन लोग सेमेटिक लोग थे जो ईसा पूर्व 10 वीं शताब्दी के अंत और 6 वीं शताब्दी के मध्य के बीच रहते थे।
(विकिपीडिया)
कुछ ईसाई अब भी मानते हैं कि मृत्यु के बाद शरीर पुनर्जीवित होगा। अन्य लोग शरीर के पुनरुत्थान में विश्वास नहीं करते। उनका मानना है कि आत्मा अनंत काल तक विद्यमान रहेगी, यद्यपि उसका आरंभ हुआ था।
आत्मा की उत्पत्ति के संबंध में ईसाई मत यह है कि जन्म के समय सर्वशक्तिमान ईश्वर द्वारा प्रत्येक आत्मा का नवगठन होता है। परन्तु हिंदू कहते हैं कि जिसका आरंभ है वह अनन्तकाल तक जीवित नहीं रह सकता, उसका अंत अवश्य होता है। हिंदू यह नहीं मानते कि आत्मा का सृजन ईश्वर द्वारा या किसी अन्य अलौकिक सत्ता द्वारा होता है। यह स्वभाव से ही शाश्वत है। यह जन्म रहित है और इसकी मृत्यु नहीं हो सकती। हिंदुओं के लिए मृत्यु का अर्थ विनाश या संहार नहीं है। उनका तात्पर्य शरीर या रूप के परिवर्तन से है। इस प्रकार की मृत्यु जीवन का एक अभिन्न अंग है। मृत्यु या रूप परिवर्तन के बिना सांसारिक जीवन असंभव है। वास्तव में, हम प्रतिदिन मर रहे हैं। प्रत्येक सात वर्ष में संपूर्ण शरीर का परिवर्तन होता है और इसके साथ ही प्रत्येक कण और परमाणु का नवीकरण होता है।
प्रोफेसर हक्सले कहते हैं:
“शरीर विज्ञान जीवन के द्वार पर लिखता है, 'डेबमुर मोर्टी नोस नोस्ट्राके', जिसका अर्थ रोमन कवि द्वारा इस उदास पंक्ति को दिए गए अर्थ से कहीं अधिक गहरा है। और चाहे वह कवक हो या बलूत का पेड़, कीड़ा हो या मनुष्य, जीवित प्रोटोप्लाज्म न केवल अंततः मर जाता है और अपने खनिज और निर्जीव घटकों में विलीन हो जाता है, बल्कि वह हमेशा मरता रहता है और, भले ही यह विरोधाभास अजीब लगे, मरने के बिना जीवित नहीं रह सकता।”
शरीर का हर कण बदलता रहता है, फिर भी हमारा अस्तित्व बना रहता है। बचपन से बुढ़ापे तक हमारी निरंतरता नहीं टूटती - हम "मैं" की भावना और व्यक्तिगत पहचान को बनाए रखते हैं। सचेत प्राणी या "मैं" की इस निरंतरता को किसी भी भौतिक या रासायनिक नियम से समझाया नहीं जा सकता।
वेदांत दर्शन के अनुसार, विचार, भावना या बुद्धि किसी भी यांत्रिक या आणविक गति से उत्पन्न नहीं हो सकती। आधुनिक विज्ञान कहता है, 'गति से गति उत्पन्न होती है, और कुछ नहीं।' ऐसे में शरीर के परमाणुओं की गति चेतना

कैसे उत्पन्न कर सकती है? यह किसी सूक्ष्म शक्ति या बल के कारण ही संभव है। इस बल को सामान्यतः आत्मा कहा जाता है। आत्मा शरीर में होने वाले परमाणु या आणविक परिवर्तनों से अप्रभावित रहती है, बल्कि वह इन परिवर्तनों का कारण है। यह सभी परिवर्तनों से परे है और फलस्वरूप मृत्यु से भी परे है। यह चेतन अवस्था की निरंतरता और व्यक्ति की पहचान की भावना का आधार है। जिस प्रकार हम प्रत्येक सात वर्षों के परिवर्तन और नवीनीकरण के बाद जीवित रहते हैं और अपनी वैयक्तिकता बनाए रखते हैं, उसी प्रकार हम अपने शरीर के अंतिम विघटन के बाद भी व्यक्तिगत आत्माओं के रूप में जीवित रहेंगे।

1. भगवद् गीता अध्याय 2, श्लोक 20 और कठ उपनिषद 1.2.18 (अध्याय 1, खंड 2, 19) श्लोक 18)।
भगवद् गीता में कहा गया है:
“जैसे हम अपने जीवनकाल में शिशु शरीर, युवा शरीर की मृत्यु से बच जाते हैं, और
परिपक्व शरीर क्रमिक रूप से हमारी व्यक्तिगतता को बनाए रखता है, इसलिए वृद्धों की मृत्यु के बाद भी हम अपनी पहचान बरकरार रखते हैं।
हम अपने शरीर के माध्यम से जीवित रहेंगे, जिएंगे, अपनी विशिष्टता बनाए रखेंगे और अस्तित्व में बने रहेंगे।
अनंतकाल।” 1

1. भगवत गीता अध्याय 2, श्लोक 13. 20

अध्याय III

मृत्यु का वैज्ञानिक दृष्टिकोण
आज के इस व्यावहारिक और भौतिकवादी युग में, बहुत कम लोग मृत्यु के बारे में सोचते हैं। बल्कि वे इससे डरते हैं। वे यह सोचना भी नहीं चाहते कि मृत्यु के बाद क्या होगा। वे इस संसार में जीना, जीवन के सभी सुखों का आनंद लेना, हर चीज का भरपूर उपयोग करना, वसीयत बनाना और अपने जीवन का बीमा कराना या अंतिम संस्कार के खर्चों के लिए कुछ पैसे बचाना और जीवन जीते रहना पसंद करते हैं।
इस नन्ही सी पृथ्वी पर निवास करने वाले दो करोड़ लोगों में से, हर साल चालीस करोड़ मानव शरीर नष्ट हो जाते हैं, और दस लाख टन मानव मांस, हड्डियाँ और रक्त अपने मूल स्वरूप में वापस लौट जाते हैं। यूरोप में हुए पहले युद्ध में, लाखों लोग मारे गए और नष्ट हो गए। उनमें से कुछ तो परमाणुओं में तब्दील हो गए।
लेकिन हम उस भयानक दृश्य के बारे में नहीं सोचते। हम उसे लगभग भूल चुके हैं। इसलिए हम एक पल के लिए भी यह नहीं सोचते कि हमारी मृत्यु होगी। हम पहले की तरह जी नहीं रहे हैं और वही काम नहीं कर रहे हैं जो हम पहले करते थे। हमारी रुचि मृत्यु की समस्या को सुलझाने में नहीं है, हालांकि यह दुनिया का सबसे बड़ा रहस्य है। यह उतना ही रहस्यमय है जितना इस दुनिया में जीवन का आना। फिर भी हम इसके बारे में ज्यादा नहीं सोचते। यहां तक कि ईसाई चर्च भी आज मृत्यु की इस समस्या में उतनी रुचि नहीं लेते, जितनी पिछली सदी में लेते थे। वे सामाजिक, शैक्षिक और विशेष रूप से समकालीन राजनीतिक समस्याओं में अधिक व्यस्त रहते हैं। इस युग के वैद्य भी मृत्यु की समस्या का समाधान नहीं करते, हालांकि हर साल सैकड़ों लोग उनके हाथों मरते हैं। वे हर संभव चीज़ इकट्ठा करते हैं और उनका आदर्श जीवन के सुखों का आनंद लेना और अपने अवसरों का भरपूर लाभ उठाना है।
हिंदुओं के सबसे प्राचीन महाकाव्य महाभारत में, हमें एक ऐसा प्रश्न मिलता है जो प्राचीन काल के विभिन्न महान पुरुषों से पूछा गया था: 'दुनिया में सबसे अद्भुत चीज क्या है?' इसके अनेक उत्तर दिए गए, लेकिन वे संतोषजनक नहीं थे।

युधिष्ठिर का उत्तर स्वीकार कर लिया गया और उनका उत्तर यह था: “प्रतिदिन, और दिन-प्रतिदिन, पशु और मनुष्य इस दुनिया से विदा होते जा रहे हैं, परन्तु हम मृत्यु के बारे में नहीं सोचते; हम सोचते हैं कि हम कभी नहीं मरेंगे। इससे अधिक आश्चर्यजनक क्या हो सकता है?” यह उत्तर लगभग पैंतीस शताब्दियों पहले दिया गया था, और यह सत्य आज भी कायम है। हम मृत्यु के बारे में नहीं सोचते, यद्यपि हम प्रतिदिन अपनी आँखों के सामने शवों को कब्र में ले जाते हुए देखते हैं।

1. प्रथम विश्व युद्ध। 21 मृत्यु का रहस्य प्राचीन लोगों की पौराणिक मान्यताओं से हल नहीं होता, जो पीढ़ियों से हमें विरासत में मिली हैं। यहूदियों, ईसाइयों, पारसियों और मुसलमानों के धर्मग्रंथ मृत्यु का अर्थ नहीं बताते। लेकिन इनमें से कुछ धर्मग्रंथों में हम पाते हैं कि ईश्वर ने प्रथम मनुष्य को कुछ कार्य करने और ज्ञान के वृक्ष का फल न खाने का आदेश दिया था, परन्तु जब प्रथम मनुष्य ने भले-बुरे के ज्ञान के वृक्ष का फल खाया, तो प्रभु ने उसे शाप दिया, और उनके शाप ने इस संसार में मृत्यु ला दी। उत्पत्ति में हम पढ़ते हैं, प्रभु ने आज्ञा दी:
“बाग के हर पेड़ का फल तुम बेझिझक खा सकते हो, परन्तु ज्ञान के वृक्ष का फल तुम मत खाना।”
तुम भले-बुरे, उसे मत खाना; क्योंकि जिस दिन तुम उसे खाओगे, उसी दिन तुम
वह निश्चय ही मरेगा।
बेशक, आदम उस दिन नहीं मरा जिस दिन उसे परीक्षा में डाला गया और उसने उसका फल खाया; लेकिन उसे बाद में उसके परिणाम भुगतने पड़े और उसकी मृत्यु हो गई। यह अंश दर्शाता है कि शुरुआत में परमेश्वर का इरादा मनुष्य की मृत्यु का नहीं था, लेकिन शैतान, यानी इब्लीस के बुरे प्रभाव से मृत्यु संसार में आई। शैतान ही इस संसार में मृत्यु लेकर आया। वास्तव में, श्राप ही कारण था, लेकिन यह श्राप शैतान के बुरे प्रभाव के कारण आया। जो लोग यह मानते हैं कि मृत्यु शैतान के कारण हुई है, वे इस पर और विचार नहीं करते। वे इस प्रश्न को सुलझा हुआ मान लेते हैं और स्वाभाविक रूप से वे अन्य काम करते हैं और समस्या को हल करने का प्रयास नहीं करते। वे सोचते हैं कि यदि यह परमेश्वर का श्राप है, तो यह जीवन का अपरिहार्य अंत है और हमें इससे संतुष्ट रहना चाहिए।

मृत्यु के कारणों का पता लगाने के लिए किए गए वैज्ञानिक शोधों ने कई ऐसे सत्य और नियम उजागर किए हैं जो उत्पत्ति ग्रंथ और अन्य विभिन्न राष्ट्रों के धर्मग्रंथों के लेखकों को ज्ञात नहीं थे।
रूढ़िवादी विज्ञान या भौतिकवादी विज्ञान, जैसा कि हम इसे जानते हैं, जो आत्मा के अस्तित्व को नकारता है और मन, जीवन या बुद्धि के अस्तित्व को भी नकारता है, जो भौतिक बलों और रासायनिक क्रियाओं द्वारा संचालित पदार्थ के परिणाम से अलग नहीं है, कहता है कि मृत्यु जीवन का अंत मात्र है और यह एक अपरिहार्य अंत है जिसका सभी प्राणियों को सामना करना पड़ता है। वैज्ञानिक इसका विस्तृत वर्णन नहीं करते क्योंकि वे इसके बारे में अधिक नहीं जानते। फिर भी वे यह समझाने का प्रयास करते हैं कि जब शरीर के महत्वपूर्ण अंग इस मशीन में घिस जाते हैं, तो स्वाभाविक रूप से पूरी मशीन रुक जाती है। महत्वपूर्ण अंगों में हृदय, फेफड़े और मस्तिष्क शामिल हैं। जब इनमें से कोई भी महत्वपूर्ण केंद्र रोग या दुर्घटना से क्षतिग्रस्त हो जाता है, तो स्वाभाविक रूप से शरीर की पूरी मशीनरी रुक जाती है।
लेकिन यहाँ एक सवाल उठ सकता है: ‘क्या चेतन जीवन की मृत्यु का अर्थ अंगों के जीवन की मृत्यु है?’ या दूसरे शब्दों में, जब कोई व्यक्ति मर जाता है, तो क्या इसका मतलब यह है कि उसके अंग भी मर जाते हैं?

1. उत्पत्ति अध्याय 2, श्लोक 16 और 17। क्या 22 भी मर चुके हैं? इसका उत्तर देना बहुत कठिन प्रश्न है। इसके विपरीत, विज्ञान हमें बताता है कि शरीर या चेतना की मृत्यु के तुरंत बाद अंग नहीं मरते। उदाहरण के लिए, यदि किसी मुर्गी का सिर काट दिया जाए और उसका हृदय निकालकर देखा जाए, तो वह मुर्गी की मृत्यु के बाद भी लंबे समय तक जीवित रहेगा। रॉकफेलर संस्थान में एक मुर्गी का हृदय आठ वर्षों से रखा हुआ है, और वह अभी भी सामान्य रूप से काम कर रहा है। यह दर्शाता है कि अंगों का अपना स्वतंत्र जीवन होता है जो व्यक्ति की चेतना की मृत्यु के बाद भी जीवित रह सकता है।
इसी प्रकार, यह सिद्ध किया जा सकता है कि कोशिकाओं और ऊतकों का अपना जीवन होता है। वे मरते नहीं, बल्कि चेतन जीवन की मृत्यु के बाद भी लंबे समय तक जीवित रहते हैं। आधुनिक विज्ञान हमें बताता है कि मृत्यु दो प्रकार की होती है: एक चेतन जीवन की मृत्यु और दूसरी जैविक एवं कोशिकीय जीवन की मृत्यु, जिसे 'दैहिक जीवन' कहा जाता है। परन्तु एक दूसरे पर निर्भर नहीं

है। वास्तव में, जीवन उस प्राकृतिक प्रक्रिया पर निर्भर करते हुए निरंतर अस्तित्व में रहता है, जो जीवन शक्ति कहलाती है। परन्तु यह भौतिकवादी विज्ञान यह नहीं समझा पाता कि अंग, कोशिकाएँ और ऊतक कैसे जीवित रहते हैं, क्योंकि यह प्रकृति की अन्य सभी ज्ञात शक्तियों से भिन्न किसी जीवन शक्ति या ऊर्जा के अस्तित्व को नकारता है। दूसरी ओर, यह मानता है कि यह जीवन शक्ति जीव के परमाणुओं और अणुओं की रासायनिक क्रियाओं का परिणाम है, और इसलिए यह आगे कोई व्याख्या नहीं कर सकता।
हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के प्रोफेसर चार्ल्स मिनोट अपनी पुस्तक, वृद्धावस्था, विकास और मृत्यु में लिखते हैं:
“विभेदन का अपरिहार्य परिणाम मृत्यु होता है। मृत्यु वह कीमत है जो हमें अपने संगठन और अपने भीतर विद्यमान विभेदन के लिए चुकानी पड़ती है। जैसा कि हम जानते हैं, संपूर्ण शरीर की मृत्यु तब होती है जब शरीर का कोई आवश्यक अंग निष्क्रिय हो जाता है। कभी एक अंग, कभी दूसरा, शायद मस्तिष्क, शायद हृदय, या शायद कोई अन्य आंतरिक अंग सबसे पहले निष्क्रिय हो जाता है, जिसमें कोशिका आकारिकी का परिवर्तन इतना बढ़ जाता है कि वह अपना कार्य करने में असमर्थ हो जाता है और निष्क्रिय होकर संपूर्ण शरीर को निष्क्रिय कर देता है।”
यह मृत्यु का वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। यह मृत्यु को उसके रहस्य और उसकी पवित्रता के साथ ही प्रस्तुत करता है। वर्तमान समय में हम यह बताने में बिल्कुल असमर्थ हैं कि जीवन क्या है, और शायद मृत्यु क्या है, यह तो और भी कम संभव है।
इस प्रकार भौतिकवादी विज्ञान का अध्ययन करके हमें मृत्यु का वास्तविक अर्थ स्पष्ट रूप से समझ नहीं आता। विज्ञान मृत्यु के कारणों का पता लगाने और मृत्यु के लक्षणों का वर्णन करने का प्रयास करता रहता है। विज्ञान हमें बताता है कि मृत्यु के वास्तविक लक्षणों को खोजना बहुत कठिन है। तथाकथित

मृत्यु के 23 प्रचलित लक्षण, जैसे हृदय गति और नाड़ी का रुकना या श्वसन का रुक जाना, वास्तव में मृत्यु के लक्षण नहीं हैं, क्योंकि ऐसे सैकड़ों मामले सामने आए हैं जिनमें हृदय गति और श्वसन रुक गए और फिर भी कुछ समय बाद व्यक्ति को पुनर्जीवित कर दिया गया। हृदय गति कई घंटों, यहाँ तक कि कई दिनों तक भी रुक सकती है और फिर उसे पुनर्जीवित किया जा सकता है। श्वसन

लंबे समय तक रुक सकता है, लेकिन उसे भी बहाल किया जा सकता है। विज्ञान ने ऐसे कई मामले दर्ज किए हैं जिनमें श्वसन या हृदय गति कम से कम अड़तालीस घंटे तक रुकी रही। लेकिन ऐसे भी मामले सामने आए हैं जिनमें लोगों को चालीस दिनों तक एक सीलबंद बक्से में जिंदा दफना दिया गया और बाद में उन्हें बाहर निकालकर पुनर्जीवित किया गया। वे जीवित रहे, शादी की और जीवन के सभी सुखों का आनंद लिया। यह कहना बहुत मुश्किल है कि मृत्यु का सही या अंतिम लक्षण क्या होगा। विज्ञान कहता है कि शरीर का अपघटन और सड़ना ही मृत्यु के एकमात्र अंतिम लक्षण हैं, और कुछ नहीं, और यह दर्शाता है कि लोगों को समय से पहले दफनाया जा सकता है।
विश्व भर की चिकित्सा पत्रिकाओं में हर साल असमय दफनाने के कई मामले दर्ज होते हैं। इसी कारण यूरोप के कुछ देशों ने यह कानून पारित किया है कि मृत्यु के तुरंत बाद शव को तब तक दफनाया नहीं जाना चाहिए जब तक कि शरीर का अपघटन शुरू न हो जाए। क्योंकि जीवित प्राणियों को दफनाना एक बहुत ही गंभीर मामला है। ऐसे कई मामले सामने आए हैं जिनमें लोगों को उनकी वास्तविक मृत्यु से पहले ही ताबूत में डालकर जमीन में दफना दिया गया।
जिस प्रकार असमय दफ़नाना अनुचित है, उसी प्रकार शव को समय से पहले संरक्षित करना भी अनुचित है। शव संरक्षित करने वालों ने कई लोगों को उनकी वास्तविक मृत्यु से पहले ही मार डाला है। उन्हें पुनर्जीवित किया जा सकता था और वे लंबे समय तक जीवित रह सकते थे। क्योंकि आज यह एक सिद्ध तथ्य है कि जब किसी व्यक्ति को मृत मान लिया जाता है, तो वह समाधि की अवस्था में, या कैटालेप्सी की अवस्था में, या परमानंद की अवस्था में हो सकता है।
समाधि, कैटालेप्सी और परमानंद 1 ऐसी अवस्थाएँ हैं जो मृत्यु के समान हैं। बाहरी लक्षण भी समान हैं। लेकिन समाधि या परमानंद के बाद आत्मा का क्या होता है? विज्ञान इसका उत्तर नहीं जानता, क्योंकि वह मन के अलावा आत्मा के अस्तित्व को नहीं मानता। कोई व्यक्ति समाधि की अवस्था में जा सकता है और घंटों तक उसी अवस्था में रह सकता है। ऐसे भी लोग हैं जो अपनी इच्छा से हृदय गति रोक सकते हैं। मैं एक हिंदू योगी को जानता हूँ जो कुछ साल पहले अमेरिका आया था और जिसने न्यूयॉर्क में सभी चिकित्सा परीक्षण करवाकर यह साबित किया कि वह अपनी इच्छा से हृदय गति रोक सकता है। चिकित्सक सभी अचंभित रह गए और उन्होंने प्रश्न किया कि वह ऐसा कैसे कर सकता है। यह संभव है, क्योंकि यह व्यक्ति की इच्छा का पालन करता है, और व्यक्ति की इच्छा ही शरीर के

कार्यों को नियंत्रित करती है। लेकिन भौतिकवादी विज्ञान इन वैज्ञानिक विचारकों द्वारा स्वीकृत ज्ञात नियमों के माध्यम से यह नहीं समझा सकता कि यह कैसे संभव है।

1. परमानंद एक ऐसी अवस्था है जिसमें व्यक्ति सामान्य चेतना से ऊपर उठकर 24 आध्यात्मिक जागरूकता की विस्तारित अवस्था। (स्रोत: विकिपीडिया)
शव को संरक्षित करने और दफनाने की प्राचीन बेबीलोनियन पद्धति, जो ईसा पूर्व के युग से चली आ रही है और आज भी सभी सभ्य देशों में प्रचलित है, इस अंधविश्वास पर आधारित है कि शरीर अंततः उठकर स्वर्ग जाएगा। लेकिन जब शरीर सड़ने लगता है और नष्ट हो जाता है, तो फिर क्या उठेगा? विज्ञान यह सिद्ध करता है कि शरीर का उठना या स्वर्ग जाना बिल्कुल असंभव है। फिर भी कुछ लोग इस पुराने विश्वास से जुड़े रहते हैं और सोचते हैं कि उनके मित्र और रिश्तेदार अंततः कब्रों से उठकर अपने भौतिक शरीर के साथ स्वर्ग जाएंगे। लेकिन शव के अंतिम संस्कार का सबसे अच्छा तरीका दाह संस्कार है, क्योंकि यह स्वच्छतापूर्ण है। यह स्वास्थ्य और जीवित प्राणियों की सुरक्षा दोनों दृष्टियों से सर्वोत्तम तरीका है। हमारे आसपास इतने सारे शव सड़ने की प्रक्रिया से क्यों गुजरें? बेहतर है कि उनसे छुटकारा पा लिया जाए और उन्हें उनके मूल स्वरूप में जाने दिया जाए।
भारत में यह दाह संस्कार बहुत प्राचीन काल से प्रचलित है। वेदों में भी दाह संस्कार को सर्वोत्तम विधि माना गया है। 2 अन्य देशों में दफनाने या ममीकरण को सर्वोत्तम विधि माना जाता था। जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, उनका विचार शरीर को लंबे समय तक अक्षुण्ण रखने का था, क्योंकि आत्मा अंततः शरीर में वापस आ जाती है। मिस्रवासियों की भी यही मान्यता थी। उनका मानना था कि यदि भौतिक शरीर को अक्षुण्ण रखा जाए और उसे विकृत न किया जाए, तो आत्मा अंततः उस शरीर में वापस आ जाएगी, जबकि यदि भौतिक शरीर का कोई भी भाग विकृत हो जाए, तो आत्मा का वह भाग भी विकृत हो जाएगा। वे एक ऐसे 'द्वितीय' में विश्वास करते थे, जो भौतिक शरीर के समान ही आकार और रूप का होता था। भारत में, हिंदू धर्म में द्वैत के अस्तित्व में विश्वास पाया जाता है, लेकिन यह स्थूल भौतिक शरीर पर निर्भर नहीं था। उनका दर्शन प्राचीन काल के मिस्रवासियों और अन्य राष्ट्रों से बिल्कुल भिन्न था। उनका मानना था कि यह द्वैत शरीर धारण कर सकता है और स्थूल भौतिक शरीर के दाह संस्कार द्वारा

नष्ट हो जाने के बाद भी जीवित रह सकता है, जिसे वे आज भी मृत शरीर के अंतिम संस्कार का सबसे स्वच्छ तरीका मानते हैं।
वैज्ञानिक विचारकों का एक और वर्ग है जो रूढ़िवादी वैज्ञानिकों से थोड़ा अधिक उन्नत है। उनका मानना है कि रोग और मृत्यु के मामलों में मन एक कारक है। वे मन, बुद्धि या चेतना के अस्तित्व से इनकार नहीं करते, न ही वे यह मानते हैं कि मन, बुद्धि और चेतना जीव के परमाणुओं और अणुओं की रासायनिक क्रियाओं का परिणाम हैं।
1. शव संरक्षण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानव अवशेषों को सड़न से बचाने के लिए संरक्षित किया जाता है।
प्राचीन काल में, मिस्रवासियों ने शवों को संरक्षित करने और ममीकरण की तकनीक को सबसे अधिक विकसित किया।
(स्रोत: विकिपीडिया)
2. ऋग्वेद के दसवें मंडल में अंत्येष्टि (अनग्निदग्ध) और 25 दोनों रीति- रिवाजों का उल्लेख है।
वैदिक लोगों द्वारा प्रचलित दाह संस्कार (अग्निदग्ध) का वर्णन। इसके 18 वें सूक्त में, 10 वें से 14 वें खंड तक।
मंत्रों का प्रयोग पूर्ण अंत्येष्टि की रस्मों में पाया जाता है। – स्वामी प्रज्ञानानंद, रामकृष्ण वेदांत
गणित, कलकत्ता।
इसके विपरीत, उनका मानना है कि चेतना और मन का स्रोत अविनाशी है। जीवन भी अविनाशी है। उनका मानना है कि प्राण (जीवन शक्ति) रासायनिक क्रियाओं का परिणाम नहीं है। यह बिजली या किसी अन्य ज्ञात बल के समान नहीं है, बल्कि यह एक अलग और विशिष्ट शक्ति है। वे ऐसे उदाहरण देते हैं जहाँ मन अत्यधिक भावनाओं के माध्यम से मृत्यु का कारण बन सकता है। मन की कुछ क्रियाएँ जिन्हें हम वासना कहते हैं, रोग और मृत्यु का कारण बन सकती हैं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक डॉ. जॉन हंटर असाधारण प्रतिभा के धनी थे। वे एक वैज्ञानिक थे, लेकिन मन की शक्ति में विश्वास रखते थे, फिर भी अपने आवेश पर उनका नियंत्रण न के बराबर था। वे क्रोध पर काबू नहीं रख पाते थे। एक बार मामूली बात पर उन्हें अत्यधिक क्रोध आया और उसी क्रोध के कारण उनकी तुरंत मृत्यु हो गई। ऐतिहासिक प्रमाणों से पता चलता है कि क्रोध व्यक्ति की तुरंत मृत्यु कर देता है। फ्रांसीसी चिकित्सक टोर्टेल ने दो महिलाओं को

अत्यधिक क्रोध के कारण मरते देखा था। अत्यधिक क्रोध हृदय गति को रोक देता है और पूरे शरीर को दूषित कर देता है। जिस प्रकार अत्यधिक क्रोध से मृत्यु हो सकती है, उसी प्रकार क्रोध का हल्का-फुल्का प्रदर्शन भी गंभीर बीमारियों का कारण बन सकता है। वास्तव में, जब कोई माँ क्रोध की अवस्था में अपने बच्चे को दूध पिलाती है, तो वह बच्चे को विष पिलाती है, और वह विष बच्चे के शरीर में तरह-तरह की परेशानियाँ पैदा कर देता है। यह आज एक वैज्ञानिक तथ्य है।
जिस प्रकार क्रोध खतरनाक और विनाशकारी शक्ति है जो शरीर में उथल-पुथल मचा देती है, उसी प्रकार भय भी है। अब, 'मौत से भयभीत' यह आम कहावत कुछ हद तक सच है। अत्यधिक भय मृत्यु ला सकता है, हृदय गति रोक सकता है, फेफड़े और साथ ही अन्य अंगों को भी निष्क्रिय कर सकता है। फिर आते हैं जुनून, घृणा और शोक। शोक शरीर में उथल-पुथल मचा देता है। ये सभी प्रमाणित तथ्य हैं। जब अत्यधिक घृणा और शोक के कारण रोग और मृत्यु के मामले सामने आए हैं, तो हम मन की शक्ति को कैसे नकार सकते हैं? यदि मन और मानसिक अवस्थाएँ शरीर पर इस प्रकार प्रभाव डाल सकती हैं और असमय मृत्यु ला सकती हैं, तो हम मन को हमारे पास मौजूद सबसे शक्तिशाली वस्तु के रूप में कैसे नकार सकते हैं? इसलिए, जो वैज्ञानिक उन्नत विचारक हैं और रूढ़िवादी भौतिकवादियों की तरह संकीर्ण नहीं हैं, वे मन को इस भौतिक शरीर के माध्यम से कार्य करने वाली सबसे अद्भुत शक्ति मानते हैं।
निम्न श्रेणी के जानवरों में भी मृत्यु का नाटक करने के मामले पाए जाते हैं। कुछ कीड़े-मकोड़े भी मृत्यु का नाटक करते हैं। लोमड़ी, जब किसी दुश्मन द्वारा पीछा किया जा रहा हो और उसे बचने का रास्ता न सूझ रहा हो, तो वह ज़मीन पर लेट जाती है, मृत्यु का नाटक करती है और कुछ समय तक उसी अवस्था में रहती है। कुछ अन्य जानवर तो अकड़ भी जाते हैं और उनके शरीर में मृत्यु की अकड़न स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। यह मन द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है। मृत्यु का यह नाटक विभिन्न कारणों से हो सकता है, जैसे नशा, पक्षाघात, हृदय रोग आदि। इससे पता चलता है कि मन इन परिस्थितियों में ये चीजें उत्पन्न कर सकता है।
26 मृत्यु के संकेत के समान है, और इसलिए उन्नत विचारक और वैज्ञानिक मानते हैं कि मृत्यु मन की शक्ति से उत्पन्न हो सकती है। उनका मानना है कि यह सामान्य अवस्था जिसे हम मृत्यु कहते हैं, उस आत्म-जागरूक सजीव शक्ति के

कारण होती है जो अंगों के माध्यम से कार्य करती है, और जब वह आत्म-जागरूक सजीव शक्ति अलग हो जाती है, तो मृत्यु उत्पन्न होती है। वास्तव में, आत्म-जागरूक सजीव आत्मा में प्राण ऊर्जा होती है। मन प्राण ऊर्जा से अविभाज्य है। लेकिन मन तब तक कार्य नहीं कर सकता जब तक उसके पास कोई साधन न हो। इसलिए वह भौतिक शरीर रूपी साधन का निर्माण करता है। यह आसपास के वातावरण से परमाणुओं, अणुओं या पदार्थ के कणों जैसी चीजों को ग्रहण करता है और उन्हें प्राण की ऊर्जा से भर देता है। जब प्राण की ऊर्जा कमजोर हो जाती है और जीवन की परिस्थितियों के अनुरूप नहीं होती, तो सजीव आत्मा या आत्मचेतन मन उन कोशिकाओं और ऊतकों की ऊर्जा को उस स्तर तक बढ़ाने का हर संभव प्रयास करता है। यदि वह ऐसा करने में विफल रहता है, तो संपूर्ण शरीर नष्ट हो जाता है। तब पूरी प्रणाली निष्क्रिय हो जाती है।
इस प्रकार हम देखते हैं कि शरीर में दो प्रमुख कारक हैं: एक मन और दूसरा प्राण का कंपन, या शरीर की कोशिकाओं और ऊतकों की कंपन अवस्था। लेकिन कोशिकाओं और ऊतकों की कंपन अवस्था मन द्वारा नियंत्रित होती है। वास्तव में, मन ही सृष्टिकर्ता, नियंत्रक और आयोजक है। यह सभी जैविक कार्यों का निर्देशक है।
शरीर के अंग अपनी-अपनी गति से कंपन करते रह सकते हैं, लेकिन यह जीवन का मानक नहीं होगा। समन्वय होना आवश्यक है। हृदय की क्रिया फेफड़ों की क्रिया के साथ एक निश्चित तरीके से मेल खानी चाहिए, और संपूर्ण जटिल तंत्र इस प्रकार समायोजित होना चाहिए कि एक दूसरे की सहायता करे। अन्यथा, जीवन का कोई अस्तित्व नहीं होगा। यदि कहीं भी कोई पेंच ढीला है, तो उसे कसना ही होगा, अन्यथा मशीन काम नहीं करेगी। अब, इस पेंच को कौन कसता है? यह व्यक्ति की आत्म-जागरूक जीवन शक्ति है, जिसे सामान्य शब्दों में सजीव आत्मा कहा जाता है। सजीव आत्मा का अर्थ है "मैं" की भावना से युक्त आत्म-जागरूक व्यक्तिगत जीवन शक्ति, और यही "मैं" की भावना उन्हें एक साथ बांधे रखती है। यही "मैं" की भावना सभी को एक साथ रखती है, उन्हें एकीकृत करती है, और अलग-अलग भागों को कंपन कराकर एक पूर्ण सामंजस्य उत्पन्न करती है। यही सामंजस्य जीवन है। जैसे किसी ऑर्केस्ट्रा में सौ वाद्ययंत्र हो सकते हैं, और यदि प्रत्येक वाद्ययंत्र अपने संचालक के निर्देश का पालन किए बिना अपनी-अपनी गति से बजता रहे, तो कोई सामंजस्य उत्पन्न नहीं होगा; इसी प्रकार, यदि शरीर के अंग बिना किसी सामंजस्य, बिना किसी समन्वय, बिना किसी

मार्गदर्शक के, अपने-अपने ढंग से धड़कते रहें, तो यह व्यर्थ है। अंगों का मार्गदर्शक कौन है? निर्देशक कौन है? रूढ़िवादी विज्ञान उस निर्देशक को नहीं मानता, परन्तु उन्नत विज्ञान हमें बताता है कि एक निर्देशक है और इस निर्देशक का पूरे शरीर पर पूर्ण नियंत्रण है। वह सजीव आत्मा है। मृत्यु के समय, वह अंगों से अलग होकर शरीर छोड़ देती है।

27
समाधि, कैटालेप्सी और परमानंद की अवस्था में, सजीव आत्मा शरीर छोड़ देती है, लेकिन संबंध पूरी तरह से टूटता नहीं है। किसी न किसी रूप में संबंध बना रहता है। यह नवजात शिशु की गर्भनाल के समान है जो उसके अस्तित्व को भौतिक शरीर से जोड़े रखती है। इसलिए, भौतिक शरीर को पुनर्जीवित किया जा सकता है। लेकिन जब संबंध पूरी तरह से टूट जाता है, तो शरीर को पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता। तब इसे मृत्यु कहते हैं। यही अंतर है। इस अंतर को बहुत कम लोग समझते हैं।
लेकिन मृत्यु के समय शरीर से निकलने वाली इस सजीव आत्मा की तस्वीर ली जा सकती है। मृत्यु से ठीक पहले और मृत्यु के तुरंत बाद शरीर का वजन करने के लिए अत्यंत सूक्ष्म और संवेदनशील उपकरणों का उपयोग किया गया है, और निकलने वाली गैसों को ध्यान में रखते हुए, यह पाया गया है कि मृत्यु के समय शरीर से निकलने वाले पदार्थ का निश्चित वजन लगभग आधा औंस या तीन-चौथाई औंस होता है।
मृत्यु के समय शरीर से निकलने वाला यह सूक्ष्म पदार्थ चमकीला होता है। इस चमकीली पदार्थ की तस्वीर खींची जा सकती है और इसे मानसिक दृष्टि से देखने वाला व्यक्ति शरीर से निकलते हुए देख सकता है। पूरा शरीर एक प्रकार की चमकीली धुंध से ढक जाता है। मुझे एक लड़की का मामला याद है, जिसके भाई की कुछ साल पहले लॉस एंजिल्स में मृत्यु हो गई थी। मैंने यह उसकी माँ से सुना था। अपने भाई के मृत्युशय्या पर, उस छोटी लड़की ने कहा: “माँ, माँ, देखो, उसके शरीर के चारों ओर एक धुंध है; यह क्या है?” लेकिन माँ इसे देख नहीं सकीं। उन्होंने कहा कि यह शरीर से निकला है। यूरोप में वैज्ञानिकों ने इस विषय को उठाया है और इस उत्सर्जन पर प्रयोग कर रहे हैं। वे इसे एक्टोप्लाज्म कहते हैं। यह एक वाष्प जैसा पदार्थ है और इसका कोई विशेष आकार नहीं है। यह एक बादल की तरह है और यह कोई भी आकार या रूप ले सकता है और

इसकी तस्वीर खींची जा सकती है। यह कौन सा पदार्थ है, यह वे नहीं जानते, लेकिन वे इसके अस्तित्व से इनकार नहीं कर सकते।
हमारे शरीर से वह पदार्थ हर समय निकलता रहता है। यह विशेष रूप से तब देखा जा सकता है जब कोई माध्यम समाधि जैसी अवस्था में हो। माध्यमों द्वारा वह पदार्थ बहुत तीव्रता से निकलता है। मैंने इसे निजी सत्रों में भी देखा है, जब कोई पेशेवर माध्यम मौजूद नहीं था। मैंने इसे छुआ भी है। जब हम एक्टोप्लाज्म को महसूस करते हैं तो कोई विशेष अनुभूति नहीं होती। इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। लेकिन जब यह एक निश्चित आकार ले लेता है, तो यह लगभग ठोस और हमारे अपने शरीर जैसा हो जाता है। यह कोई भी रूप ले सकता है। मृत्यु के समय, शरीर के विभिन्न अंगों को नियंत्रित करने वाली ये सभी प्राण शक्तियाँ शरीर छोड़ने से पहले एक बिंदु पर केंद्रित हो जाती हैं, और हम देखते हैं कि मरणासन्न व्यक्ति की दृष्टि धुंधली हो जाती है, शरीर की संवेदनाएँ क्षीण हो जाती हैं और धीरे-धीरे पूरा शरीर रूपांतरित हो जाता है। और, इस रूपांतर में, ऐसे मामले भी होते हैं जहाँ व्यक्ति की मानसिक शक्ति प्रकट होती है।

28
कुछ मरणासन्न व्यक्तियों में दिव्य दृष्टि और श्रवण शक्ति विकसित हो जाती है। वे मृत्यु के समय, ठीक पहले या तुरंत बाद, दूर स्थित मित्रों को प्रेत के रूप में दिखाई दे सकते हैं और अपना संदेश दे सकते हैं। वैज्ञानिकों द्वारा ऐसे मामले दर्ज किए गए हैं।
फ्रांसीसी खगोलशास्त्री कैमिल्ले फ्लेमरियन ने इस विषय पर 'द अननोन' नामक पुस्तक लिखी थी। उन्होंने विभिन्न परिवारों में परीक्षण स्थितियों के तहत प्राप्त सभी प्रामाणिक रिपोर्टों को संकलित किया था, जिनमें मृत्यु के समय या मृत्यु के तुरंत बाद विभिन्न लोगों के अनुभवों का वर्णन किया गया था। ऐसी पंद्रह सौ रिपोर्टें एकत्र की गईं, और बाद में फ्लेमरियन ने उनमें से कुछ पूर्णतः प्रामाणिक रिपोर्टों का चयन करके उन्हें अपनी पुस्तक में प्रकाशित किया। ये रिपोर्टें दर्शाती हैं कि कुछ ऐसा है जो भौतिक शरीर का परिणाम नहीं है। यह एक्टोप्लाज्म एक ऐसा पदार्थ है जिसमें सूक्ष्म पदार्थ कंपन करते हुए समाहित होते हैं, और यह सूक्ष्म पदार्थ आत्मा, स्थूल भौतिक शरीर और हममें से प्रत्येक में विद्यमान सूक्ष्म या

ईथर शरीर का आवरण बनाते हैं। हम इसे वर्तमान में महसूस नहीं कर सकते, क्योंकि हमारी दृष्टि और इंद्रियां स्थूल, भौतिक और स्पर्शनीय वस्तुओं की खोज में लगी हुई हैं।
लेकिन जब तक इसे हमारी इंद्रियों के स्तर तक नहीं लाया जाता, तब तक यह मूर्त रूप नहीं ले पाता। हमारी इंद्रियों का स्तर एक निश्चित कंपन पर निर्भर करता है। हम प्रकाश को तभी देख सकते हैं जब प्रकाश का कंपन हमारी दृष्टि सीमा के भीतर हो। लाल से बैंगनी तक हमारी आंखें देख सकती हैं, लेकिन यदि कंपन लाल रंग से कम हो, तो हम उसे नहीं देख पाते। दृश्यमान होने के लिए, इसे एक निश्चित तरीके से कंपन करना चाहिए ताकि हमारे अंग इसे ग्रहण कर सकें, ठीक वैसे ही जैसे ध्वनि। इस प्रकार कुछ ध्वनियाँ ऐसी होती हैं जिन्हें हम बिल्कुल नहीं सुन पाते क्योंकि हमारी श्रवण शक्ति अपूर्ण है। इसी प्रकार, सूक्ष्म शरीर को तब तक नहीं देखा जा सकता जब तक कि इसे मूर्त रूप देने की प्रक्रिया द्वारा हमारी दृष्टि सीमा के भीतर नहीं लाया जाता। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो उच्च कंपन दर वाले सूक्ष्म पदार्थ को निम्न कंपन दर पर लाती है ताकि हम उसे ग्रहण कर सकें या उसकी एक झलक पा सकें। वेदांत दर्शन उन उन्नत वैज्ञानिकों के निष्कर्षों से पूर्णतः मेल खाता है जो मानते हैं कि मन और सजीव आत्मा रोग उत्पन्न करने, मृत्यु लाने और शरीर निर्माण में भिन्न-भिन्न कारक हैं। ये विचार हमें वेदांत दर्शन में मिलते हैं, जो विश्व का सबसे प्राचीन दर्शनशास्त्र है। सत्य कभी पुराना नहीं होता। जो सत्य पाँच हज़ार वर्ष पूर्व खोजा गया था, वह आज भी वही सत्य है, भले ही आधुनिक वैज्ञानिकों ने उसे पुनः खोज लिया हो। इसलिए हमें यह याद रखना चाहिए कि वेदांतिक सत्य अद्वितीय और एक है। केवल एक ही अवस्था है जो पूर्णतः सत्य हो सकती है। अन्य सभी सत्य की नकल हैं। वह परम सत्य भले ही युगों पहले खोजा गया हो, लेकिन समय के बीतने के कारण सत्य में कोई परिवर्तन नहीं होता। यह शाश्वत सत्य है।
अतः, हम पाते हैं कि यह सूक्ष्म शरीर जिसका मैंने अभी वर्णन किया है, वेदांत में सूक्ष्म शरीर (सूक्ष्म-शरीर) कहलाता है, जो आत्मा का अंतर्वस्त्र है, और स्थूल शरीर को आत्मा का आवरण कहा जाता है।
29 भौतिक शरीर तो बाहरी आवरण है। जब आत्मा कुछ कार्य कर लेती है, कुछ सुखों का आनंद ले लेती है और कुछ इच्छाओं की पूर्ति कर लेती है, तो उसे लगता है कि यह स्थूल भौतिक शरीर अब किसी काम का नहीं है और ठीक से काम नहीं कर रहा है।

समान है। पदार्थ के कण घूमते रहते हैं और अपने द्वारा निर्मित प्रकार के अनुसार आकार बनाए रखते हैं ताकि उनकी एक पहचान बनी रहे।

30
अब, पदार्थ के कणों के इस निरंतर गतिमान भंवर में, हमारे भीतर कुछ ऐसा है जो स्थिर और अपरिवर्तनीय है। वह है हमारी चेतना। यदि आप कभी एक्स-रे के माध्यम से अपना हाथ या शरीर का कोई भी हिस्सा देखें, तो आपको एक रहस्योद्घाटन की तरह पता चलेगा कि आपका शरीर धुंध जैसे सूक्ष्म कणों से बना है जो हड्डियों की रूपरेखा पर मंडरा रहे हैं। स्थूल भौतिक शरीर जो ठोस प्रतीत होता है, वास्तव में ठोस नहीं है। यह एक बादल की तरह है, और हम इसे केवल कुछ विशेष परिस्थितियों में ही ठोस मानते हैं।
मृत्यु के समय, आत्मा इस भौतिक जगत को छोड़कर चेतना के एक अन्य जगत में प्रवेश करती है, जिसे दूसरा आयाम कहा जा सकता है। हम वर्तमान में तीन आयामों में जी रहे हैं। एक और आयाम है जहाँ इंद्रिय-विषयों का अस्तित्व ही नहीं है। यह हमारे भौतिक शरीर की सीमाओं से परे है। यहाँ तक कि पृथ्वी और ग्रहों की गति भी वहाँ नहीं होती। हम ऐसी अवस्था की कल्पना तब तक नहीं कर सकते, जब तक हमें उस दूसरे आयाम की झलक न मिल जाए। इसे चौथा आयाम कहा जाता है। मनुष्य की आत्मा कहाँ जाती है? मृत्यु के बाद वह कहीं नहीं जाती, बल्कि चौथे आयाम में ही रहती है और तीन आयामों के भौतिक जगत से उसका संबंध टूट जाता है। तीसरा और चौथा आयाम एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े हुए हैं जैसे पहिए के अंदर पहिया। विज्ञान के अध्ययन से हम जानते हैं कि शरीर की कोशिकाएँ निरंतर गतिमान रहती हैं। लेकिन क्या हम उस गति को महसूस करते हैं? जब हम स्थिर बैठते हैं, तो हम शांति का आनंद लेते हैं। लेकिन हमारे शरीर के भीतर निरंतर गति चलती रहती है, जिसके प्रति हम सचेत नहीं होते। इसलिए दिवंगत आत्मा स्थूल भौतिक शरीर के परिवर्तनों और अवस्थाओं के प्रति सचेत नहीं होती।
हमारा शरीर आत्मा का साधन मात्र है, या यूँ कहें कि उसका वस्त्र है। वेदांत कहता है कि जब कोई व्यक्ति मरता है, तो वह वास्तव में नहीं मरता, बल्कि वह अपने पुराने भौतिक शरीर का वस्त्र उतारकर नया वस्त्र धारण कर लेता है। वेदांत कहता है कि मृत्यु का अर्थ परिवर्तन है, अर्थात् चेतना की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिवर्तन, और आत्मा मृत्यु के समय भौतिक शरीर

[illegible]

“[illegible]

1. [illegible]

[illegible]

2. [illegible]

अध्याय IV

मृत्यु के बाद आत्मा
मृत्यु के बाद मनुष्य की आत्मा का क्या होता है, यह प्रश्न उतना ही पुराना है जितना कि पृथ्वी पर मनुष्य का पहला आगमन। लगभग सभी देशों और जनजातियों ने, चाहे वे किसी भी क्षेत्र या युग के हों, आपस में इस प्रश्न पर विचार किया है और अपनी-अपनी क्षमता, सामर्थ्य, समझ और ज्ञान के अनुसार इस समस्या का हल निकालने का प्रयास किया है।
कुछ लोगों ने इसे विचित्र सिद्धांतों और मान्यताओं के माध्यम से समझाने का प्रयास किया; कुछ ने पौराणिक कथाओं या कविता के माध्यम से, और अन्य ने तर्कसंगत वैज्ञानिक प्रमाणों के माध्यम से। विभिन्न विचारकों द्वारा इस प्राचीन समस्या को सुलझाने के इन विभिन्न प्रयासों का परिणाम अलग-अलग निष्कर्षों के रूप में सामने आया है, जो विभिन्न देशों के विभिन्न लोगों को कमोबेश संतुष्ट करते हैं। विश्व के सभी धर्म इसी महान पहेली के समाधान पर आधारित हैं। सभी दर्शनशास्त्र, चाहे प्राचीन हों या आधुनिक, और यहाँ तक कि आज का विज्ञान भी, अस्तित्व के इस रहस्य को सुलझाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है।
कई लोग असफल रहे हैं, और कई गहन जांच-पड़ताल और शोध के बाद भी संतोषजनक उत्तर न मिलने पर निराश होकर अंत में हताशा में बोले हैं: यह हमारे ज्ञान से परे है और मानवीय समझ से बाहर है। कुछ अज्ञेयवादी बन गए हैं और कुछ ने आत्मा जैसी किसी भी चीज के अस्तित्व को नकार दिया है। कुछ का कहना है कि मनुष्य की आत्मा तब तक विद्यमान रहती है जब तक शरीर और आत्मा को उत्पन्न करने वाले पदार्थ का संयोजन विद्यमान रहता है। शरीर के नष्ट होने पर आत्मा भी नष्ट हो जाती है। कुछ इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि व्यक्तित्व जैसी कोई चीज नहीं है। यह दीपक की लौ के समान है। जब दीपक नहीं होता, तो प्रकाश नहीं होता; उसी प्रकार जब शरीर नहीं होता, तो आत्मा भी नहीं रहती। शरीर की मृत्यु के साथ ही सब कुछ समाप्त हो जाता है। भौतिक रूप या स्थूल शरीर के विघटन के बाद व्यक्तित्व का कोई निशान नहीं बचता।
लेकिन इन सभी अलग-अलग निष्कर्षों को सुनने के बाद, क्या हमारा मन बार-बार वही सवाल पूछना बंद कर देता है? नहीं, क्योंकि हर व्यक्ति को एक ऐसे

स्पष्टीकरण की आवश्यकता होती है जो अमर या नश्वर जीवन की जन्मजात लालसा को संतुष्ट कर सके, जिसके साथ हम सभी जन्म लेते हैं। चाहे हम लाखों बार यह सुनें कि आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं है, फिर भी हम पूरी तरह से आश्वस्त नहीं हो सकते कि मृत्यु के बाद हमारा अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। हम ऐसी स्थिति की कल्पना नहीं कर सकते, और हम यह विश्वास नहीं कर सकते कि मृत्यु के बाद हमारी व्यक्तिगत पहचान खो जाएगी। ऐसे समाधान हमारी तर्कशक्ति को भाते नहीं हैं, हमारे मन को संतुष्ट नहीं करते, और न ही हमें किसी प्रकार का दिलासा देते हैं।

32
कठ उपनिषद में हमें मृत्यु के स्वामी यम का कथन मिलता है:
“अज्ञान के अंधकार में डूबे मूर्ख, व्यर्थ ज्ञान के घमंड में चूर और खुद को सच्चा बुद्धिमान समझने वाले, अंधे की तरह इधर-उधर भटकते रहते हैं।” 1 “परलोक का विचार कभी भी अज्ञानी बच्चे के मन में नहीं आता, जो धन और सांसारिक समृद्धि की लालसा में भ्रमित हो। ऐसे लोग जो कहते हैं: ‘यही संसार है, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं,’ बार-बार मेरे वश में आते हैं।” 2
ये शब्द शायद ईसा मसीह के जन्म से एक हजार वर्ष से भी अधिक समय पहले कहे गए थे। भारत के प्राचीन सत्य के ऋषियों के लेखन की प्रमुख विशेषताओं में से एक मानव आत्मा के पूर्व-अस्तित्व, निरंतरता और अमरता का ज्ञान था। यदि हम सबसे प्राचीन ग्रंथों को देखें, मेरा तात्पर्य ऋग्वेद से है; तो वहाँ हमें ऐसी प्रार्थनाएँ मिलती हैं जो दर्शाती हैं कि वे मृत्यु के बाद आत्मा के अस्तित्व और अमर जीवन में विश्वास करते थे।
शुक्ल यजुर्वेद के ईशा उपनिषद में भी हमें यह मिलता है,
“हे भगवान! मुझे वहाँ ले चलो जहाँ ब्रह्मांड के शाश्वत प्रकाश का स्रोत है, जो अविनाशी है, जहाँ अमरता का राज है और मुझे अमर बना दो।” 3
एक अंत्येष्टि भजन में हम पढ़ते हैं:
“आगे बढ़ो, इन प्राचीन रास्तों पर आगे बढ़ो जिन पर हमारे पूर्वज चले थे, सभी पापों को त्यागकर, घर लौट आओ और अपने शरीर में प्रकाशमान होकर, उनसे मिल जाओ।” 4
वेदों में ऐसे सैकड़ों अंश हैं, जो स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि प्राचीन आर्य मृत्यु के बाद आत्मा के अस्तित्व में विश्वास करते थे। वे पितृलोक

में विश्वास करते थे, जहाँ मृत्यु के बाद आत्मा जाती है, और उस पितृलोक के राजा यम हैं, जो मनुष्यों में अमर होने वाले पहले व्यक्ति थे।
प्राचीन हिंदू स्वर्ग में विश्वास करते थे जिसे वे ब्रह्मलोक या ब्रह्मा का राज्य कहते थे, जो सृष्टिकर्ता और ब्रह्मांड के पिता हैं। धीरे-धीरे जब हिंदुओं के मन में सही और गलत के नैतिक विचार प्रबल हो गए और जब उन्होंने कर्म-प्रतिक्रिया के नियम को समझ लिया, तो उनका मानना था कि जो लोग इस जीवन में अच्छे और पुण्य कर्म करते हैं और फल की आशा रखते हैं, वे पितृलोक जाते हैं और वहां तब तक रहते हैं जब तक उनके अच्छे कर्मों का फल पूरा नहीं हो जाता। जब किसी दिवंगत व्यक्ति को उन सभी अच्छे और पुण्य कर्मों का फल मिल जाता है जिनके कारण वह उस लोक में पहुंचा था, तो उसे पृथ्वी पर आना पड़ता है और अपने पिछले जन्म की इच्छाओं और कर्मों के अनुसार पुनर्जन्म लेना पड़ता है।
1. कठ उपनिषद, 1.2.5 (अध्याय 1, खंड 2, श्लोक संख्या 5)।
2. कठ उपनिषद, 1.2.6 (अध्याय 1, खंड 2, श्लोक संख्या 6)। 33
3. ईशा उपनिषद, 1.18 (अध्याय 1, श्लोक संख्या 18)
4. ऋग्वेद, 10 वां मंडल (अध्याय), सूक्त (खंड) 14, श्लोक संख्या 7।
माना जाता था कि पूर्वजों का लोक चंद्रमा में स्थित है। प्राचीन काल से ही हिंदुओं की यह मान्यता रही है कि चंद्रमा मृतकों का लोक है, सभी दिवंगत आत्माओं का निवास स्थान है, और जीवन के सभी बीज चंद्रमा से ही पृथ्वी पर आते हैं। चंद्रमा से ही पृथ्वी पर वर्षा होती है। जिस मार्ग से दिवंगत आत्माएं चंद्रलोक जाती हैं और वहां अपने कर्मों के फलस्वरूप सभी सुख-सुविधाओं का आनंद लेती हैं, फिर पृथ्वी पर लौटकर पुनर्जन्म लेती हैं, उसे पितृयान या पूर्वजों का मार्ग कहा जाता है।1 सभी मनुष्यों को इसी मार्ग से होकर पृथ्वी पर लौटना पड़ता है।
लेकिन जो लोग अच्छे कर्म बिना किसी प्रतिफल की अपेक्षा या अभिलाषा के करते हैं और पवित्रता और धर्मपरायणता का जीवन व्यतीत करते हैं, वे ब्रह्मलोक, ब्रह्मलोक में जाएंगे। वहां वे विकास के एक चक्र के अंत तक समस्त महिमा में निवास करेंगे। इस बीच, यदि उनमें से कोई भी परम सत्य, एकात्मता के सर्वोच्च ज्ञान को प्राप्त कर ले, तो वह मुक्त हो जाएगा और अनंत काल तक परम सत्ता के साथ एकरूप रहेगा।

[illegible]

1. [illegible] (Kaushitaki Brahmana Upanishad), 1.9 ([illegible] 1, [illegible] [illegible] 9)। 34
2. Brihadaranyaka Upanishad 6.2.16 (Chapter 6, Section 2, Verse 16) and also Kaushitaki Upanishad
1.2 ([illegible] 1, [illegible] [illegible] 2)
[illegible]

देखभाल करती हैं और परदेस में मार्गदर्शकों की तरह उनकी सहायता करती हैं। इनमें से प्रत्येक आत्मा उन्हें अन्य आत्माओं से मिलवाती है, और इस प्रकार वे बहुत शीघ्र अपने उचित गंतव्य तक पहुँच जाती हैं। वहाँ वे अपने दिवंगत रिश्तेदारों और मित्रों से मिलती हैं। वहाँ वे देवताओं की प्रिय बन जाती हैं और अपने कर्मों के फलस्वरूप वहाँ निवास करती हैं। फिर जब वे लौटती हैं, “वे पहले सूक्ष्म अदृश्य शरीर धारण करती हैं (जीवन के सूक्ष्म रोगाणुओं के समान), फिर वे आकाश से होकर वायु में, वायु से बादलों में जाती हैं, और फिर वर्षा की बूंदों के साथ पृथ्वी पर गिरती हैं, फिर वे कुछ प्रकार के भोजन के माध्यम से मानव शरीरों में प्रवेश करती हैं; फिर उनका पुनर्जन्म होता है।” इस प्रक्रिया में, आपको यह याद रखना होगा कि आधुनिक विकासवादियों द्वारा प्राकृतिक चयन कहे जाने वाले नियम का पालन होता है, और इसी नियम के अनुसार वे भोजन के माध्यम से ऐसे शरीर धारण करते हैं जहाँ उन्हें अपनी इच्छाओं को पूरा करने और अपने कर्मों का फल भोगने के लिए उपयुक्त वातावरण और परिस्थितियाँ मिलती हैं। इस वापसी की प्रक्रिया के दौरान, उनकी संपूर्ण मानसिक भावनाएँ और बुद्धि संकुचित हो जाती हैं, और वे कुछ भी महसूस नहीं कर पाते, न ही कुछ याद रख पाते हैं। तब वे अपनी अंतर्निहित प्रवृत्तियों के अनुसार अच्छे या बुरे बन जाते हैं, जिन्हें वे प्रकट करना चाहते हैं। लेकिन जो लोग शुद्ध हृदय और सच्ची भक्ति से ईश्वर की उपासना करते हैं, और जो धर्मात्मा हैं और बिना किसी प्रतिफल की आशा के दूसरों के लिए काम करते हैं, निस्वार्थ हैं और एक विशेष नाम और रूप वाले अलौकिक ईश्वर में विश्वास रखते हैं, और मृत्यु के बाद द्वैतवादी या एकेश्वरवादी विचार रखते हैं, वे देवयान मार्ग से स्वर्ग जाएंगे, जो ईश्वर तक ले जाता है। उपनिषद में कहा गया है:
“वे पहले प्रकाश की ओर जाते हैं, फिर प्रकाश से दिन की ओर, बढ़ते हुए चंद्रमा के अर्धचंद्र की ओर, फिर उन छह महीनों की ओर जब सूर्य उत्तर दिशा में चला जाता है, फिर प्रकाशमान आत्माओं या देवताओं के स्थान पर, फिर सूर्य की ओर, फिर बिजली के क्षेत्र में; वहाँ एक उच्च कोटि की आत्मा आती है और उन्हें ब्रह्मा के लोक में ले जाती है, जहाँ वे चक्र के अंत तक निवास करते हैं।” 2
फिर वे अगले चक्र में लौट सकते हैं, यदि वे एकता के सर्वोच्च सत्य को नहीं समझते हैं। इस स्थिति में, आपको यह समझना होगा कि ये सभी प्रकाश, दिन आदि

उन आत्माओं के मार्गदर्शन में आने वाले चरण हैं जो उनके शीर्ष पर हैं या उनके शासक हैं।
भारत के प्राचीन सरल-मस्तिष्क वाले विचारकों के इन पौराणिक वर्णनों और काव्यात्मक कल्पनाओं को कई लोग बचकाना मानते हैं, और कुछ लोग इन्हें निरर्थक समझते हैं। चाहे जो भी हो, इन सभी वर्णनों से हमें एक बात सीखने को मिलती है कि उन प्राचीन विचारकों ने यह समझा था कि मृत्यु के बाद आत्मा का विनाश नहीं हो सकता, उसका कोई उद्देश्य होता है जिसे पूरा करना होता है, और उसे या तो इस पृथ्वी पर या किसी अन्य लोक में प्रकट होना ही होता है।
1. छान्दोग्य उपनिषद, अध्याय 5, खंड 10, श्लोक 4, 5 और 6; और बृहदारण्यक उपनिषद भी।
उपनिषद 6.2.16 (अध्याय 6, खंड 2, श्लोक 16) 35
2. Brihadaranyaka Upanishad 6.2.15 (Chapter 6, Section 2, Verse 15); Chandogya Upanishad,

अध्याय 5, धारा 10, श्लोक 2; भगवद गीता अध्याय 8, श्लोक 24; और प्रश्न उपनिषद, 1.10
(अध्याय 1, श्लोक संख्या 10)। अन्य ग्रह अपनी इच्छाओं और कर्मों के अनुसार, और ये सभी स्वर्ग क्षणभंगुर हैं, अपरिवर्तनीय वास्तविकता नहीं।
यह वाकई एक बड़ी उपलब्धि है। ऐसा विचार बहुत कम धर्मों में मिलता है। पारसी धर्म, ईसाई धर्म या मोहम्मद धर्म जैसे सभी धर्मों का अंत स्वर्ग में होता है, और वे स्वर्ग को शाश्वत और अविनाशी स्थान बताते हैं। लेकिन हिंदू धर्म ऐसा नहीं सिखाता। अन्य धर्मों में, सर्वोच्च आदर्श ऐसे स्वर्ग में जाना है जहाँ हमें वे अनेक चीजें प्राप्त हों जो यहाँ नहीं मिलतीं, और जहाँ सभी सुख बिना किसी कष्ट या कष्ट के निरंतर प्राप्त होते रहें। लेकिन हिंदुओं के लिए यह सर्वोच्च अवस्था नहीं है। ये सभी स्वर्ग और सुख के स्थान क्षणभंगुर और अस्थायी हैं (भले ही वे लाखों वर्षों तक रहें, फिर भी अनंत काल की तुलना में लाखों वर्ष कुछ भी नहीं हैं)।
इसी कारण श्री कृष्ण, जो सार्वभौम आत्मा के अवतार हैं, अर्जुन से कहते हैं: "आत्माओं, देवताओं और अन्य सभी विभिन्न लोकों का, सर्वोच्च स्वर्ग से प्रारंभ होकर।"
ब्रह्मा के कुछ ऐसे स्थान हैं जहाँ से लौटना पड़ता है, परन्तु जो मुझे प्राप्त करता है,
परम आत्मा, मेरे साथ सदा रहेगी, वह कभी किसी कानून से बंधी नहीं रहेगी। प्रकृति।" 1
इसलिए वेदांत में इन स्वर्गों का कोई विशेष महत्व नहीं है, न ही इनके अस्तित्व का खंडन किया गया है। बेशक, स्वर्ग में आत्मा ईश्वर के सिंहासन के समक्ष उनसे आमने-सामने होगी और ईश्वर उनसे पूछेंगे: “तुम कौन हो?” आत्मा उत्तर देगी: “जो तुम हो, वही मैं हूँ।” लेकिन वेदांत की उच्च अवधारणाओं के साथ, ये सभी स्वर्ग और स्वर्ग की इच्छाएँ धीरे-धीरे महत्वहीन हो जाती हैं। सिंहासन पर विराजमान और पुण्य आत्माओं का स्वागत करने वाले व्यक्तिगत ईश्वर का यह विचार हमें हिंदू धर्म के प्राचीन ग्रंथों, मेरा तात्पर्य वेदों में मिलता है।
ज़ेंद अवेस्ता में भी हमें एक समान विचार मिलता है, जिसमें अहूरा मज़्दा नामक एक व्यक्तिगत ईश्वर सिंहासन पर विराजमान होकर दिवंगत आत्माओं के

आचरण का न्याय करते हैं और उन्हें तदनुसार पुरस्कृत या दंडित करते हैं। हिंदू धर्म में आरंभिक रूप से नरक का कोई विश्वास नहीं था, जबकि पारसियों में था। अवेस्ता में हम पढ़ते हैं कि मनुष्य की मृत्यु के बाद क्या होता है। अवेस्ता में स्वर्ग और नरक के जो विचार मिलते हैं, उन्होंने यहूदियों और बाद में मुसलमानों के स्वर्ग संबंधी विचारों को यहूदियों के माध्यम से काफी हद तक प्रभावित किया। हम जानते हैं कि पुराने नियम में मृत्यु के बाद आत्मा के भाग्य के बारे में कुछ नहीं कहा गया है। हालांकि, नए नियम में हमें ऐसे विचार मिलते हैं जो फारसी वर्णनों से पूरी तरह मेल खाते हैं। फारसी लोग न्याय के अंतिम दिन और एक सर्वव्यापी पुनरुत्थान में विश्वास करते हैं, जब बुराई पर अच्छाई की विजय सुनिश्चित होगी।
प्राचीन हिब्रू लोग मृत्यु के बाद आत्मा के क्या होता है, इस बारे में ज्यादा नहीं सोचते थे। उनका मानना था कि जिस प्रकार ईश्वर मनुष्य में जीवन फूंकता है, उसी प्रकार वह सांस, जिसे वे कहते हैं...
1. भगवद् गीता अध्याय 8, श्लोक 16:36 नेफेश, या नेशमा, या रूआच, ईश्वर से उत्पन्न हुए और शरीर की मृत्यु के बाद उन्हीं में लौट गए। लेकिन बाद में जब यहूदियों का फारसियों से संपर्क हुआ, तो उन्होंने उनके विचारों को अपना लिया। जैसा कि पहले बताया गया है, मिस्रवासियों का मानना था कि मनुष्य की आत्मा एक 'दोहरा' रूप है, परछाई की तरह, जो शरीर के साथ-साथ रहती है, लेकिन यदि शरीर विकृत या नष्ट हो जाए तो आत्मा भी विकृत या नष्ट हो जाएगी। चाल्दियों का यह भी मानना था कि शरीर नष्ट होने पर एक 'द्वितीय' रूप नष्ट हो जाएगा। वे शव के पुनरुत्थान की आशा रखते थे। यह मान्यता आज के ईसाइयों में भी पाई जाती है। यूनानी दार्शनिक, पाइथागोरस, प्लेटो और उनके शिष्य आत्मा की अमरता और पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास करते थे। आत्मा के स्वरूप के बारे में प्लेटो के विचार और मृत्यु के बाद क्या होता है, इसका वर्णन उपनिषदों में वर्णित विचारों के बिल्कुल समान है। लेकिन प्लेटो का मानना था कि दुष्टों के लिए दंड का स्थान होता है। उनके अनुसार, दुष्ट और पापी कर्म करने वालों को कष्ट और दंड भोगना पड़ता है, और शुद्ध होने पर उन्हें उनके अच्छे कर्मों का फल मिलता है। प्लेटो का मानना था कि मनुष्य की आत्मा किसी मनुष्य के शरीर में या किसी पशु के शरीर में जा सकती है और फिर वापस मनुष्य के शरीर में लौट सकती है।

इस प्रकार भविष्य के अस्तित्व के बारे में अनेक अटकलें हैं। आइए अब इस विषय पर वेदांत का मत स्पष्ट रूप से समझते हैं। सर्वप्रथम, वेदांत कहता है कि मृत्यु जैसी कोई वस्तु नहीं है, जिसका अर्थ विनाश है। यह मृत्यु को रूप परिवर्तन के रूप में स्वीकार करता है। इस प्रकार की मृत्यु जीवन का एक अभिन्न अंग है। मृत्यु के बिना जीवन असंभव है, जिसका अर्थ रूप परिवर्तन है। पहले भी कहा गया है कि हम हर क्षण मर रहे हैं, और हर सात वर्ष के बाद कहा जाता है कि हमारा शरीर अपने सभी घटकों को पूरी तरह से नवीनीकृत कर लेता है। फिर भी रूप बना रहता है। यद्यपि शरीर का प्रत्येक कण बदल जाता है, फिर भी हमारा अस्तित्व बना रहता है। हमारी निरंतरता भंग नहीं होती और हमें चौदह या इक्कीस वर्ष पहले घटी हुई बातें और घटनाएँ याद रहती हैं। चेतन प्राणी की इस निरंतरता को किसी भी भौतिक या रासायनिक नियम से समझाया नहीं जा सकता। फिर वेदांत भौतिकवादी सिद्धांत को करारा प्रहार करते हुए कहता है कि विचार, भावना या बुद्धि किसी भी यांत्रिक या आणविक गति से उत्पन्न नहीं हो सकती। गति से ही गति उत्पन्न होती है, और कुछ नहीं। इसलिए शरीर के परमाणुओं की गति कभी भी चेतन अवस्था की अनुभूति उत्पन्न नहीं करेगी, बल्कि यह किसी अन्य उच्च शक्ति के कारण होता है जिसे हम विचार-शक्ति या आत्म-शक्ति कहते हैं।
वह शक्ति न तो तुम्हारी है, न मेरी, बल्कि वह प्रकृति में विद्यमान है। संपूर्ण ब्रह्मांड एक सजीव पदार्थ के सागर के समान है जिसमें आत्मा-शक्ति और बुद्धि एवं चेतना का स्रोत समाहित है। हमारी वर्तमान चेतना उस अनंत चेतना स्रोत का प्रतिबिंब या अभिव्यक्ति है। चेतना स्रोत के इस सागर में चेतना की असंख्य तरंगें उठ रही हैं। यदि हम इसका सूक्ष्म अध्ययन करें, तो हम देखेंगे कि प्रत्येक
37 लहरें निरंतर चलती रहेंगी, और यदि सागर अनंत है, तो वह कभी नहीं रुकेगी, और अनंत काल से अनंत काल तक चलती रहेगी और अंततः उसी स्थान पर लौट आएगी जहाँ से वह शुरू हुई थी। इसी प्रकार हमारा व्यक्तिगत जीवन उस अनंत सागर की असंख्य लहरों के समान है। जैसे प्रत्येक लहर अनंत चक्र को पूरा करने के लिए आगे बढ़ती है, वैसे ही हममें से प्रत्येक का एक अनादि अतीत और अनंत भविष्य है।
आज के तथाकथित सतही वैज्ञानिक इस बात को स्वीकार नहीं करते। वे जाति या प्रजाति के चिंतन में ही व्यस्त हैं। वे इस तथ्य को अनदेखा करते हैं कि यदि

व्यक्ति न होते, तो कोई जाति या प्रजाति भी न होती। जाति या प्रजाति एक अमूर्त अवधारणा है जो हमारे मन में विद्यमान है। यह हमारे सामान्यीकरण का परिणाम है, जबकि व्यक्ति प्रकृति के निर्विवाद तथ्य हैं। ये सभी तरंगें जीवन के सरल बीज के रूप में शुरू होती हैं जिनमें समस्त संभाव्यताएँ समाहित होती हैं और जो भविष्य में प्रकट होंगी। वे विभिन्न रूपों के माध्यम से उन संभाव्यताओं को वास्तविकता में बदलने का प्रयास करती हैं। जिस प्रक्रिया से यह अभिव्यक्ति होती है, उसे 'विकास' कहते हैं, जिसका अर्थ है रूपों का परिवर्तन। यह अभिव्यक्ति असंभव होती यदि रूपों में परिवर्तन न होता, और यदि पुराने रूपों को त्याग न दिया जाता, तो नए रूप विकसित न होते। ऐसी स्थिति में, रूप के इस परिवर्तन को ही हम मृत्यु कहते हैं। मृत्यु किसी विशेष रूप की मृत्यु है, न कि पदार्थ की, न ही बल की। एक रूप की मृत्यु दूसरे रूप को जन्म देती है, जैसे बीज के मरने से वृक्ष का जन्म होता है, और इसी प्रकार यह प्रक्रिया चलती रहती है। फिर जो रूप पुनरुत्पादित होता है, वह मर जाता है, फिर दूसरे रूप को जन्म देता है, और यह सिलसिला चलता रहता है।
इसलिए वेदांत कहता है कि जिसका जन्म होता है उसका मरना होता है, और जो मर जाता है उसका पुनर्जन्म होता है। लेकिन आत्मा में जन्म या मृत्यु नहीं होती। आत्मा शाश्वत और अमर है। यह वह रूप धारण करती है जो वह चाहती है। बाह्य रूप का कारण मन है, और मन या विचार रूप हमारी इच्छा, लालसा या तीव्र तड़प का परिणाम है। इसलिए हमारा भविष्य हमारे इच्छाओं, प्रवृत्तियों, लालसाओं और कर्मों द्वारा निर्धारित होगा। वेदांत स्वर्ग या नरक की परवाह नहीं करता। यह कहता है कि जो स्वर्ग जाना चाहते हैं वे स्वर्ग का निर्माण करेंगे और वहाँ जाकर आनंद लेंगे। जो नरक के बारे में सोचते हैं उन्हें नरक दिखाई देगा। जो सोचते हैं कि वे पापी हैं वे वास्तव में पापी हैं। जैसा तुम सोचते हो, वैसा ही तुम बन जाते हो। इसलिए ये सभी स्वर्ग और नरक हमारे मन की विभिन्न अवस्थाएँ हैं। इनका अस्तित्व बाहर नहीं है। जब तक हम अज्ञान की अवस्था में रहते हैं, हमें ऐसे स्वप्न दिखाई देते हैं। लेकिन जब हम अपने वास्तविक स्वरूप की सार्वभौमिक आत्मा के साथ एकता को महसूस करते हैं, तब हम जन्म-मृत्यु, स्वर्ग-नरक आदि से मुक्त हो जाते हैं। तब हमारा वास्तविक स्वरूप अपनी शुद्ध अवस्था में लौट आता है और अनंत काल तक अपनी महिमा में विराजमान रहता है।

1. □□□□ □□□□, □□□□□□ 2, □□□□□ 27. 38

अध्याय V

आत्मा का पुनर्जन्म
आत्मा का पुनर्जन्म एक बुद्धिमान सत्ता के अस्तित्व को मानता है, जो स्थूल भौतिक शरीर से अविभाज्य और स्वतंत्र है। आत्मा शब्द से हमारा तात्पर्य उस आत्म-चेतन गतिविधि के केंद्र से है जो चिंतन करती है, व्यक्तिगत या बाह्य घटनाओं पर प्रतिक्रिया करती है और सचेतन रूप से जीवन के कार्यों का निर्वाह करती है। यह आत्मा कैसे अस्तित्व में आती है और शरीर के नष्ट होने के बाद कहाँ जाती है, ये ऐसे प्रश्न हैं जो लगभग हर मनुष्य के मन में उठते हैं। ये प्रश्न उतने ही पुराने हैं जितने कि इस पृथ्वी पर पहले मनुष्य का आगमन।
प्राचीन काल से ही, समस्त देशों और राष्ट्रों के दार्शनिकों और सत्य के ज्ञाताओं ने इस ग्रह पर व्यक्तियों के जन्म, जीवन और मृत्यु के रहस्यों को सुलझाने के अनेक प्रयास किए हैं। बार-बार यह प्रश्न पूछा गया है: पशु और मनुष्य अचानक अस्तित्व में क्यों आते हैं, कुछ समय तक जीवित रहते हैं, कुछ इच्छाओं की पूर्ति करते हैं, अद्भुत कर्म करते हैं, कोई चमत्कारी शक्ति प्रदर्शित करते हैं और अप्रत्याशित रूप से मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं; मानो उन्हें अपने जीवन की योजनाएँ और परियोजनाएँ अधूरी और अपूर्ण छोड़कर ही विदा होना पड़ता है? ऐसा क्यों होता है कि कुछ प्राणी इस विशाल संसार में कुछ ज्ञान प्राप्त करने या अनुभव करने का अवसर प्राप्त किए बिना ही कुछ दिनों, हफ्तों या वर्षों में मृत्यु के लिए जन्म लेते हैं? क्या ये घटनाएँ आकस्मिक हैं, या कोई ऐसा नियम है जो हमारी आँखों के सामने प्रतिदिन घटित होने वाली इन सभी निरर्थक घटनाओं और परिघटनाओं को नियंत्रित करता है? क्या ये आत्माएँ बिना किसी उद्देश्य के आती-जाती रहती हैं, या इन सभी प्रकटताओं के पीछे कोई उद्देश्य है?
जब तक इन अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर नहीं मिल जाता, तब तक मानव मन को चैन नहीं मिलता। पश्चिमी देशों के भौतिकवादी विचारकों ने व्यक्तिगत जीवन की योजना और उद्देश्य तथा आत्मा के अस्तित्व को नकारते हुए ऐसे सभी प्रश्नों को नकार दिया है। वे इस घटना की व्याख्या इस प्रकार करते हैं कि बुद्धि प्रकृति की निर्जीव शक्तियों के कारण उत्पन्न होती है, जो

यांत्रिक नियमों द्वारा संचालित होती हैं, जिनमें से कुछ का स्थूल रूप होता है और कुछ का सूक्ष्म रूप, तथा मनुष्य और पशुओं की उत्पत्ति ब्रह्मांडीय विकास की प्रक्रिया में परमाणुओं और अणुओं के किसी शारीरिक संयोजन के कारण होती है। उनके अनुसार, न तो आत्मा है और न ही मृत्यु के बाद जीवन; इसलिए, ऐसे प्रश्न पूछना व्यर्थ है। आत्मा के अस्तित्व या उसके जन्म और पुनर्जन्म के बारे में सोचना समय और ऊर्जा की बर्बादी है। परन्तु भौतिकवादी व्याख्या सत्य के साधकों के मन को संतुष्ट नहीं करती, और न ही यह उन सभी प्रश्नों को रोक पाती है जो अनायास ही मानव मन में उठते हैं; इसके विपरीत, यह सिद्ध किया जा सकता है कि परमाणुओं और अणुओं का संयोजन

39 अणु कभी भी चेतना और बुद्धि उत्पन्न नहीं कर सकते, और यह एक महत्वपूर्ण कारक है और केवल सजीव आत्मा का एक गुण है।
ऐसा कहा जाता है कि गति से केवल गति ही उत्पन्न होती है। शरीर की क्रियाएँ ज्ञानी या उन क्रियाओं को संवेदनाओं, विचारों और चिंतन में रूपांतरित करने वाले को उत्पन्न नहीं कर सकतीं। अंगों में गति का कार्य कभी भी गतिहीन नहीं हो सकता - जैसे चेतना या बुद्धि। कोई भी चेतना या बुद्धि गति का कार्य नहीं है। यद्यपि, यदि हम आधुनिक विज्ञान की सहायता से प्रकृति की घटनाओं का अध्ययन करें, तो हम समझते हैं कि संयोग या आकस्मिकता का घटनाओं के क्रम में कोई स्थान नहीं है, बल्कि यह कारण और प्रभाव के सार्वभौमिक नियम द्वारा निर्देशित होती है, जिसे कारण-कार्य का नियम कहा जाता है। अतीत में घटी हर घटना, चाहे वो अतीत में घटी हो या भविष्य में घटेगी, उसके पीछे कोई न कोई निश्चित कारण अवश्य होता है। इस नियम को नकारने से हम न केवल प्रकृति के सत्य को नकारते हैं, बल्कि आधुनिक विज्ञान के उस मूलभूत सिद्धांत को भी नकारते हैं, जो कहता है कि "शून्य से कुछ नहीं उत्पन्न हो सकता"। इस सत्य को मनुष्य और पशु दोनों के जन्म और जीवन पर लागू करने से हम समझते हैं कि वे कारण-कार्य के नियम के अधीन हैं और कारण-प्रभाव के नियम द्वारा शासित होते हैं। इस पृथ्वी पर सभी प्राणियों के जीवन का कारण भिन्न-भिन्न है; ये आकस्मिक घटनाएँ नहीं हैं, और न ही आकस्मिक हो सकती हैं। हम उस कारण की खोज करते हैं जिसने क्रिया को उत्पन्न किया; हम व्यक्ति की सचेतन क्रिया की खोज करते हैं: क्या यह प्रभाव से परे विद्यमान है, जैसा कि कुछ लोग मानते हैं कि मनुष्य का कारण कोई अलौकिक सत्ता है, जो ब्रह्मांड से

परे निवास करती है? क्या यह कारण प्रभाव से परे विद्यमान है, या यह स्वयं प्रभाव का एक अभिन्न अंग है? यह अत्यंत पेचीदा प्रश्न है, और अनेक उन्नत विचारक कारण और प्रभाव के बीच उचित संबंध को समझने के अपने प्रयासों में असफल रहे हैं। कारण और प्रभाव के बीच के संबंध की उचित जानकारी होने पर ही समस्या का समाधान निर्भर करता है।
विश्व के सभी वैज्ञानिक विचारक इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि किसी वस्तु का वास्तविक कारण वस्तु के बाहर नहीं, बल्कि वस्तु में ही निहित होता है, ठीक उसी प्रकार जैसे किसी वृक्ष का कारण वृक्ष के बाहर नहीं, बल्कि वृक्ष में ही निहित होता है। कारण का अर्थ है प्रभाव की अप्रकट अवस्था, और प्रभाव का अर्थ है कारण की प्रकट अवस्था। संपूर्ण वृक्ष बीज में सुप्त अवस्था में रहता है। बीज के बाहर से कुछ भी नहीं आता, वह बीज में ही निहित होता है, और बाहरी परिस्थितियाँ और वातावरण केवल उस अंतर्निहित शक्ति को प्रकट करते हैं या सुप्त शक्ति के प्रकटीकरण में सहायता करते हैं। एक बलूत वृक्ष का बीज, चाहे पर्यावरणीय परिस्थितियाँ कितनी भी प्रबल क्यों न हों, बलूत वृक्ष के अलावा कुछ और उत्पन्न नहीं कर सकता। पर्यावरणीय परिस्थितियाँ बीज में एक अंश भी ऐसा तत्व नहीं जोड़ सकतीं जो बीज में आरंभ से ही विद्यमान न हो। इसलिए, जो कुछ भी हमें प्रभाव में मिलता है, वह कारण अवस्था में आरंभ से ही विद्यमान रहा होगा। प्रभाव में प्रकट होने वाली सभी विशेषताएँ
40 और प्रभाव में पाई जाने वाली प्रवृत्तियाँ, जीवन के बीज में आरंभ से ही विद्यमान समान विशिष्टताओं, समान प्रवृत्तियों और समान गुणों की अभिव्यक्ति के अलावा और कुछ नहीं हैं।
इस सत्य को पृथ्वी पर व्यक्तियों के जन्म और जीवन की घटनाओं पर लागू करके, हम जीवन के बीज के विकास की प्रक्रिया और प्रत्येक चरण को समझ सकते हैं। आधुनिक विज्ञान हमें बताता है कि जीवन का बीज विकास की प्रक्रिया से गुजरकर मनुष्य के रूप में प्रकट हो सकता है। यदि यह सत्य है, तो मनुष्य में जो कुछ भी विद्यमान है, वह जीवन के बीज में आरंभ से ही संभाव्य अवस्था में विद्यमान रहा होगा।
हमें यह स्वीकार करना होगा कि मन और उसके सभी कार्य, जैसे इच्छाएँ और प्रवृत्तियाँ, जीवन के उस बीज में विद्यमान रहे होंगे और तब तक सुप्त अवस्था में रहे होंगे जब तक कि इन सुप्त शक्तियों को अपनी अभिव्यक्ति के

लिए अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं मिल गईं। वे शून्य से अस्तित्व में नहीं आए हैं, क्योंकि नियम यह है कि जो अस्तित्व में है वह आरंभ से ही अस्तित्व में रहा होगा; अन्यथा हम इस भ्रामक तर्क को स्वीकार करने की गलती करने का जोखिम उठाएंगे कि कुछ भी नहीं से कुछ उत्पन्न हो सकता है, और कुछ उस अवस्था से अस्तित्व में आया है जिसमें उसका कोई अंश नहीं था।
जीवन के ये बीज सूक्ष्म अदृश्य ऊर्जा केंद्र मात्र हैं, जो सूक्ष्म सूक्ष्म कणों से ढके होते हैं। इनका कोई विशेष रूप नहीं होता, इसलिए ये किसी भी रूप में प्रकट हो सकते हैं, चाहे वह मानव रूप हो या पशु रूप, ताकि इनमें सुप्त पड़ी शक्तियों को प्रकट और अभिव्यक्त कर सकें। यद्यपि जीवन के ये बीज विकास, वृद्धि और प्रगति के अधीन हैं, फिर भी ये ब्रह्मांड के स्थूल भौतिक रूपों की तरह नाशवान नहीं हैं। इन बीजों में जीवन शक्ति के साथ-साथ मानसिक शक्ति और बुद्धि भी होती है। यदि आप सूक्ष्म जीव-समूहों या सूक्ष्मजीवों की मानसिक शक्तियों के रूपों का अध्ययन करेंगे, तो आप समझेंगे कि जीवन के सूक्ष्म बीज शक्ति और बुद्धि को अभिव्यक्त करते हैं, और ये बीज स्वयं भी स्थूल रूपों का निर्माण करके इन शक्तियों को प्रकट करते हैं; परन्तु यह निर्माण उस नियम पर निर्भर करता है जो स्थूल भौतिक ब्रह्मांड को नियंत्रित करता है। स्थूल रूपों के विघटन के समय, ये सभी प्रकट शक्तियां, बल की निरंतरता के नियम के अनुसार, जीवन के एक सूक्ष्म बीज में संरक्षित और सुप्त अवस्था में बनी रहती हैं, जब तक कि वह समय नहीं आ जाता जब सुप्त हो चुकी शक्तियों के पुन: प्रकट होने के लिए परिस्थितियां अनुकूल हो जाती हैं।
जीवन के इन मूल तत्वों को अनेक नामों से पुकारा जाता है। हम इन्हें चेतना के वाहन कह सकते हैं। कुछ इन्हें व्यक्तिगत आत्मा या अहंकार कहते हैं। भारतीय दार्शनिक इन्हें व्यक्तियों के सूक्ष्म शरीर (सूक्ष्म-शरीर) के रूप में वर्णित करते हैं। ये सूक्ष्म शरीर, कारण और प्रभाव के नियम द्वारा शासित और क्रिया और प्रतिक्रिया के नियम के अधीन होते हुए, कुछ शक्तियों को व्यक्त करने या प्रकट करने के लिए या तो इस लोक में या किसी अन्य लोक में फिर से प्रकट होते हैं।
41. अंतर्निहित प्रवृत्तियों को जागृत करना और भौतिक तल पर विद्यमान इन इंद्रियजन्य वस्तुओं के संपर्क में आकर ज्ञान और अनुभव प्राप्त करना। स्थूल भौतिक रूपों में, चाहे पशु हो या मनुष्य, जीवन के बीज का पुन: प्रकट

होना ही 'अभिव्यक्ति' कहलाता है, जिसे आत्मा के पुनर्जन्म के सिद्धांत या वेदांत दर्शन में पुनर्जन्म के सिद्धांत के रूप में जाना और समझा जाता है। वेदांत में आत्मा के पुनर्जन्म का अर्थ आत्मा के पुनर्जन्म या पुनर्जन्म से नहीं है। पश्चिमी देशों में कई विचारक और लेखक हैं जो आत्मा के पुनर्जन्म और पुनर्जन्म के सिद्धांतों के बीच अंतर को नहीं समझते हैं, और परिणामस्वरूप वे पाठकों के मन में भ्रम पैदा करते हैं।
लेकिन पुनर्जन्म का अर्थ आत्मा के शरीर परिवर्तन से बिल्कुल अलग है। इसका अर्थ है मृत्यु के बाद आत्मा का एक शरीर से दूसरे शरीर में जाना, या दूसरे शब्दों में, आत्मा का एक शरीर में कुछ समय तक निवास करने के बाद मृत्यु के समय उसे छोड़कर दूसरे शरीर में प्रवेश करना जो उसे ग्रहण करने के लिए तैयार हो, ताकि वह उन जन्मों में या उन रूपों के माध्यम से अनुभव और ज्ञान प्राप्त कर सके, या पिछले जन्मों के कर्मों का फल भोग सके। यह मनुष्य या पशु रूप धारण कर सकती है। अच्छे कर्म करने वाले मनुष्य या देवदूत रूप धारण करेंगे, जबकि बुरे कर्म करने वाले पशु रूप धारण करेंगे, और कुछ समय तक पशु रूप में रहने के बाद शायद मनुष्य रूप धारण करेंगे, फिर देवदूत रूप धारण करेंगे, और फिर उच्चतर प्राणियों के रूप में इस पृथ्वी पर लौट आएंगे। इस प्रकार, आत्मा के शरीर परिवर्तन का अर्थ है आत्मा का एक शरीर से दूसरे शरीर में जाना और यह चेतना की निम्नतम अवस्थाओं से उच्चतर अवस्थाओं तक विकास, प्रगति और उन्नति के विचार को नकारता है।
गतिशील पदार्थ, जिसकी मात्रा और गुण स्थिर होते हैं, अपने स्वभाव या इच्छाओं के अनुसार रूप और शरीर चुनता है। यह कारण-कार्य के नियम, या क्रिया-प्रतिक्रिया के नियम द्वारा शासित होता है। प्राचीन मिस्र में, यह माना जाता था कि शरीर की मृत्यु के बाद, आत्माएँ हजारों वर्षों तक एक शरीर से दूसरे शरीर में यात्रा करती हैं। पाइथागोरस, प्लेटो और उनके अनुयायी आत्मा के पुनर्जन्म या पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास करते थे। पाइथागोरस कहते हैं:
मृत्यु के बाद, शरीर के बंधनों से मुक्त होकर, तर्कसंगत मन
यह एक दिव्य शरीर धारण करके मृतकों के लोक में प्रवेश करता है, जहाँ यह यह तब तक अवशेष के रूप में रहता है, जब तक कि इसे वापस इस दुनिया में नहीं भेज दिया जाता, ताकि यह किसी अन्य शरीर, चाहे वह मानव हो या पशु, में निवास कर सके।

लगातार शुद्धिकरण की प्रक्रिया से गुजरने के बाद, जब यह पर्याप्त रूप से शुद्ध हो जाता है, तब इसे ग्रहण किया जाता है।
देवताओं के बीच जाता है, और उस शाश्वत स्रोत में लौट जाता है जहाँ से यह पहली बार उत्पन्न हुआ था।"

42
प्लेटो भी पुनर्जन्म के इस सिद्धांत में विश्वास करते हैं। वे प्रतीकात्मक रूप से वर्णन करते हैं कि आत्माएं पुनर्जन्म की प्रक्रिया से कैसे और कहाँ गुजरती हैं। वे फ़ेड्रस में इसका वर्णन करते हैं:
“स्वर्ग में, सभी प्राणियों के पिता और स्वामी ज़्यूस अपने पंखों वाले रथ को चलाते हैं, सभी चीजों को व्यवस्थित और नियंत्रित करते हैं… इस प्रकार जब आत्मा सत्य के दर्शन करने में असमर्थ होती है और उसे देख नहीं पाती, तो वह विस्मृति और दुर्गुण के दोहरे बोझ तले दब जाती है, उसके पंख झड़ जाते हैं, और वह पृथ्वी पर गिरकर मनुष्य या पशु के रूप में पुनर्जन्म लेती है।” प्लेटो कहते हैं कि आत्मा को अपने मूल स्थान पर लौटने में दस हजार वर्ष लग जाते हैं, क्योंकि इतने कम समय में उसके पंख नहीं उग सकते। पहले हजार वर्षों के बाद, अच्छे और बुरे आत्माएं एक साथ आकर अपने जीवन का चुनाव करते हैं और अपने पिछले कर्मों और कुकर्मों के स्वाभाविक परिणामों को भोगने के बजाय, उन्हें अपने अनुभव और स्वभाव के अनुसार शरीर चुनने की अनुमति दी जाती है। कुछ आत्माएं, जो मानव जाति से घृणा करती हैं, पशु शरीर चुनती हैं। वे चील और अन्य प्राणियों का जीवन लेना पसंद करती हैं, जबकि अन्य आत्माएं फिर से मनुष्य का शरीर धारण करके यह देखना चाहती हैं कि उन्हें क्या अनुभव प्राप्त होता है।
इस पौराणिक सिद्धांत के माध्यम से आप पुनर्जन्म या पुनर्जन्म के सिद्धांत के पीछे छिपे विचार को समझ सकते हैं। भारत में प्राचीन काल से ही पुनर्जन्म का सिद्धांत प्रचलित था, लेकिन यह प्लेटो के सिद्धांत से भिन्न था। हिंदू धर्म में यह मान्यता नहीं थी कि आत्माओं को अपने स्वभाव के अनुसार निम्न स्तर के जीवन का चुनाव करने की स्वतंत्रता है, बल्कि वे अपने कर्मों और कुकर्मों के स्वाभाविक फल भोगने और पशु या मानव शरीर में आकर सुख या दुख भोगने के लिए बाध्य थीं। लेकिन आज भी कई लोग आत्माओं के पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं, कि मृत्यु के बाद आत्माएं पशु शरीर में

और फलस्वरूप, आत्माओं या जीवन के बीज के पुनर्जन्म या पुनरावतार के सिद्धांत को स्वीकार करना होगा, ताकि जीवन के उद्देश्य की पूर्ति हो सके और विकास के सभी विभिन्न चरणों में अनुभव प्राप्त हो सकें।
आत्मा का पुनर्जन्म उस अवधारणा से भिन्न है जो बौद्ध दार्शनिकों द्वारा अपनाई जाती है, जो आत्मा की स्थिरता या आत्मा के स्थायी स्वरूप को नकारते हैं। उनका कहना है कि शरीर की मृत्यु के बाद एक आत्मा किसी अन्य रूप में फिर से प्रकट होती है, लेकिन वह मूल आत्मा नहीं होती, बल्कि उससे मिलती- जुलती प्रकृति की होती है। इससे एक जटिलता उत्पन्न होती है। यदि हम कर्मों का फल भोगने के लिए उन्हें करते हैं, तो हमें उसी आत्मा की निरंतरता की आवश्यकता होती है; हमें यह स्वीकार करना होगा कि उसी आत्मा का अस्तित्व बना रहता है, अन्यथा यह ऐसा ही होगा जैसे एक व्यक्ति भोजन करे और दूसरा तृप्ति प्राप्त करे। तब इस ब्रह्मांड में न तो कोई नियम होगा और न ही कोई सामंजस्य।
जो लोग पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास नहीं करते, वे या तो एक जन्म के सिद्धांत में या फिर वंशानुक्रम के सिद्धांत में विश्वास करते हैं। लेकिन ये दोनों सिद्धांत मनुष्य के मन में उठने वाले सभी प्रश्नों का उत्तर नहीं देते और न ही अंतर को स्पष्ट करते हैं।
1. उपनिषदों में हमें निम्नलिखित अंश मिलते हैं जिनमें मनुष्य की आत्माओं के पतन का उल्लेख है।
निम्न और पशु शरीरों के लिए:
बृहदारण्यक उपनिषद, 6.2.16 – “जो लोग इन दो मार्गों को नहीं जानते…” (दक्षिणायन और उत्तरायण) कीड़े-मकोड़े और पतंगे बन जाते हैं, और ये अक्सर काटने वाले जीव (मच्छर और मक्खियाँ) बन जाते हैं।
ख. छान्दोग्य उपनिषद, 5.10.7 - “यहाँ अच्छे आचरण वाले लोग
जो लोग यहाँ बुरे आचरण करते हैं, वे शीघ्र ही अच्छे जन्म प्राप्त करते हैं
- ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य। और जो यहाँ बुरे आचरण करते हैं, वे बुरे जन्म प्राप्त करते हैं - कुत्ते का जन्म, सूअर का जन्म या चांडाल (दुष्ट व्यक्ति) का जन्म।
ग. कठ उपनिषद, 2.2.7 – “कुछ आत्माएँ अपने कर्मों और मन की प्रवृत्ति के अनुसार 44

कुछ को दूसरा जन्म मिलता है, और कुछ अन्य पेड़-पौधों और पत्थरों की अवस्था में पतित हो जाते हैं।” – स्वामी प्रज्ञानानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।
एक जन्म के सिद्धांत में विश्वास रखने वाले लोग यह नहीं समझा पाते कि आत्माएं क्यों जन्म लेती हैं, कुछ समय तक जीवित रहती हैं और फिर चली जाती हैं। लेकिन वे कहाँ जाती हैं, यह भी वे नहीं जानते। वे जीवन के उद्देश्य को नहीं समझते, जो कि ज्ञान और अनुभव प्राप्त करना है, और वे यह भी नहीं समझ पाते कि छोटे बच्चे कुछ दिनों, हफ्तों या महीनों में बिना कुछ जानने का अवसर पाए क्यों मर जाते हैं। इससे जीवन का क्या उद्देश्य पूरा होता है? एक जन्म के सिद्धांत में विश्वास रखने वाले ईसाई धर्मशास्त्री यह समझाते हैं कि जन्म के बाद मरने वाले ये छोटे बच्चे स्वर्ग जाएंगे और शाश्वत पिता द्वारा बचाए जाएंगे और अनंत काल तक दिव्य आनंद का अनुभव करेंगे। यदि ईसाई केवल इसी सिद्धांत में विश्वास करते हैं, तो उन्हें जन्म के समय अपने बच्चों की मृत्यु के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, और जब उनके छोटे बच्चे मर जाते हैं और मृत शरीरों के ऊपर से कब्रों में जाते हैं, तो दयालु पिता के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिए। लेकिन यह सिद्धांत कठिनाइयों का समाधान नहीं करता, बल्कि यह कुछ सैद्धांतिक समाधानों को मान लेता है जो किसी भी कठिनाई का समाधान नहीं करते। वे न तो तर्कसंगत हैं और न ही वैज्ञानिक।
विश्व के तीन महान धर्म, यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम, आज भी जीवन और मृत्यु के उस सिद्धांत को मानते हैं। उनका मानना है कि हम अस्तित्व में आते हैं, थोड़े समय के लिए रहते हैं और फिर स्वर्ग या शाश्वत दंड के स्थान पर चले जाते हैं। इस सिद्धांत में विश्वास करने वाले लोग अपने बचपन में प्राप्त प्रभावों से अपने मन को मुक्त नहीं कर पाते। इन तीनों महान धर्मों के अनुयायी मानते हैं कि आत्माएं अस्तित्व में आती हैं, पहली बार शून्य से सृजित होती हैं, और सृष्टिकर्ता द्वारा विवश होकर कुछ कर्म करती रहती हैं, लेकिन उन्हें अपने अल्प जीवनकाल में किए गए कर्मों का फल भोगना या भुगतना पड़ता है, जो उन्हें अपनी स्वतंत्र इच्छा से नहीं, बल्कि सृष्टिकर्ता की इच्छा से करने के लिए विवश किया गया था, जिसने प्राणियों में इस प्रकार की स्वतंत्र इच्छा, चाहे वह सद्गुण हो या गुणगुण, डाली थी। यह उतना ही बेतुका है जितना कि किसी एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के सभी कार्य करने के लिए

विवश किया जाना और उन कार्यों के लिए दंड या पुरस्कार भोगना जो उसने स्वयं नहीं किए हैं। इस समस्या का एकमात्र समाधान जीवन के बीज की शाश्वतता को स्वीकार करना है। यदि ये आत्माएं आज विद्यमान हैं और अनंत काल तक विद्यमान बनी रहती हैं, तो वे निश्चित रूप से अनंत काल से विद्यमान रही होंगी, और जो कुछ भी विद्यमान था, उसका किसी न किसी रूप में पुन: प्रकट होना निश्चित है। एक और विचारणीय बिंदु यह है कि आरंभ, अंत और निरंतरता मानव मन की अवधारणाएँ हैं जो समय की हमारी अवधारणा पर निर्भर करती हैं, लेकिन हम सभी जानते हैं कि समय का कोई निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है। 1. यह केवल हमारे स्वभाव के ज्ञान का एक रूप है, जो बाहरी प्रकृति के अनुभव से संबंधित है। 2. यह अवधारणा मृत्यु के समय लुप्त हो जाती है, ठीक वैसे ही जैसे हर रात गहरी नींद में यह लुप्त हो जाती है। क्या आपको याद है, या क्या आपको समय का आभास होता है, जब आपका मन गहरी नींद में पूरी तरह से विश्राम कर रहा होता है?
1. अद्वैतवादी अवधारणा में, समय को अविद्या या अविद्या की अभिव्यक्ति और प्रभाव (कार्य) के रूप में माना जाता है।
माया। इसका मात्र एक अनुभवजन्य अस्तित्व है, लेकिन परम वास्तविकता में यह मिट जाती है या नकार दी जाती है।
- स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।
2. इमैनुअल कांट अपनी 'शुद्ध तर्क की आलोचना' (मैक्स मुलर द्वारा अनुवादित) में कहते हैं: "समय 45 के अलावा और कुछ नहीं है।"
हमारी आंतरिक अंतर्ज्ञान का रूप। हमारी संवेदनशीलता की विशिष्ट स्थिति को हटा दें, और यह विचार कि...
समय लुप्त हो जाता है, क्योंकि यह वस्तुओं में अंतर्निहित नहीं होता, बल्कि केवल उन्हें अनुभव करने वाले विषय में ही अंतर्निहित होता है।
- स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।
नहीं, आप ऐसा नहीं कर सकते, क्योंकि वह धारणा क्षण भर के लिए लुप्त हो जाती है, और आत्माएं मृत्यु की नींद से जाग उठती हैं, ठीक उसी तरह जैसे कीड़े लंबी सर्दियों के बाद वसंत ऋतु में जाग उठते हैं, या जैसे शरद ऋतु में अपने द्वारा बुने हुए कोकून में प्यूपा जाग उठता है। प्रकृति हमें नींद और मृत्यु के बीच इस समानता और वसंत ऋतु में प्यूपा के पुनर्जन्म के द्वारा पुनर्जन्म का यह सत्य सिखाती है। आत्माएं मृत्यु की नींद से जाग उठती हैं और कुछ उद्देश्यों की पूर्ति और कुछ अनुभवों को प्राप्त करने के लिए नए

शरीर धारण करती हैं, ताकि वे अपने पिछले कर्मों का फल भोग सकें, वे कारण और प्रभाव के नियम के अधीन होती हैं, ठीक उसी तरह जैसे हम अपने पुराने कपड़े उतारकर नए पहन लेते हैं। इसलिए वेदांत में कहा गया है:
जैसे हम अपने पुराने वस्त्र उतारकर नए पहन लेते हैं, वैसे ही व्यक्ति का अहंकार या
जीवन का बीज, पुराने शरीर को त्यागने के बाद, नए रूप का निर्माण करता है। जीवन के उद्देश्य की पूर्ति का लक्ष्य।
पुनर्जन्म के इस सिद्धांत के माध्यम से भारत, चीन और जापान के अधिकांश लोगों को अपने जीवन में सांत्वना मिली है और उन्होंने उन अत्यंत कठिन समस्याओं का समाधान पाया है जो विश्व के वैज्ञानिकों और अन्य विचारकों के मन को विचलित करती हैं। पश्चिमी देशों में भी प्लेटो, प्लोटिनस, प्रोक्लस, कांट, शेलिंग, फिक्टे, शोपेनहावर, लेसिंग, ब्रूनो, गोएथे जैसे दार्शनिक; वर्ड्सवर्थ, टेनीसन जैसे कवि; डॉ. जूलियस, मुलर, डॉ. डोर्नर, रुकर्ट जैसे धर्मशास्त्री आत्मा के पुनर्जन्म या पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास रखते हैं। ओरिजन जैसे प्राचीन दार्शनिक पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास करते थे क्योंकि यही एकमात्र सिद्धांत है जो मानव मन को संतुष्ट करता है और इस विषय पर सभी प्रश्नों का वैज्ञानिक रूप से उत्तर देता है तथा तथ्यों की व्याख्या करता है।
यदि एक जन्म का सिद्धांत और वंशानुक्रम सभी कठिनाइयों का समाधान नहीं करते, तो हमें एक बेहतर और अधिक संतोषजनक सिद्धांत पर विचार करना चाहिए। एक समय था जब पुनर्जन्म और आत्मा के पुनरावतार का विचार प्राचीन काल के ईसाइयों में इतना व्यापक रूप से फैल गया था कि जस्टिनियन को 538 ईस्वी में कॉन्स्टेंटिनोपल की परिषद में एक कानून पारित करना पड़ा ताकि इस सिद्धांत के प्रसार को रोका जा सके, जो ईसाई धर्म की नींव को ही नष्ट कर देता। वह कानून यह था:
जो कोई भी आत्मा के पूर्व-अस्तित्व की पौराणिक प्रस्तुति का समर्थन करेगा और
अतः, इसके लौटने की अद्भुत धारणा रखने वाले को शाप दिया जाए।
जो लोग पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास नहीं करते, वे इन कठिनाइयों को आनुवंशिकता के सिद्धांत के माध्यम से समझाने का प्रयास करते हैं। लेकिन क्या यह सिद्धांत सभी प्रश्नों का उत्तर देता है?

मान लीजिए एक पच्चीस वर्षीय युवक है और उसे अपने दादा से कुछ विशेष गुण और विशेषताएं विरासत में मिली हैं, जैसे संगीत की प्रतिभा, टेढ़ी नाक, या हँसी में एक अजीब सी झनझनाहट, जिससे वह अपने दादा जैसा दिखता है। अब यह युवक, भगवद् गीता, अध्याय 2, श्लोक 22. 46 इस सिद्धांत के समर्थकों के अनुसार, इस युवक को ये सभी गुण अपने दादा से विरासत में मिले हैं, जिनकी मृत्यु उसके जन्म से छह वर्ष पहले हुई थी। ये सभी विशेषताएँ इस युवक को उसके जन्म से पहले और मानव शरीर में आने से पहले ही विरासत में मिली थीं, जब वह एक प्रोटोप्लाज्मिक कोशिका या जेली जैसे पदार्थ के समान था, जिसमें न तो नाक थी और न ही मुख। 1. उस समय भी उसे अपने दादा से वह विचित्र हंसी और टेढ़ी नाक विरासत में मिली थी। यह प्रोटोप्लाज्मिक कोशिका पिन के सिरे से भी छोटी थी, और यदि आप इसे सूक्ष्मदर्शी से देखें तो आप इसे कुत्ते, बिल्ली, पक्षी या पेड़ से अलग नहीं कर सकते। तब भी इसमें ये सभी विशेषताएँ थीं। मस्तिष्क और तंत्रिका केंद्रों के आकार लेने से पहले, इस युवक में मौजूद संगीत प्रतिभा और प्रवृत्तियाँ उस प्रोटोप्लाज्मिक कोशिका में विद्यमान थीं जो उसे उसके दादा से विरासत में मिली थी।
क्या आपको यह सोचना हास्यास्पद नहीं लगता कि एक ही प्रोटोप्लाज्मिक कोशिका में ये सभी प्रवृत्तियाँ, टेढ़ी नाक, खिलखिलाहट और प्रतिभाएँ समाहित हो सकती हैं, जबकि उस समय न तो मस्तिष्क था, न मुँह, न नाक? कई वैज्ञानिक आनुवंशिकता के सिद्धांत में विश्वास करते हैं, लेकिन वे यह नहीं समझा पाते कि एक ही कोशिका में पिता, दादा, माता और दादी के सभी मानसिक और शारीरिक लक्षण, विशेषताएँ और विशिष्टताएँ कैसे समाहित हो सकती हैं। इस मानव शरीर में लाखों कोशिकाएँ हैं। लेकिन वह किस प्रकार की कोशिका है जो इन सभी शक्तियों और प्रवृत्तियों को पुन: उत्पन्न कर सकती है जो वर्तमान में हममें से प्रत्येक के पास हैं? यह वैज्ञानिक मस्तिष्कों के सामने आने वाली सभी समस्याओं में सबसे कठिन समस्या है।
इस आनुवंशिकता के सिद्धांत के विरुद्ध अनेक सिद्धांत दिए गए हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कोई जीव तभी वंशानुगत गुण प्राप्त कर सकता है जब उसमें वंशानुगत गुण प्राप्त करने की प्रवृत्ति हो, अन्यथा वह नहीं कर सकता। मान लीजिए कि यह आनुवंशिकता का सिद्धांत सत्य है, तो हमने इससे क्या सीखा? हमने सीखा कि संपूर्ण युवक अपने जन्म से पहले ही प्रोटोप्लाज्मिक कोशिका में विद्यमान था और उसका संपूर्ण चरित्र वहीं मौजूद था। क्या यह

मनुष्य के पूर्व-अस्तित्व के समान नहीं प्रतीत होता? वास्तव में ऐसा ही प्रतीत होता है, क्योंकि संपूर्ण मानव स्वभाव किसी न किसी रूप में जीवन के उस बीज में विद्यमान रहा होगा। समस्त शक्तियाँ, बुद्धि और इच्छाएँ भी वहीं विद्यमान रही होंगी; अन्यथा हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ये शक्तियाँ शून्य से उत्पन्न हुई हैं, जो कि बेतुका और अवैज्ञानिक होगा।
1. स्वामी अभेदानंद का निधन 1939 में हुआ था, जो आनुवंशिकी विज्ञान के विकास से कई साल पहले की बात है।
खोज की गई। हालाँकि जीन किसी व्यक्ति के टेढ़ेपन के आनुवंशिक संचरण की व्याख्या कर सकते हैं।
नाक और यहाँ तक कि किसी की आवाज़ की विशिष्टता जैसी असाधारण चीजों का कारण अभी भी आनुवंशिकी नहीं हो सकता।
प्रतिभा का वह पहलू जो दुनिया के कुछ सबसे प्रसिद्ध लोगों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। एक प्रतिभाशाली व्यक्ति के बनने की प्रक्रिया को सबसे अच्छे तरीके से समझाया जा सकता है।
पुनर्जन्म के सिद्धांत द्वारा इसकी व्याख्या की गई है, जिसके अनुसार विलक्षण प्रतिभा वाले लोग असाधारण कौशल प्रदर्शित करते हैं।
क्योंकि उन्होंने कई जन्मों से इन्हें निखारा है। यह संभव है क्योंकि इसके अनुसार...
वेदांत दर्शन के अनुसार, हमारा मन जन्म-जन्मांतर तक हमारे साथ रहता है, इसलिए हमारी क्षमताएँ कभी नहीं बदलतीं।
खो जाने पर भी, ये हमारे साथ अगले जीवन में भी यात्रा करते हैं। जब अनुकूल बाहरी परिस्थितियाँ उपलब्ध होती हैं, तो ये
मन में मौजूद सुप्त संस्कार या प्रवृत्तियाँ प्रकट होती हैं।
इसी कारण स्वामी विवेकानंद ने कहा है, “मैं इस बात से आश्वस्त हूँ कि नेता जन्म से नहीं बनता।”
एक ही जीवन है। नेता जन्मजात होते हैं (नेतृत्व कौशल के साथ)। क्योंकि कठिनाई संगठन में नहीं है और
योजनाएँ बनाना; नेता की असली परीक्षा तो अलग-अलग पृष्ठभूमि के लोगों को एक साथ रखने में निहित है।
उनकी साझा सहानुभूति के अनुरूप। और यह केवल अचेतन रूप से ही हो सकता है, कभी भी कृत्रिम रूप से नहीं।

प्रयास कर रहा है।" दूसरे शब्दों में, एक नेता वह व्यक्ति होता है जिसने कई वर्षों से नेतृत्व कौशल को निखारा है।
जीवन भर, न कि केवल एक। अनेक भिन्न-भिन्न लोगों को एक साझा लक्ष्य के अंतर्गत एकजुट करने की उनकी अनूठी क्षमता।
इसलिए छाता उनके लिए सहज और स्वाभाविक रूप से आता है, इसके लिए उन्हें ज्यादा प्रयास करने की आवश्यकता नहीं होती है।
(पुलकित माथुर द्वारा लिखित फुटनोट, द स्पिरिचुअल बी।)
फिर भी, वंशानुक्रम का सिद्धांत उन सभी कारणों की व्याख्या नहीं कर सकता जिनसे प्रतिभावान और विलक्षण प्रतिभाएं उत्पन्न होती हैं। इसके विपरीत, आत्मा के पुनर्जन्म का सिद्धांत इन सभी बातों को संतोषजनक ढंग से समझाता है। चरवाहा मंगियामेलो पाँच वर्ष की आयु में इतनी कुशलता से गणना कैसे कर सकता था? बच्चा ज़ेराब क्लोबर्न, आठ वर्ष से कम आयु में, बिना किसी आंकड़े के सबसे कठिन गणितीय प्रश्नों का उत्तर दे सकता था। महान संगीतकार मोजार्ट चार वर्ष की आयु में एक सोनाटा दोहरा सकते थे और आठ वर्ष की आयु में उन्होंने एक ओपेरा लिखा। हॉफमैन दस वर्ष की आयु से पहले ही सुंदर संगीत बजा सकते थे। अंधे टॉम को अपनी प्रतिभा अपने माता-पिता से विरासत में नहीं मिली थी। वह एक गुलाम था और एक बागान में गुलाम माता-पिता से पैदा हुआ था। एक दिन वह अपने मालिक के बैठक कक्ष में गया जब परिवार भोजन कर रहा था और वह पियानो पर बैठ गया और ऐसा संगीत बजाने लगा जिसे उसने पहले कभी नहीं सुना था। लेकिन संगीत में वह उस्ताद था। वह स्वयं संगीत रच सकता था और अपनी रचनाओं को पौने घंटे तक बजा सकता था, और एक बार संगीत सुनने के बाद वह उसे हूबहू दोहरा सकता था। उसने कभी कोई शिक्षा नहीं ली थी और न ही वह शिक्षा को समझ सकता था। ये उदाहरण पारिवारिक वंशानुक्रम या 'संचयी वंशानुक्रम' के सिद्धांत को गलत साबित करते हैं। जो लोग वंशानुक्रम के सिद्धांत में विश्वास करते हैं, वे कहते हैं कि प्रतिभा संचयी वंशानुक्रम का परिणाम है जो धीरे-धीरे प्रकट होती है, यानी कम से अधिक और फिर उससे भी अधिक, और इसी तरह आगे बढ़ती जाती है। लेकिन प्रतिभावान व्यक्तियों के वंशानुक्रम के पूरे इतिहास में, शेक्सपियर, लिंकन, यीशु, बुद्ध या शंकराचार्य जैसे सभी महान उदाहरणों में, हमें इन महान पुरुषों के परिवार में प्रतिभा का कोई निशान नहीं मिलता, बल्कि इसके विपरीत, उनके माता-पिता और दादा-दादी में ऐसी कोई क्षमता नहीं थी।

उस समय गलीलिया में बहुत से चरवाहे थे, लेकिन यीशु मसीह एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें अपने माता-पिता और रिश्तेदारों के चरवाहे स्वभाव से कुछ भी विरासत में नहीं मिला। भारत में बहुत से युवा राजकुमार और राजा हुए, लेकिन बुद्ध केवल एक ही थे। ऐसा क्यों था? क्या वंशानुक्रम का सिद्धांत इन सभी उदाहरणों की व्याख्या करता है? नहीं।
यदि हम वर्तमान में विद्यमान हैं, तो हम अपने विनाश या अंत के बारे में सोच भी नहीं सकते। इस वास्तविकतापूर्ण संसार में विनाश का अर्थ ही असंभव है। यदि हम आज विद्यमान हैं, तो हम अपने अस्तित्वहीन होने के बारे में, न तो पहले और न ही बाद में, सोच सकते हैं। इस शरीर के जन्म से पहले आत्मा कहाँ विद्यमान थी, यह कोई नहीं बता सकता। हम आत्मा की शुरुआत या अंत का पता नहीं लगा सकते।
पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास न करने वाले कई लोगों ने इस पर आपत्ति जताई है। एक सवाल बार-बार पूछा गया है: "अगर हम पहले भी अस्तित्व में थे, तो हमें वह याद क्यों नहीं है?" अगर हम अपने जीवन पर गौर करें, तो हमें कई बातें याद नहीं रहतीं, फिर भी हम जानते हैं कि हमने उन्हें किया था। क्या आपको याद है कि आपने पच्चीस साल पहले, 8 फरवरी की दोपहर को क्या किया था? शायद आप कहेंगे कि आपको याद नहीं है। हमारी स्मृति मन की वह शक्ति मात्र है जिससे हम अतीत की बातों को याद कर सकते हैं।

मन में 48 धारणाएँ और विचार संचित होते हैं। स्मृति बढ़ती है और यदि हम अपनी स्मृति को विकसित करते हैं, तो हम कई ऐसी बातें याद रख पाएंगे जो हमें वर्तमान में नहीं पता हैं।
भारत में कई योगी हैं जिन्हें अपने अतीत के अनुभव याद रहते हैं। प्राचीन ग्रीस में यह माना जाता है कि प्राचीन दार्शनिक भारत आए थे ताकि हिंदुओं के अद्भुत ज्ञान के रहस्य को जान सकें। कुछ लोग कहते हैं कि अगर उन्हें अतीत याद होता तो वे कितने सुखी होते; लेकिन शायद अगर उन्हें अतीत याद होता तो वे अपने वर्तमान का सही उपयोग नहीं कर पाते।
यदि आपको पता होता कि कुछ दिनों या महीनों में आप पर कोई बड़ी विपत्ति आने वाली है, तो क्या आप वर्तमान में अपने कर्तव्यों का निर्वाह करने में सक्षम होते? बल्कि आप उन विपत्तियों को लगातार याद करते रहते। हमें अतीत के बारे में जानने की व्यर्थ जिज्ञासा को शांत करने का प्रयास नहीं करना

चाहिए, बल्कि अपने वर्तमान को उपयोगी बनाना चाहिए और ऐसे कार्य करने चाहिए जो हमें आज से बेहतर बनने में सहायक हों। अपने वर्तमान का सर्वोत्तम उपयोग करें, जब तक कि वह समय न आ जाए जब उच्चतर ज्ञान हमारे आध्यात्मिक नेत्रों के समक्ष अतीत और भविष्य को एक विस्तृत दृश्य की तरह प्रकट कर दे, तब हम वही कह सकेंगे जो श्री कृष्ण ने भगवद् गीता में अर्जुन से कहा था:
“तुम और मैं दोनों अनेक जन्मों से गुज़र चुके हैं; तुम उन्हें नहीं जानते, जबकि मैं उन सभी को जानता हूँ।”

1. भगवत गीता, अध्याय 4, श्लोक 5. 49

अध्याय VI

आत्मा और उसका भाग्य
आत्मा और उसके भाग्य का प्रश्न स्वाभाविक रूप से सभी के मन में उठता है, चाहे वे सुसंस्कृत हों या असभ्य। कोई अन्य प्रश्न पुरुषों और महिलाओं के हृदयों को इतनी गहराई से नहीं छूता। कोई अन्य समस्या उनकी रुचि को इतना नहीं जगाती और न ही उनके मन को इतना चिंतनशील बनाती है, जितना कि मानव आत्मा के स्वरूप और उसके भाग्य से संबंधित यह सार्वभौमिक समस्या। प्राचीन काल से ही दार्शनिकों, ऋषियों, विचारकों और पैगंबरों ने इस महान समस्या को हल करने और इस महत्वपूर्ण प्रश्न का उत्तर देने का भरसक प्रयास किया है। अपने प्रयासों में वे समय-समय पर विभिन्न निष्कर्षों पर पहुँचे। उनके कुछ निष्कर्ष कुछ लोगों को पसंद आए। कुछ का कहना है कि आत्मा जैसी कोई चीज नहीं है जो शरीर से स्वतंत्र और उससे अलग अस्तित्व रख सके, जबकि अन्य लोग इसके अस्तित्व को पूरी तरह से नकारते हैं। जो लोग आत्मा को शरीर से स्वतंत्र मानते हैं, उनका कहना है कि यह मृत्यु के बाद भी विद्यमान रहेगी, अर्थात् यह अमर है। लेकिन यह प्रश्न उन लोगों के मन को विचलित नहीं करता जो आत्मा के अस्तित्व को नकारते हैं, या मानते हैं कि आत्मा शरीर से स्वतंत्र नहीं है, बल्कि जब तक शरीर जीवित रहता है तब तक शरीर पर निर्भर रहती है, या आत्मा शरीर में निवास करती है। हममें से कुछ ऐसे भी हो सकते हैं जिन्हें इस बात का पूर्ण विश्वास हो कि उनके पास आत्मा नहीं है।
लेकिन सभी धर्मों का उद्देश्य मानव मन को इस विश्वास की ओर ले जाना है कि आत्मा शाश्वत है, मृत्यु के बाद भी उसका अस्तित्व बना रहता है, और वह स्वर्ग के सुख और आनंद का अनुभव करती है, या दंड भोगती है। लेकिन ऐसे विचार शास्त्रों पर, या कुछ महान ऋषियों या संतों के लेखन या कथनों पर आधारित होते हैं।
ईसाइयों में यह आम धारणा है कि आत्मा की अमरता, या अमर जीवन, यीशु मसीह द्वारा प्रकट किया गया था और यीशु के आगमन से पहले यह विचार संसार में अज्ञात था और यीशु के बिना कोई भी शाश्वत जीवन प्राप्त नहीं कर सकता था। लेकिन जब हम प्राचीन ईसाई-पूर्व धर्मों और उनके ग्रंथों का अध्ययन करते हैं, तो पाते हैं कि शाश्वत जीवन का यह विचार लगभग सर्वत्र ज्ञात था और

प्राचीन मिस्रियों, कसदियों, हिंदुओं, पारसियों, रोमनों, यूनानियों और स्कैंडिनेवियाई लोगों के बीच स्वीकृत था। वास्तव में, विश्व के प्राचीन धर्मों का अध्ययन ईसाई इस सिद्धांत को गलत साबित करता है कि केवल यीशु मसीह ने ही जीवन में शाश्वत प्रकाश लाया है और उनके बिना कोई भी स्वर्ग प्राप्त नहीं कर सकता। हो सकता है कि उन्होंने कुछ यहूदी जनजातियों के मन को प्रबुद्ध किया हो जो शास्त्रों में विश्वास नहीं करते थे या उनसे अनभिज्ञ थे। लेकिन, इस शाश्वत प्रकाश को पहली बार जीवन में लाने के संबंध में, हम इसे स्वीकार नहीं कर सकते।
50
हालांकि विभिन्न धर्मों के अधिकांश अनुयायी एक शाश्वत आत्मा में विश्वास करते हैं जो अमर है और मृत्यु के बाद भी विद्यमान रहती है, फिर भी बड़ी संख्या में ऐसे उन्नत विचारक हैं जो इन शास्त्रोक्त कथनों की प्रामाणिकता पर प्रश्न उठाते हैं। स्वतंत्र शोध करने के बाद, वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि आत्मा जैसी कोई चीज नहीं है, या आत्मा शरीर के साथ एकरूप है, या बल का परिणाम है, या शरीर के भौतिक कणों का ही एक हिस्सा है। उनके निष्कर्षों को पुष्ट करने के लिए उनके पास पर्याप्त ठोस तर्क हैं।

इसी प्रकार, वैज्ञानिकों के पास अपने सिद्धांतों को सिद्ध करने के लिए ठोस तर्क हैं। उन्होंने इस महान समस्या का संतोषजनक उत्तर या समाधान खोजने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ी है। मृत्यु के समय मस्तिष्क से निकलने वाले रहस्य को जानने या उसका पता लगाने के लिए हर प्रकार के उत्तम उपकरण आविष्कार किए गए हैं। जानवरों के विच्छेदित मस्तिष्कों का अत्यंत सावधानीपूर्वक अध्ययन किया गया है और बारीकी से देखा गया है ताकि यह पता लगाया जा सके कि मृत्यु के समय मानव शरीर से क्या निकलता है। लेकिन, अफसोस! ये सभी प्रयास या ये सभी मानवीय प्रयास विफल रहे हैं। उस अदृश्य तत्व को पकड़ने या जानवरों के प्रत्यक्ष चुंबकत्व को मानव रूप में प्रकट करने के ये सभी मानवीय प्रयास असफल रहे हैं और इसी कारण आत्मा की खोज करने वाले अनेक लोग अज्ञेयवादियों, नास्तिकों और भौतिकवादियों के निष्कर्षों की ओर अग्रसर हुए हैं।
आत्मा को पकड़ पाने में असमर्थता के कारण कई लोग आत्मा के अस्तित्व को पूरी तरह नकार देते हैं, या मृत्यु के बाद उसके बने रहने से इनकार करते

हैं; वे ऐसी किसी भी चीज़ पर विश्वास नहीं कर सकते जो इंद्रियों की दृष्टि से परे हो। कोई भी तर्क उन्हें मना नहीं सकता। वे पदार्थ से बुद्धि निकालने का प्रयास करते हैं। वे कहते हैं कि बुद्धि, चेतना और मन भौतिक शरीर द्वारा उत्पन्न होते हैं। उनका मानना है कि चेतना और मन का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है और वे शरीर के बने रहने तक ही रहते हैं और शरीर के नष्ट होने के बाद कुछ भी शेष नहीं रहता, क्योंकि वे अपनी इंद्रियों से उस बुद्धिमान आत्मा को नहीं देख सकते जो शरीर से निकल जाती है। लेकिन, साथ ही, कोई भी यह सिद्ध नहीं कर सकता कि पदार्थ और प्रकृति की निर्जीव शक्तियों ने कभी चेतना या बुद्धि उत्पन्न की हो।
यदि हम आत्मा के अस्तित्व को शरीर से स्वतंत्र या शरीर पर शासन करने वाली तथा शरीर की जैविक क्रियाओं को नियंत्रित करने वाली किसी वस्तु के रूप में नकारते हैं, तो हम तुरंत नैतिक, मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक कठिनाइयों से घिर जाते हैं। शरीर से स्वतंत्र आत्मा के अस्तित्व को नकारने से नैतिक औचित्य नष्ट हो जाएगा, मानो हम केवल मशीनें हों।
यदि हम यह कहें कि हमारा जीवन मोमबत्ती की बुझने जैसी क्षणभंगुरता है, तो फिर हमें जीवनयापन के लिए संघर्ष क्यों करना चाहिए और कष्टों, दुखों और पीड़ाओं में क्यों उलझना चाहिए? यदि इस स्थूल शरीर के नश्वर होने के बाद हमारा अस्तित्व ही न रहे, तो सदाचारी जीवन जीने का क्या लाभ?

51 लोग चले गए? हमें अपने पड़ोसियों को मारकर उनसे सब कुछ छीनकर खुद को समृद्ध क्यों नहीं करना चाहिए? आने वाली पीढ़ियाँ अपना ख्याल खुद रखेंगी। हर व्यक्ति बेहद स्वार्थी होगा और नैतिकता का कोई मापदंड नहीं होगा।
यदि हम शरीर के मरने के बाद भी रहने वाली आत्मा के अस्तित्व को नकार दें, तो चरित्र निर्माण का क्या लाभ होगा, यदि सभी मनुष्य अंततः अमर हो जाएंगे? शिक्षा प्राप्त करने में किए गए सभी प्रयास व्यर्थ हो जाएंगे। त्याग और आत्म-बलिदान से उत्पन्न पत्नी और बच्चों के प्रति प्रेम का पूर्ण विकास नहीं हो पाएगा। क्या हम व्यर्थ के दांव-पेंचों से एक लंबा और निराशाजनक खेल खेल रहे हैं, यदि हमारी सभी इच्छाएँ निरर्थक ही होंगी? क्या यह संभव है? नहीं, क्योंकि यदि ऐसा है, तो हममें से प्रत्येक को आत्महत्या कर लेनी चाहिए और इन सभी कष्टों और दुखों से मुक्ति पा लेनी चाहिए। हमें सभी शास्त्रों को समुद्र में फेंक देना चाहिए, सभी मंदिरों और गिरजाघरों को

ध्वस्त कर देना चाहिए और इंद्रिय जगत में पशुओं की तरह जीवन व्यतीत करना चाहिए। यदि हमारी आत्मा अमर नहीं है, या यदि हम आत्मा के अस्तित्व को नकार दें, तो सदाचारी जीवन जीने या अपने बच्चों को धार्मिक शिक्षा देने का कोई कारण नहीं होगा।
जो लोग शरीर से स्वतंत्र आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते, वे इस नैतिक दुविधा को कभी दूर नहीं कर पाएंगे। मनोविज्ञान में भी, यदि हम आत्मा के अस्तित्व को नकारते हैं, तो हमें इसी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। आत्मा या मन को मस्तिष्क की क्रियाओं का परिणाम मानने वाला पुराना भौतिकवादी सिद्धांत अब पुराना हो चुका है। यह अब समझदार लोगों के लिए नहीं है। साथ ही, यदि हम आत्मा के अस्तित्व को नकारते हैं, तो हम इस आत्म-चेतना और मस्तिष्क की निरंतर क्रियाशील प्रक्रियाओं की व्याख्या नहीं कर पाएंगे, जिन्हें इंद्रिय-आधारित विचारों और चिंतन में रूपांतरित किया जा सकता है। हम यह भी नहीं समझा पाएंगे कि किस शक्ति से वे एक सामंजस्यपूर्ण इकाई में विकसित होते हैं, किस शक्ति से वे स्मृति के रूप में आते हैं, और कौन सी शक्ति मस्तिष्क की कोशिकाओं पर कार्य करके व्यक्ति के अहंकार की सचेत पहचान उत्पन्न करती है। हमारे पास दृष्टि, श्रवण और स्पर्श आदि इंद्रियां हैं। क्या आकाश के कंपन इनमें से किसी भी इंद्रिय को उत्पन्न कर सकते हैं? क्या कोई सम्मोहन शक्ति देखने या सुनने की इंद्रिय उत्पन्न कर सकती है? यह बिल्कुल असंभव है। आज तक किसी ने ऐसा नहीं देखा है। इन और कई अन्य मनोवैज्ञानिक समस्याओं को दूर करना होगा।
आत्मचेतना का सृजन कभी भी आकाश या पदार्थ के संयोजन से या विद्युत से नहीं हुआ है। जब हम इस संपूर्ण पदार्थ का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करते हैं, तो हमें क्या निष्कर्ष निकलता है? मनोवैज्ञानिक शोध हमें मूलभूत सिद्धांतों, पदार्थ, ज्ञान और चेतना की ओर ले जाते हैं। संपूर्ण ब्रह्मांड को इन महान सिद्धांतों में विभाजित किया जा सकता है: प्रथम, पदार्थ, फिर ज्ञान या बल, और तृतीय, चेतना। इनमें से पदार्थ अपरिवर्तनीय या अमर है, और मनोवैज्ञानिक शोधों ने यह भी सिद्ध किया है कि पदार्थ का सृजन न तो किसी ने किया है और न ही बलों का। पदार्थ अविनाशी और सृजनहीन है, और वे संरक्षित रहते हैं और निरंतर विद्यमान बने रहते हैं। यदि पदार्थ और बलों का यह संरक्षण सत्य है, तो

52 हम स्वाभाविक रूप से पूछते हैं कि तीसरा सिद्धांत, जिसके द्वारा ही सभी ज्ञान का बोध होता है, संरक्षित क्यों नहीं है? यदि पदार्थ और ज्ञान संरक्षित हैं और यदि वे अजन्मे और अविनाशी हैं, तो आप इसे कैसे जानते हैं? आप इसे अपनी चेतना और बुद्धि से जानते हैं। क्या आप इसे किसी अन्य शक्ति से जान सकते हैं? पदार्थ और शक्ति का बोध आपकी अपनी चेतना पर निर्भर करता है, और यदि ये दोनों संरक्षित हैं, तो आपकी अपनी चेतना संरक्षित क्यों नहीं होगी? यदि पदार्थ और ज्ञान अजन्मे और अविनाशी हैं, तो हम यह कैसे सिद्ध कर सकते हैं कि आपकी चेतना सृजनीय और नश्वर है? आपको यह ज्ञान कहाँ से मिला? यदि आपके पास चेतना और बुद्धि नहीं थी, तो आपको यह कैसे पता चला?
यहां हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पदार्थ और ज्ञान ब्रह्मांड का केवल आधा हिस्सा हैं, और दूसरा आधा हिस्सा आत्मिक जगत है। यदि हम इस समय पूरी तरह से अचेतन होते, तो इस कमरे का अस्तित्व हमारे लिए कुछ भी नहीं होता। हम इसे अपनी चेतना के माध्यम से जानते हैं। पदार्थ का अस्तित्व और ज्ञान का अस्तित्व व्यक्ति की चेतना पर निर्भर करता है। यदि इनमें से एक का संरक्षण होना है, तो दूसरे का भी संरक्षण होना आवश्यक है।
यदि हम ब्रह्मांड की घटनाओं का विश्लेषण करें और उन सिद्धांतों तक पहुँचें जिन्होंने इन घटनाओं को जन्म दिया है, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पदार्थ और ज्ञान दोनों संरक्षित हैं, और यदि वे संरक्षित हैं, तो हमारी बुद्धि और चेतना भी संरक्षित हैं। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए, हमें शरीर से स्वतंत्र आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करना होगा, जो हमारे भीतर चेतना और बुद्धि का स्रोत है, जिसके द्वारा हम अपने अस्तित्व और ब्रह्मांड की अन्य वस्तुओं के अस्तित्व को जानते हैं। आत्मा पदार्थ से उत्पन्न नहीं हो सकती, क्योंकि पदार्थ केवल पदार्थ ही उत्पन्न करता है। न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण की खोज की, लेकिन गुरुत्वाकर्षण ने कभी न्यूटन की खोज नहीं की।
यदि आप अपने अस्तित्व की स्थायित्वता में विश्वास रखते हैं, तो आप स्वयं शरीर के साथ एक हैं, और आप स्वयं को शरीर के रूप में देखते हैं। लेकिन यह स्पष्ट है कि शरीर निरंतर बदलता रहता है। तो फिर हमारे शरीरों में वह स्थायित्व कहाँ है? यह भौतिक रूप या स्थूल शरीर नष्ट हो जाएगा। तो फिर हमारा स्थायित्व कहाँ होगा? शरीर में नहीं, बल्कि आत्मा में। यह "मैं" की भावना है, जो इस शरीर के नष्ट होने के बाद भी विद्यमान रहेगी।

आत्मा के अस्तित्व से संबंधित इस समस्या के समाधान को समझने के बाद, हम यह प्रश्न करते हैं: यदि आत्मा का अस्तित्व बना रहता है, तो उसके बाद उसका क्या होगा और उसका भाग्य क्या होगा? आधुनिक विज्ञान आत्मा के भाग्य के प्रश्न का उत्तर देने में हमारी सहायता नहीं करता। यह प्रश्न अत्यंत गहन है। हम केवल उन आधारों के आधार पर अनुमान लगा सकते हैं जिन पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है। इसका उत्तर हमें वेदांत से मिलता है, जो सर्वव्यापी और भेद-मुक्त है।
53
यह हमें बताता है कि आत्मा, जो स्थूल भौतिक रूप का निर्माण करती है, शरीर से अविभाज्य है और शरीर से स्वतंत्र रूप से विद्यमान हो सकती है। इसमें इंद्रिय शक्तियाँ, जीवन शक्ति, मन और बुद्धि के साथ-साथ शारीरिक और मानसिक गतिविधियों के प्रभाव भी होते हैं, और यही आत्मा माता-पिता के माध्यम से शरीर का निर्माण करती है।
अब एक सवाल उठ सकता है: यदि आत्मा मृत्यु के बाद भी विद्यमान रहती है, तो क्या वह अपनी विशिष्टता खो देती है? वेदांत से हमें इसका उत्तर मिलता है कि वह अपनी विशिष्टता बनाए रखती है। उसे याद रहता है कि वह कहाँ थी, उसके माता-पिता कौन थे, आदि।
आधुनिक अध्यात्मवाद और मनोवैज्ञानिक शोधों के परिणामों ने हमें मृत्यु के बाद आत्मा के अस्तित्व का पर्याप्त प्रमाण दिया है। जो लोग आध्यात्मिक जीवन में अत्यधिक उन्नत होते हैं, वे सांसारिक क्षेत्रों से अपने संबंधों की परवाह नहीं करते, बल्कि उनसे कहीं ऊपर उठ जाते हैं। आत्माएं अपनी विशिष्टता बनाए रखती हैं और किसी भी लोक में जा सकती हैं। वे स्वर्गदूतों के पास और स्वर्ग में भी जा सकती हैं।
वेदांत के अनुसार, एक नहीं बल्कि अनेक स्वर्ग हैं। स्वर्ग से हमारा तात्पर्य जीवन के उस क्षेत्र से है जहाँ हम जीवन के सुखों का आनंद लेने जाते हैं। जो लोग उच्च आध्यात्मिक जीवन की आकांक्षा रखते हैं, वे उच्चतर चीजों की खोज करेंगे। वे अनंत सत्ता में विलीन होने तक निरंतर आगे बढ़ते रहेंगे।
ईसाई और मुस्लिम धर्म में स्वर्ग और नरक की अवधारणा एक जैसी है। उनके अनुसार स्वर्ग धर्मी लोगों के लिए शाश्वत सुख और गौरव का स्थान है, जबकि

नरक दुष्टों के लिए शाश्वत दंड का स्थान है। परन्तु वेदांत में आप पाएंगे कि ऐसा नहीं है।
जिन आत्माओं में सांसारिक वस्तुओं की इच्छा होती है, उन्हें पृथ्वी पर आना ही पड़ता है। कुछ आत्माएँ एक निश्चित समय तक, जैसे सौ या हज़ार वर्ष तक, पृथ्वी पर ही रहती हैं। परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं, और जिन आत्माओं में राजा या सम्राट बनने, अपार धन-दौलत, बड़ा परिवार या किसी अन्य प्रकार की महत्वाकांक्षा होती है, उन्हें इस लोक में आना ही पड़ता है। उनका पुनर्जन्म होता है। अतः मनुष्य की आत्मा का भाग्य उसके विचारों, इच्छाओं और प्रवृत्तियों द्वारा निर्धारित होता है। हम अपने विचारों, इच्छाओं और कर्मों से अपना भाग्य स्वयं बनाते हैं। आज हम जो कुछ भी हैं, वह हमारे पिछले जन्मों का फल है। हमारी परिस्थितियों के लिए ईश्वर जिम्मेदार नहीं है। हम स्वयं जिम्मेदार हैं, और यदि हम आत्मा के इस रहस्य को समझ लें, तो हम अपने भविष्य को इस प्रकार संवार सकते हैं कि हम कभी नीचे न गिरें, बल्कि निरंतर उत्थान करते हुए अपने जीवन के लक्ष्य तक पहुँचें।
जो लोग अच्छे कर्म करते हैं और सदाचारी जीवन जीते हैं, वे मानव रूप में अवतरित होकर पुनर्जन्म लेंगे, जब तक कि उनकी आकांक्षाएँ और इच्छाएँ उच्चतर न हो जाएँ। वहीं, जो लोग निम्न प्रवृत्तियों वाले हैं और पूर्ण अज्ञान में मरते हैं, वे मूर्ख बन जाएँगे और कुछ समय तक कष्ट और पीड़ा भोगेंगे, जब तक कि उन्हें उच्चतर ज्ञान प्राप्त न हो जाए। इसलिए हम 54 हमें अपने चरित्र निर्माण और सदाचारी जीवन जीने के लिए अच्छे कर्म करने का भरसक प्रयास करना चाहिए, और तब हम इस जीवन में भी शाश्वत सुख और अमरता का आनंद लेंगे।

55

अध्याय VII

पूर्व-अस्तित्व और पुनर्जन्म
इस जगत में व्यक्तियों के जीवन और मृत्यु से संबंधित शासन व्यवस्था अत्यंत रहस्यमय है। प्राचीन काल से ही समस्त देशों के दार्शनिकों और विचारकों ने प्रकृति के इस महान रहस्य को सुलझाने का प्रयास किया है। बार-बार यह सवाल पूछा जाता है - मनुष्य इस दुनिया में थोड़े समय के लिए ही क्यों आते हैं? कुछ जन्म लेते हैं और कुछ हफ़्तों, कुछ महीनों या कुछ वर्षों में ही इस दुनिया से चले जाते हैं, बिना अपनी सारी इच्छाओं को पूरा करने का मौका पाए, मानो किसी बाहरी शक्ति ने उन्हें अपनी इच्छाओं और अनुभवों को पूरा करने से पहले ही इस दुनिया से विदा कर दिया हो। ऐसा क्यों होता है? कुछ लोग थोड़े समय के लिए ही क्यों आते हैं और कुछ लोग लंबे समय तक क्यों जीते हैं? क्या ये सब संयोगवश होता है? क्या आत्माएँ यहाँ आती हैं और बिना किसी निश्चित उद्देश्य और बिना किसी नियम के आती-जाती हैं? या इन सब के पीछे कोई नियम है? यह सवाल हमारे मन में उठता है और हर व्यक्ति को इस समस्या का हल निकालना होगा, वरना वह संतुष्ट नहीं रह सकता। मन समाधान चाहता है, क्योंकि हमारी प्रवृत्ति जानने की होती है। इसलिए हमें जानना चाहिए और जीवन-मृत्यु की सभी समस्याओं का हल निकालना चाहिए।
जब हम विभिन्न प्रकार के विचारकों की ओर देखते हैं, तो पाते हैं कि एक वर्ग ऐसा है जिसे भौतिकवादी, वैज्ञानिक या अज्ञेयवादी कहा जाता है। वे आत्मा को एक बुद्धिमान, आत्म-जागरूक सत्ता के रूप में मानने से इनकार करते हैं, और हर चीज़ को भौतिक शक्तियों के माध्यम से समझाने का प्रयास करते हैं, जो यांत्रिक नियमों द्वारा संचालित होती हैं। उनमें से कुछ तो यहाँ तक दावा करते हैं कि इस ग्रह पर मनुष्यों का प्रकट होना और विलुप्त होना पदार्थ के किसी आकस्मिक संयोजन या पदार्थ के प्राकृतिक विकास की प्रक्रिया से उत्पन्न होने वाले भौतिक कणों के विघटन का परिणाम मात्र है। उनके अनुसार, आत्मा जैसी कोई चीज़ नहीं है, जीवन का कोई उद्देश्य नहीं है, क्योंकि ये सब आकस्मिक रूप से घटित होते हैं। और मृत्यु के समय मानव शरीर या प्राणियों का यह प्रकट होना समाप्त हो जाता है।

लेकिन यह व्याख्या सत्य की खोज करने वालों को संतुष्ट नहीं करती। प्रश्न अनसुलझे ही रहते हैं। हमारी अंतरात्मा में हम जानते हैं कि यह गलत है, यह सत्य नहीं है, और पदार्थ ने बुद्धि और चेतना उत्पन्न नहीं की है। हम पदार्थ को बुद्धि और चेतना उत्पन्न करते हुए नहीं देखते। किसी भी वैज्ञानिक के लिए यह सिद्ध करना बहुत कठिन होगा कि पदार्थ का संयोजन, या भौतिक कण, जो यांत्रिक नियमों द्वारा नियंत्रित होते हैं, बुद्धि और चेतना उत्पन्न कर सकते हैं। दूसरी ओर, यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि गति
अनुच्छेद 56 गति के सिवा कुछ भी उत्पन्न नहीं करता। परन्तु बुद्धिमान आत्मा या चेतना गति नहीं है; न ही यह गति का परिणाम है, बल्कि यह गति से भिन्न है। यह गति और समस्त क्रियाओं का ज्ञाता है। गति गति के सिवा कुछ भी उत्पन्न नहीं करती। यह उस ज्ञाता को उत्पन्न नहीं करती जिसमें मस्तिष्क की कोशिकाओं की आणविक गतिविधियों को संवेदनाओं, बोधों, विचारों, इच्छाओं और चिंतन में रूपांतरित करने की सामर्थ्य होती है। ये सभी सजीव आत्मा के सजीव गुण हैं जो मन में क्रियाशील होती है। किसी ने यह सिद्ध नहीं किया है कि मस्तिष्क मन या बुद्धि का सृजन करता है, परन्तु इसके विपरीत, विश्व के महान विचारकों ने मन और मस्तिष्क के बीच संबंध के सत्य के रहस्य को समझा है।
उदाहरण के लिए, डॉ. थॉम्पसन ने अपनी पुस्तक 'ब्रेन एंड पर्सनैलिटी' में समझाया है कि मस्तिष्क केवल एक उपकरण है, लेकिन व्यक्तित्व, मन या बुद्धिमान आत्म-जागरूक इकाई मस्तिष्क को प्रभावित करती है। उन्होंने मस्तिष्क की तुलना वायलिन से की। जिस प्रकार वायलिन बिना संगीतकार के संगीत उत्पन्न नहीं कर सकता, उसी प्रकार संगीत वायलिन में नहीं होता, बल्कि संगीतकार के मन में होता है और संगीतकार को तारों पर बजाकर उसे बाहर लाना होता है, जो हमारी आत्मा को छूता है। वायलिन स्वयं ऐसा नहीं कर सकता। इसी प्रकार व्यक्तित्व उस संगीतकार के समान है जो तंत्रिकाओं और मस्तिष्क की कोशिकाओं के तारों पर बाहर से बजा रहा है, मानो उन्हें प्रभावित कर रहा हो और सामंजस्य या असामंजस्य उत्पन्न कर रहा हो। यदि संगीतकार अच्छी तरह से प्रशिक्षित, उन्नत और विकसित नहीं है, तो वह सामंजस्य उत्पन्न करने के बजाय असामंजस्य उत्पन्न करता है, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई बच्चा वायलिन बजाते समय संगीत उत्पन्न करने के बजाय असामंजस्य उत्पन्न करता है, जो कि एक अत्यंत अवांछनीय बात है।

इस प्रकार विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि हमारी आत्मा, जो आत्म-जागरूक सत्ता और विचारक है, मस्तिष्क की कोशिकाओं की गतिविधि का परिणाम नहीं है, बल्कि एक विशिष्ट और अमूर्त सत्ता है। फिर भी, इसमें उन सभी भौतिक शक्तियों को नियंत्रित करने की क्षमता है जो इसके अधीन हैं। यदि हम यह समझ लें कि कोई ऐसी सत्ता है जो हमारा वास्तविक स्वरूप है और जिसमें सभी इच्छाएँ, विचार और अवधारणाएँ समाहित हैं, तो हम जानना चाहते हैं: वह आत्म-जागरूक सत्ता क्या है? वह कहाँ विद्यमान है? वह इस भौतिक शरीर और जीव का निर्माण कैसे करती है?
सबसे पहले, यदि हम प्रकृति का अध्ययन करें, तो हम पाते हैं कि कारण-कार्य का नियम अटल और सर्वशक्तिमान है। कारण और प्रभाव का नियम इस ब्रह्मांड में हर चीज को नियंत्रित करता है। प्रत्येक प्रभाव का एक कारण अवश्य होता है। यदि हम कारण-कार्य के नियम को नकारते हैं, तो हम न केवल प्रकृति के सत्य को नकारते हैं, बल्कि आधुनिक विज्ञान के उस मूलभूत सिद्धांत को भी नष्ट कर देते हैं कि कुछ भी शून्य से उत्पन्न नहीं हो सकता। इस सिद्धांत को कपिल के सांख्य दर्शन ने अच्छी तरह से आगे बढ़ाया है। वास्तव में, अस्तित्वहीनता अस्तित्व को उत्पन्न नहीं कर सकती, न ही अस्तित्व अस्तित्वहीनता से उत्पन्न हो सकता है। यदि हम आज अस्तित्व में हैं, तो हमारा कोई कारण अवश्य रहा होगा। वह कारण कुछ है, न कि अस्तित्वहीनता। दूसरे शब्दों में, हम शून्य से उत्पन्न नहीं हुए हैं। इस सत्य को जीवन और मृत्यु की घटनाओं पर लागू करते हुए, हम समझते हैं कि इस धरातल पर मनुष्य और पशुओं की सभी उपस्थिति के निश्चित कारण हैं। अब तक यह समझने के बाद, हम उस प्रकार की उत्पत्ति का पता लगाना चाहते हैं।
57. वह कारण क्या है जो इन सभी मानवीय गतिविधियों या किसी बुद्धिमान प्राणी की गतिविधियों को उत्पन्न करता है? क्या वह कारण हमारे बाहर है, या हमारे भीतर है? कारण और प्रभाव के संबंध की यह एक और स्पष्ट समझ है जो हमारे सामने आने वाली किसी भी समस्या के उचित समाधान के लिए बिल्कुल आवश्यक है।
अंतिम वैज्ञानिक सत्य को स्थापित करने की विधियों के विस्तृत विवरण में जाने के बजाय, आइए हम यह मान लें कि यह वैज्ञानिक सत्य कि किसी वस्तु का कारण वस्तु के बाहर नहीं, बल्कि वस्तु के भीतर ही होता है, वैज्ञानिक और सही है। लेकिन यह एक तथ्य है कि वृक्ष का कारण वृक्ष के बाहर नहीं, बल्कि

वृक्ष के भीतर ही होता है; मनुष्य का कारण मनुष्य के बाहर नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतर ही होता है। इसलिए हमें कारण को अपने से बाहर खोजने की आवश्यकता नहीं है। दूसरे शब्दों में, कारण प्रभाव की अप्रकट अवस्था है और प्रभाव कारण की प्रकट अवस्था है। संपूर्ण वृक्ष बीज में अदृश्य अवस्था या संभाव्य रूप में विद्यमान रहता है। वातावरण केवल अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करता है, जिनके अंतर्गत बीज में निहित तत्व वास्तविक, साकार और प्रकट हो जाता है। वातावरण बीज को ऐसी कोई शक्ति प्रदान नहीं करता जो उसमें पहले से मौजूद न हो। वातावरण केवल उपयुक्त परिस्थितियाँ प्रदान करता है। यदि हम इसे स्पष्ट रूप से समझ लें, तो हम पाते हैं कि वातावरण सृजन नहीं करता, बल्कि सृजनात्मक शक्ति स्वयं बीज में निहित होती है, और वह बीज तब तक कारण-कार्य अवस्था को प्रकट नहीं करता, जब तक कि वह वृक्ष का रूप धारण नहीं कर लेता।
अब इस सत्य को मनुष्य पर, या उसकी अभिव्यक्ति पर लागू करें। यदि कारण हमारे भीतर है, तो वह कारण क्या है? वह कारण कुछ ऐसा होना चाहिए जिसमें वे सभी विशेषताएँ समाहित हों जो मनुष्य अपने जीवनकाल में प्रकट कर सकता है। कारण मन, विचार, इच्छा और बुद्धि की सभी शक्तियों या संभाव्यताओं को धारण करता है, ठीक उसी प्रकार जैसे बलूत के पेड़ के बीज में बलूत के पेड़ की सभी विशेषताएँ समाहित होती हैं। बलूत के पेड़ के बीज में जो स्थितियाँ या शक्तियाँ सुप्त अवस्था में होती हैं, वे वातावरण से परिवर्तित नहीं हो सकतीं, बल्कि वे बलूत के पेड़ में प्रकट होंगी, न कि शाहबलूत के पेड़ में। यह एक वास्तविक तथ्य है। यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुका है। इसलिए मनुष्य की कारण अवस्था भविष्य में प्रकट होगी और वह कारण अवस्था अदृश्य है, ठीक उसी प्रकार जैसे हम बीज में पहले से मौजूद वृक्ष की सभी सुप्त अवस्थाओं को नहीं देख पाते।
उदाहरण के लिए, बरगद के पेड़ का बीज सरसों के दाने जितना छोटा होता है, और यदि इसे आपको दिया जाए, तो आप नहीं जान पाएंगे कि यह क्या है, लेकिन इसमें एक विशाल बरगद का पेड़ समाहित है जो एक मील की परिधि वाले क्षेत्र को कवर करेगा और संभवतः एक ही पेड़ के पचहत्तर या सौ तने पैदा करेगा।
1. अब हम जानते हैं कि हमारे शारीरिक लक्षणों जैसे बालों, आँखों आदि का रंग, का कारण इसमें निहित है:

हमें अपने माता-पिता से जीन विरासत में मिलते हैं। लेकिन जीन आज भी मानसिक लक्षणों जैसे कि... की व्याख्या नहीं कर सकते।
असाधारण बुद्धिमत्ता (आइंस्टीन के बारे में सोचें), असाधारण संगीत या कलात्मक प्रतिभाएं, जो मौजूद हैं
बहुत से लोग अपने बचपन से ही। जैसा कि हमने पृष्ठ 47 पर फुटनोट में चर्चा की है, ये
प्रतिभाशाली व्यक्तियों के मानसिक गुणों की उचित व्याख्या केवल पुनर्जन्म की घटना के माध्यम से ही की जा सकती है।
इस और अगले कुछ अनुच्छेदों में स्वामी अभेदानंद विशेष रूप से इन बातों का उल्लेख कर रहे हैं।
जब वह "मन की शक्तियों" के बारे में बात करता है, तो वह उन मानसिक लक्षणों का जिक्र करता है जो आनुवंशिक रूप से विरासत में नहीं मिलते हैं।
विचार, इच्छा और बुद्धि के बारे में। अधिक जानकारी के लिए कृपया उनकी चर्चा देखें।
अध्याय 5 – आत्मा का पुनर्जन्म। (पुलकित माथुर द्वारा लिखित फुटनोट, द स्पिरिचुअल बी)
कलकत्ता के पास वनस्पति उद्यान में एक ऐसा ही वृक्ष है। एक ही वृक्ष एक मील के क्षेत्र में फैला हुआ है और उसके पचहत्तर तने हैं। उसकी जड़ें निकलती हैं जो आगे चलकर वृक्ष के तने में विकसित होती हैं। वह विशाल वृक्ष, जो मारिपोसा उद्यान के विशाल वृक्षों की तरह हजारों वर्षों तक जीवित रहेगा, उसी बीज में समाहित है। कोई अन्य बीज ऐसा वृक्ष उत्पन्न नहीं कर सकता। बरगद के वृक्ष के सभी गुण उस बीज में समाहित हैं।
इसी प्रकार, अदृश्य रोगाणु, जिसे आप अमीबा, जैव-प्लाज्मा या प्रोटोप्लाज्मा कह सकते हैं और जो बाद में मनुष्य के रूप में प्रकट होगा, उसमें उस मनुष्य की सभी क्षमताएं अदृश्य अवस्था में समाहित होती हैं। यदि हम इसे नकारते हैं, तो हम यह भ्रम करने का जोखिम उठाते हैं कि कुछ भी नहीं से कुछ उत्पन्न हुआ है। लेकिन वैज्ञानिक सत्य यह है कि अंत में जो कुछ भी अस्तित्व में आता है, वह आरंभ में भी अस्तित्व में था। यदि अंत में हमें अब्राहम लिंकन, शेक्सपियर या प्लेटो जैसा कोई मनुष्य मिलता है, तो वह रोगाणु या बीज रूप जिसने उस विशेष अभिव्यक्ति को जन्म दिया है, उसमें वे सभी शक्तियां अदृश्य अवस्था में समाहित थीं। आप इसे रोगाणु कह सकते हैं,

या आप इसे किसी अन्य नाम से पुकार सकते हैं। नामों से कोई खास फर्क नहीं पड़ता। लाइबनिज़ ने इसे मोनाड कहा। वैज्ञानिक इसे जीवन का रोगाणु कहते हैं। वेदांत दर्शन इसे सूक्ष्म शरीर कहता है। सूक्ष्म शरीर वे अदृश्य रोगाणु या नाभिक हैं जिनमें मन, बुद्धि, तर्क शक्ति, सोचने की शक्ति, इच्छा शक्ति और सभी इंद्रियां, अर्थात् देखने, सुनने, सूंघने, चखने, छूने आदि की शक्तियां समाहित होती हैं। ये सभी शक्तियाँ जीवन के बीज में विद्यमान हैं। इसमें पूर्व-उत्पत्ति के निशान भी समाहित हैं, और वे निशान उस पदार्थ में समाहित हैं। वह पदार्थ ईथरीय या विद्युतीय है, अर्थात् पदार्थ के सूक्ष्म कण जो उस बल द्वारा एक साथ बंधे होते हैं जिसे जीवन शक्ति या प्राणिक ऊर्जा कहा जाता है।
अब यही सूक्ष्म जीव वास्तविक मनुष्य है। यह मानव शरीर के रूप में प्रकट होता है, जिसे यह स्वयं बनाता है और उसमें रहता है। जैसे सीप या केकड़ा अपने रहने के लिए खोल बनाता है, वैसे ही जीवन का यह बीज या व्यक्ति का सूक्ष्म शरीर, चाहे वह मनुष्य हो या पशु, अपनी इच्छाओं या प्रवृत्तियों के अनुसार ही रूप धारण करता है। मानव जीवन का बीज मानव शरीर बनाता है, और यदि वह किसी विशेष पशु रूप में रहना चाहता है, तो वह उस रूप को धारण कर लेता है। इसका कोई निश्चित रूप नहीं है, बल्कि यह कोई भी रूप धारण कर सकता है। इस सूक्ष्म शरीर में सब कुछ समाहित है। इसलिए हमें बाहर से कुछ भी प्राप्त नहीं होता। यह पहले से ही मौजूद है। इसमें अनंत क्षमताएं और अनंत संभावनाएं हैं।
मृत्यु के समय, जीवन का मूल तत्व अपनी सभी शक्तियों और सामर्थ्यों को समेट लेता है और ये सभी एक केंद्रक में समाहित हो जाती हैं। वह केंद्रक जीवन, मन, इंद्रियों की शक्तियाँ और व्यक्ति द्वारा संचित सभी छापों और अनुभवों को धारण कर लेता है। फिर, समय के साथ, जब अनुकूल परिस्थितियाँ आती हैं, तो यह एक नया रूप धारण कर लेता है।

59
माता-पिता तो बस वे मुख्य माध्यम हैं जिनके द्वारा जीवन के ये बीज, या सूक्ष्म शरीर, प्रकृति के नियमों का पालन करते हुए मनुष्य के निर्माण के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ पाते हैं। माता-पिता आत्मा का सृजन नहीं करते। वास्तव में, माता-पिता अपनी इच्छा से बच्चे को जन्म नहीं दे सकते। यह

बिल्कुल असंभव है। जब तक आत्मा स्वयं उनके पास आकर बीज का पोषण न करे, तब तक यह असंभव है।
ये सूक्ष्म शरीर जल की बूंदों के समान हैं। जैसे जल की बूंद सागर में जल के रूप में रहती है, वैसे ही वह ऊपर उठकर बादल में वाष्प रूप में अदृश्य हो जाती है और फिर वर्षा की बूंद के रूप में नीचे आती है। फिर वह कीचड़ में रह सकती है, या ठोस पदार्थ में जम सकती है, या बर्फ के टुकड़े के रूप में जम सकती है। लेकिन वह कभी नष्ट नहीं होती। वह अदृश्य या दृश्य हो सकती है। इन स्थितियों से जल की बूंद में कोई परिवर्तन नहीं होता। वह विद्यमान रहती है और यह सूक्ष्म शरीर की जल की बूंद अनादि काल में शाश्वत जीवन के सागर में उत्पन्न होती है और बुद्धि के रूप में परम आत्मा का प्रतिबिंब धारण करती है। वह इस पृथ्वी पर प्रकट हो सकती है, या किसी अन्य ग्रह पर जा सकती है। उसमें प्रकाश की गति से यात्रा करने की शक्ति है। वह आकाश की तरंगों या कंपनों के साथ प्रकाश के मार्ग का अनुसरण करते हुए एक ग्रह से दूसरे ग्रह तक जा सकती है। वह पल भर में प्रकट हो सकती है। उसमें ऐसी शक्ति है। और यह सूक्ष्म शरीर इस लोक में मनुष्य रूप में रह सकता है। मृत्यु के बाद, यह स्वर्ग या किसी अन्य ग्रह पर जा सकता है, या उपयुक्त परिस्थितियों और वातावरण मिलने तक अदृश्य अवस्था में रह सकता है। फिर यह उनकी इच्छाओं के अनुसार गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव में आ जाता है।
यह पूरी प्रक्रिया एक नियम द्वारा संचालित होती है, और इस नियम को पुनर्जन्म का नियम या सूक्ष्म रूप का स्थूल भौतिक रूप में पुन: प्रकट होना कहते हैं। यह नियम अटल है। चाहे हम कुछ भी करना चाहें, या चाहे हम इसके अस्तित्व को स्वीकार करें या न करें, यह नियम अपने आप ही लागू होता है। जिन शक्तियों ने हमें इस बार यहाँ लाया है, वही हमें फिर से यहाँ लाएंगी। इसे कौन रोक सकता है? आपकी इच्छाशक्ति या मेरी इच्छाशक्ति भी इसे तब तक नहीं रोक पाएगी जब तक हम इस नियम को समझ नहीं लेते, इससे आगे नहीं बढ़ जाते और इससे परे नहीं चले जाते। इसलिए हम सोच सकते हैं कि हम इसे नकारते हैं या ऐसी बातों पर विश्वास नहीं करना चाहते। खैर, अज्ञानी मूर्ख कह सकता है कि हम गुरुत्वाकर्षण में विश्वास नहीं करते और इसके अस्तित्व को नकारते हैं, लेकिन फिर भी उसका पूरा अस्तित्व गुरुत्वाकर्षण बल से बंधा हुआ है। वह इसके बिना जीवित नहीं रह सकता। यदि गुरुत्वाकर्षण बल न होता तो उसके शरीर के अणु बिखर जाते। यदि गुरुत्वाकर्षण बल उसे बांधे न रखता तो वह पृथ्वी की

सतह पर जीवित नहीं रह सकता। फिर भी वह इसे नकार सकता है। लेकिन उनका इनकार निराधार है और केवल उनकी अज्ञानता को दर्शाता है कि वे कानून को नहीं समझते। ठीक उसी तरह, जो कोई भी पुनर्जन्म को नकारता है, वह अपनी अज्ञानता को दर्शाता है, क्योंकि वह कानून को नहीं जानता।
जो लोग पुनर्जन्म में विश्वास नहीं करते, वे एक जन्म के सिद्धांत में विश्वास करते हैं। दो महान धर्म, यहूदी धर्म, जिसकी शाखाएँ ईसाई धर्म और इस्लाम हैं, और पारसी धर्म, एक जन्म के सिद्धांत में अधिक विश्वास रखते हैं, और सभी असमानताओं और विविधताओं की व्याख्या करने का प्रयास करते हैं। 60 जो हमें अपने बीच मिलते हैं। लेकिन वे सफल नहीं होते। उनका मानना है कि व्यक्तियों की आत्माएं पहली बार शून्य से उत्पन्न हुई हैं, और उनमें से कुछ हमें बताते हैं कि वे हमेशा के लिए विद्यमान रहेंगी। अब, यह कैसे संभव है कि कोई ऐसी वस्तु जिसका एक छोर से आरंभ हो, दूसरे छोर पर हमेशा के लिए विद्यमान रहे? यह बेतुका है। यह बिल्कुल असंभव है। जिसका आरंभ होता है उसका अंत अवश्य होता है। यदि आप मानते हैं कि वे व्यक्तिगत आत्माएं जो पहली बार शून्य से उत्पन्न हुई हैं, हमेशा के लिए जीवित रहेंगी, तो आपको यह स्वीकार करना होगा कि ये आत्माएं शून्य से उत्पन्न नहीं हुई थीं, बल्कि वे पहले से विद्यमान थीं।
उत्पत्ति की पुस्तक के पहले अध्याय में आप पढ़ते हैं कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप में बनाया। दूसरे अध्याय में आप पढ़ते हैं कि उसने मनुष्य को पृथ्वी की धूल से बनाया और उसकी नाक में जीवन की साँस फूँकी। ये दो कथन हैं। प्राचीन काल के फोनीशियन और प्राचीन यहूदियों में दो कथाएँ प्रचलित थीं। उत्पत्ति के लेखक ने इन दोनों कथाओं को स्वीकार किया और उन्हें अध्यायों में एक साथ रखा। लेकिन ये दोनों विचार एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं। आप किसे स्वीकार करेंगे? लेकिन यदि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप में बनाया, तो उसने उसे कैसे बनाया? दूसरे कथन में कहा गया है कि परमेश्वर ने उसे पृथ्वी की धूल से बनाया। लेकिन यह याद रखना चाहिए कि पृथ्वी भौतिक, निर्जीव पदार्थ है, इसलिए यह इस बात की व्याख्या नहीं करता कि जीवन की साँस कैसे अस्तित्व में आई। इन कथनों का अध्ययन करने के बाद हमारे मन में उठने वाली इन सभी कठिनाइयों का समाधान तभी संभव है जब हम यह मान लें कि आत्मा, बुद्धि या चेतना कभी सृजित नहीं हुई, बल्कि शरीर का सृजन या निर्माण विकास की प्रक्रिया के माध्यम से हुआ। जिस प्रकार

प्राण-श्वास का सृजन नहीं हुआ, उसी प्रकार मन और आत्मा का भी सृजन नहीं हुआ, परन्तु आत्मा में भगवान, या परम आत्मा का स्वरूप समाहित है। दूसरे शब्दों में, जैसा कि वेदांत समझाता है, प्राण-श्वास में परम आत्मा का प्रतिबिंब होता है, जो सर्व-बुद्धि है।
हम एक जन्म के सिद्धांत या आत्मा की उत्पत्ति के सिद्धांत से किसी भी बात की व्याख्या नहीं कर सकते, क्योंकि यदि ईश्वर आत्मा की उत्पत्ति शून्य से करते हैं, तो वे इतने विविध चरित्र क्यों बनाते हैं? कुछ आनंद लेने और अपनी प्रतिभा और अद्भुत कौशल दिखाने के लिए जन्म लेते हैं। अन्य केवल अज्ञान और अन्य कमजोरियों को प्रकट करने के लिए ही पैदा होते हैं। आप इन बातों की व्याख्या कैसे कर सकते हैं? एक व्यक्ति के पाँच बच्चे हो सकते हैं। एक हत्यारा हो सकता है, दूसरा प्रतिभाशाली, तीसरा कलाकार, इत्यादि। ये सारी असमानताएँ और विविधताएँ किस कारण से हैं? यदि ईश्वर शरीर के जन्म के समय प्रत्येक को अलग-अलग बनाते हैं, तो इसके लिए कौन जिम्मेदार है? माता-पिता नहीं, बल्कि स्वयं ईश्वर। वे इससे बेहतर क्यों नहीं कर सके? यह प्रश्न हमारे मन में अवश्य उठता है और हमें इसका हल खोजने का प्रयास करना चाहिए। फिर एक और सवाल उठता है: बच्चे जीवन में केवल थोड़े समय के लिए, एक दिन के लिए या कुछ हफ्तों के लिए ही क्यों आते हैं? वे इस विशाल संसार में कुछ भी कमाने या अनुभव प्राप्त करने का अवसर प्राप्त किए बिना ही क्यों चले जाते हैं? इसके लिए कौन जिम्मेदार है और क्या?
उन बच्चों का क्या होगा? एक सिद्धांत यह भी हो सकता है कि वे स्वर्ग जाएंगे और अनंत जीवन का आनंद लेंगे। जो लोग इस कहानी पर विश्वास करते हैं, उनके लिए बेहतर यही है कि वे अपने बच्चों की मृत्यु के लिए प्रार्थना करें, इससे पहले कि वे और कोई नुकसान करें, और भगवान का शुक्र अदा करें कि उनके नन्हे शरीर कब्र में दफन हो गए हैं। अगर मेरे छोटे बच्चे होते और मैं ऐसी बात पर विश्वास करता, तो मैं भी यही करता। उन्हें इन सभी कष्टों और मुसीबतों से क्यों गुजरना चाहिए? अगर बचपन में मरकर सीधे स्वर्ग जाया जा सकता, तो हम जीने की बजाय मरना पसंद करते। इसलिए यह सिद्धांत कुछ भी स्पष्ट नहीं करता, बल्कि हमें बेतुका और तर्कहीन लगता है।
फिर अगर आप नियति और ईश्वर की कृपा के सिद्धांत को मान भी लें, तो उससे भी हमें कोई खास मदद नहीं मिलती। अगर हम इन कामों के लिए पूर्वनियोजित और नियत हैं, और अगर किसी हत्यारे को किसी की हत्या करने के लिए नियत किया गया

62 इस बच्ची की आत्मा अपने पिछले जन्म में एक संगीतकार थी, और अब उसने एक छोटे से मस्तिष्क के साथ एक नया रूप धारण कर लिया है। उसका मस्तिष्क इस तरह के संगीत को समझने के लिए पर्याप्त रूप से विकसित नहीं है, लेकिन संगीतकार मस्तिष्क पर हावी होकर मस्तिष्क की सभी नसों और तंत्रिका कोशिकाओं को नियंत्रित कर रही है और इस अद्भुत संगीत की रचना कर रही है। यही एकमात्र तर्कसंगत व्याख्या है।
यदि हम आत्मा के पूर्व-अस्तित्व को नकारते हैं, तो हम अमरता की व्याख्या नहीं कर सकते। अमरता का अर्थ यह नहीं है कि इसका एक छोर आरंभ है और दूसरा छोर अनंत है। पूर्व-अस्तित्व अतीत में जीवन की निरंतरता की व्याख्या करता है, और अमरता भविष्य में जीवन की निरंतरता की व्याख्या करती है। अमरता का अर्थ है शाश्वत जीवन। आप एक भाग को स्वीकार करके दूसरे भाग को नकार नहीं सकते, क्योंकि दोनों ही अपूर्ण होंगे। अतः पूर्ण आत्मिक जीवन का अर्थ है शाश्वत अतीत और शाश्वत भविष्य। आत्मा का न कभी जन्म हुआ और न ही वह शून्य से सृजित हुई। यह सबसे महान सिद्धांत है और यह संतोषजनक है। यह जानकर सुकून मिलता है कि हम शून्य से अस्तित्व में नहीं आए हैं, बल्कि हमारे पास शुरुआत में ही सब कुछ था। यदि हम ईश्वर की छवि हैं, तो हमारे पास सभी शक्तियाँ हैं। ईश्वर कोई ऐसा पदार्थ नहीं था जो अचानक मशरूम की तरह अस्तित्व में आया हो, बल्कि वह शाश्वत है, और स्वाभाविक रूप से हमारा आत्मिक जीवन भी ईश्वर के जीवन के समान शाश्वत होना चाहिए। वास्तव में, हम ईश्वर के अंश हैं।
इस तरह, अगर हम यह समझ लें कि हम कितने महान, भव्य और सुंदर हैं, तो हमें यह विचार स्वीकार करने की ज़रूरत नहीं है कि मृत्यु के बाद हमारा जीवन समाप्त हो जाएगा। बल्कि, इसके विपरीत, हम कह सकते हैं कि जब तक हमारे भीतर इच्छाएँ हैं और वे इच्छाएँ जो वर्तमान परिस्थितियों में मानवीय स्तर पर पूरी होनी हैं, हम इस स्तर पर वापस आते रहेंगे। अगर हमारी इच्छाएँ बदल जाएँ, तो हम दूसरे स्तरों पर चले जाएँगे। उदाहरण के लिए, अगर मेरी इच्छा माइकल एंजेलो जैसा कलाकार बनने की है और अगर मैं इस जीवन में माइकल एंजेलो नहीं बन पाता, फिर भी मेरी आत्मा में वह इच्छा बनी रहती है, तो क्या आपको लगता है कि वह इच्छा पूरी नहीं होगी या साकार नहीं होगी? उस इच्छा की पूर्ति को कोई नहीं रोक सकता, क्योंकि वह इच्छा मुझे उन उपयुक्त वातावरणों और परिस्थितियों में वापस ले आएगी जहाँ मैं आकर्षित होऊंगा और फिर बचपन से ही कलाकार बनने

की प्रवृत्ति के साथ आगे बढ़ूंगा। मुझे कोई नहीं रोक सकता और जब तक वह इच्छा प्रबल है, मैं आगे बढ़ता रहूंगा। मैं तब तक आगे बढ़ता रहूंगा जब तक मैं एक महान कलाकार नहीं बन जाता। और यही प्रकृति का नियम है। इसलिए, हमारे मन में जो भी इच्छा हो, यदि वह इच्छा प्रबल हो, तो वह इच्छा ही हमारे भविष्य को आकार देगी, हमारी नियति का निर्माण करेगी और हमें उसी के अनुरूप बनाएगी।
यह विचार भगवद् गीता में दिया गया है:
“जीवनकाल में जो भी इच्छा प्रबल होती है, मृत्यु के समय वही प्रबल हो जाती है, और वही इच्छा व्यक्ति के सूक्ष्म शरीर की रचना को आकार देती है और व्यक्ति के भविष्य का निर्धारण करती है।”

1. भगवद् गीता अध्याय 8, श्लोक 6: 63 इससे हमें यह जानने का अवसर मिलता है कि हम भविष्य में क्या बनेंगे। हम अपने विचारों और इच्छाओं से अपना भविष्य बनाएंगे। यदि आप एक महान राजनीतिज्ञ बनना चाहते हैं, तो आप एक महान राजनीतिज्ञ बनेंगे। यदि आप एक महान उद्धारकर्ता बनना चाहते हैं, तो आप एक महान उद्धारकर्ता बनेंगे। यदि आप एक महान कलाकार बनना चाहते हैं, तो आप एक महान कलाकार बनेंगे। वास्तव में, आप शाश्वतता में जीते हैं। निराश न हों। यदि आप इस जीवन में एक महान कलाकार नहीं बन सकते, तो आपके पास सैकड़ों जीवन आने वाले हैं, जब तक कि आपकी वह इच्छा पूरी न हो जाए। और जब इच्छाओं का एक समूह पूरा हो जाता है, तो दूसरा जन्म लेता है। जैसे प्रत्येक आत्मा में अनंत क्षमताएं और संभावनाएं होती हैं, वैसे ही वह अनंत प्रकार से प्रकट हो सकती है। क्योंकि हम सभी शाश्वत हैं और अनंत के अंश हैं।
आत्मा के पूर्व-अस्तित्व और पुनर्जन्म के विचार ने प्लेटो, पाइथागोरस और नव-प्लेटोवादियों जैसे प्राचीन दार्शनिकों और वर्ड्सवर्थ, टेनीसन, वाल्ट व्हिटमैन और अन्य कवियों के बीच जीवन और मृत्यु के प्रश्नों को सुलझाया और समस्याओं का समाधान किया है। वाल्ट व्हिटमैन ने कहा:
“हे जीवन, मैं समझता हूँ कि तुम अनेक मृत्युओं के अवशेष हो। निस्संदेह मैं मर चुका हूँ।
मैंने खुद भी इससे पहले दस हजार बार ऐसा किया है।"
उन्होंने इस सत्य को वेदांत के अध्ययन से सीखा, ठीक वैसे ही जैसे एमर्सन ने पुनर्जन्म के विश्वास को वेदांत के अध्ययन से सीखा। यह भी सच है कि कोई

अन्य दर्शन इस विचार को वेदांत जितना सशक्त रूप से प्रकट नहीं करता। बेशक, प्लेटो और पाइथागोरस ने अपने विचार भारत से फारस और मिस्र के रास्ते प्राप्त किए। हिंदू पृथ्वी पर मानव सभ्यता के आरंभिक काल में ही पूर्व-अस्तित्व और पुनर्जन्म के इस नियम के रहस्य को समझ चुके थे। यह विचार प्रारंभिक ईसाइयों में जस्टिनियन के समय तक फैला, जिन्होंने 638 ईस्वी में कॉन्स्टेंटिनोपल की परिषद में इस विचार में विश्वास करने वाले सभी लोगों को बहिष्कृत कर दिया। उन्होंने कहा:
जो कोई भी आत्मा के पूर्व-अस्तित्व के इस अद्भुत सिद्धांत में विश्वास करता है, उसे ऐसा ही होना चाहिए।
अभिशाप।"
उस समय के चर्चों ने इसे स्वीकार नहीं किया, हालांकि यह पुराने और नए दोनों नियमों में मौजूद है। यह उनके मोक्ष के सिद्धांत का समर्थन नहीं करता। लेकिन रूढ़िवादी लोगों के अलावा, दुनिया भर में लाखों लोग हैं जो इस विचार में सांत्वना पाते हैं, जैसे बौद्ध, जापानी, हिंदू और सभी देशों के कवि और विचारक। इसलिए यह तर्कसंगत समाधान है और यह असमानताओं, विविधताओं और विलक्षण प्रतिभाओं के प्रकट होने के सभी कारणों की व्याख्या करता है। रूढ़िवादी धर्मशास्त्रियों द्वारा प्रतिपादित वंशानुक्रम या एक-जन्म का सिद्धांत, जीवन की समस्या का समाधान नहीं करता।
आपने शायद गौर किया होगा कि कुछ लोग पूर्व-अस्तित्व और पुनर्जन्म के इस सिद्धांत को स्वीकार नहीं कर पाते, क्योंकि उन्हें याद नहीं रहता। वे कहते हैं, अगर हम पहले अस्तित्व में थे, तो हमें अपने कर्म याद क्यों नहीं हैं? क्या आपको याद है कि आपने अपने अतीत में क्या किया था?
64 आपका बचपन? क्या आप कहेंगे कि उस समय आपका अस्तित्व ही नहीं था, क्योंकि आपको याद नहीं है? बिलकुल नहीं। आपने बचपन में क्या किया? आपके जीवन के सारे अनुभव और विवरण आपकी स्मृति से मिट गए हैं, लेकिन उन अनुभवों से आपने जो ज्ञान अर्जित किया है, वह आपके अस्तित्व का अभिन्न अंग है और उसी ने आपको आज जैसा बनाया है। स्मृति अल्पकालिक होती है, और कभी-कभी यह प्रबल होती है और कभी-कभी बहुत कमजोर।
लेकिन आधुनिक अध्यात्मवाद ने इस विषय पर एक अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। यह कहता है कि जो आत्माएं इस दुनिया से विदा हो चुकी हैं, वे अपने रिश्तेदारों को याद रखती हैं, उन परिस्थितियों को याद रखती हैं जिनमें

उनका निधन हुआ। इस प्रकार स्मृति बनी रहती है। सर ओलिवर लॉज के पुत्र रेमंड का उदाहरण लीजिए। उन्हें अपनी मृत्यु की सारी बातें याद थीं, और उन्होंने अपने माता-पिता से संवाद किया और उन्हें सब कुछ बताया। इससे पता चलता है कि हम अपनी स्मृति को बनाए रखते हैं। लेकिन मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र जैसे अंग नष्ट हो जाते हैं। इसलिए स्मृति मस्तिष्क की क्रिया का परिणाम नहीं है, बल्कि यह मन की एक शक्ति है जो तब तक बनी रहती है जब तक मन अस्तित्व में रहता है।
हालांकि, अतीत की यादें इतनी महत्वपूर्ण नहीं होतीं। अगर हम अपने अतीत को याद करते रहें, तो हम अपने वर्तमान का गलत इस्तेमाल कर सकते हैं। इसलिए यह उचित नहीं है। मान लीजिए कोई व्यक्ति अपने अतीत को जानता या समझता है, और जानता है कि उसने बुरे कर्म किए हैं और उसे उनका फल भुगतना पड़ेगा, तो वह लगातार उसी के बारे में सोचता रहेगा। वह सारे अवसर खो देगा और अपने वर्तमान का गलत इस्तेमाल करेगा। वह कोई भी काम ठीक से नहीं कर पाएगा। वह आने वाली विपत्ति से बचने की चिंता में डूबा रहेगा। उसे नींद भी नहीं आएगी और वह ठीक से खाना भी नहीं खा पाएगा। इसलिए वेदांत दर्शन हमें अतीत के बारे में न सोचने बल्कि अपने भविष्य और वर्तमान को संवारने की सलाह देता है, ताकि हम अपने भविष्य को बेहतर बना सकें।
बेशक, अतीत को याद करने का एक तरीका है, क्योंकि जीवन भर के सभी अनुभव हमारे अवचेतन मन में संग्रहित होते हैं, जहाँ ये सभी छापें वर्गीकृत होती हैं। हम उन्हें तब बाहर ला सकते हैं, जब हम अपने दिमाग को उस अनुभव के किसी विशेष भाग पर केंद्रित करें जिसे हम याद रखना चाहते हैं।
ऐसे भी उदाहरण हैं जैसे दो प्रेमी पहली नज़र में ही प्यार में पड़ जाते हैं। ऐसे में हम यह समझा सकते हैं कि ये आत्माएँ पहले भी एक-दूसरे से प्यार कर चुकी थीं, और स्वाभाविक रूप से उन्हें वह याद आता है और वे ऐसा महसूस करते हैं जैसे वे अभी-अभी मिले हों। और प्रेम क्या है? प्रेम का अर्थ कोई जुनून नहीं है। इसका अर्थ है दो आत्माओं का आकर्षण। यह भौतिक स्तर पर नहीं, बल्कि आत्मा के स्तर पर होना चाहिए, क्योंकि प्रेम ही ईश्वर है। यह दिव्य शक्ति है; यह दो आत्माओं का दिव्य आकर्षण है। यदि किसी पुरुष और स्त्री के बीच शुद्ध प्रेम हो, तो वह शुद्ध प्रेम शरीर की मृत्यु के बाद भी उन्हें एक साथ जोड़े रखेगा, क्योंकि शरीर इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता। लेकिन साथ ही हमें यह भी समझना होगा कि

65 याद रखें कि प्रेम पारस्परिक होना चाहिए। यदि पति पत्नी से प्रेम करता है और पत्नी पति से सच्चे और निस्वार्थ भाव से प्रेम करती है, तो वह प्रेम पारस्परिक है। लेकिन यदि आप किसी से प्रेम करते हैं और वह व्यक्ति किसी और से प्रेम करता है, तो दोनों के बीच तब तक कोई पुनर्मिलन नहीं होगा जब तक कि दोनों एक-दूसरे के प्रति आकर्षित न हो जाएं। इसलिए ऐसे प्रेम का विकास करना आवश्यक है जो पारस्परिक हो, और फिर वह प्रेम प्रेमी और प्रेमिका को अनंत काल तक एक साथ जोड़े रखेगा। उसमें कोई वियोग नहीं है। इसलिए आपको अपने प्रिय से बिछड़ने से डरने की आवश्यकता नहीं है, और यदि आपका प्रिय आपके इस लोक से चले जाने के बाद पुनर्जन्म लेता है, तो आप भी पुनर्जन्म लेंगे और अप्रत्याशित रूप से एक साथ मिलेंगे और शुद्ध और दिव्य प्रेम के सुंदर प्रभावों का आनंद लेंगे।
इसलिए, यदि हम इसका ध्यानपूर्वक अध्ययन करें, तो हम देखते हैं कि पूर्व-अस्तित्व और पुनर्जन्म एक दूसरे से जुड़े हुए हैं और वे जीवन और मृत्यु के साथ-साथ अस्तित्व की सभी कठिनाइयों और समस्याओं की व्याख्या करते हैं और यह भी कि हम अपने भाग्य के स्वयं निर्माता हैं।
हमारा वर्तमान जीवन हमारे अतीत का परिणाम है और हमारा भविष्य हमारे वर्तमान का परिणाम होगा। चाहे हमें याद रहे या न रहे, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। हम इस शाश्वत नियम के अधीन हैं। लेकिन कुछ आत्माएँ ऐसी भी हैं जिन्हें याद रहता है। यदि हम अपनी आध्यात्मिक चेतना की ऊँचाई पर पहुँच जाएँ, तो हम अपने अतीत और भविष्य को ऐसे देख सकते हैं मानो वे शाश्वत रूप से वर्तमान हों। इसलिए श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा:
“हे अर्जुन, हम दोनों कई जन्मों से गुजर चुके हैं। तुम उन्हें नहीं जानते।”
लेकिन मुझे वे सब याद हैं।
इसलिए, जो भी व्यक्ति उस अतिचेतना की अवस्था को प्राप्त करता है, उसे एक विशेष दृष्टि प्राप्त हो जाती है। इस दृष्टि के विकास से वह अतीत और भविष्य को देख सकता है और अपने सभी अनुभवों को याद रख सकता है, साथ ही उन सभी अनुभवों को भी याद रख सकता है जो उसने स्वयं किए हैं और जिनसे वह गुजरेगा। और जब वह यह समझ जाता है कि जीवन शाश्वत है, तो वह इस सांसारिक धरातल की असफलताओं और सफलताओं, बीमारियों और कष्टों की चिंता नहीं करता। इस धरातल पर यह जीवन केवल थोड़े समय के लिए है, लेकिन शाश्वत जीवन के

दृष्टिकोण से हम कभी जन्म नहीं लेते और न ही कभी मरने वाले हैं, क्योंकि हम जन्म रहित, मृत्यु रहित, शाश्वत, अमर हैं और उस अनंत आत्मा का अंश हैं जिसकी विभिन्न जातियों में अलग-अलग नामों से पूजा की जाती है।

1. भगवत गीता अध्याय 4, श्लोक 5. 66

अध्याय आठ

पूर्व-अस्तित्व और अमरता
वेदांत दर्शन और धर्म के मूलभूत सिद्धांतों में से एक है मानव आत्मा की अमरता। वेदांत की शिक्षाओं के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा स्वभाव से अमर है। नैतिक दृष्टि से चाहे वह कितनी भी पापी प्रतीत हो, शरीर की मृत्यु के बाद भी उसका अस्तित्व बना रहता है। उसे नष्ट या मिटाया नहीं जा सकता। उसका अस्तित्व कभी समाप्त नहीं हो सकता।
इस मामले में वेदांत धर्म उन द्वैतवादी धर्मों से भिन्न है, जो मानते हैं कि अमर जीवन केवल कुछ चुने हुए लोगों को ही ईश्वर के विशेष उपहार के रूप में प्राप्त होता है, जबकि अन्य लोग नष्ट हो जाते हैं। कई रूढ़िवादी ईसाई धर्मशास्त्री मानते हैं कि मृत्यु के बाद अनंत भविष्य में निरंतर जीवन एक प्राकृतिक उपहार नहीं, बल्कि एक विशेष उपहार है, जो इस जीवन के उचित उपयोग पर निर्भर करता है। उनका मानना है कि अमरता पुण्य कर्मों, अच्छे कार्यों, नैतिक जीवन या मसीह में आस्था का पुरस्कार है। यहाँ हम पूछ सकते हैं कि अमरता का उपहार प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को नैतिक रूप से कितने उच्च स्तर का होना चाहिए, यह कौन तय करेगा?
यदि हम बारीकी से जांच करें तो पाएंगे कि सशर्त अमरता का यह सिद्धांत तर्कसंगत आधार पर टिका नहीं है। यह ईश्वर, दयालु पिता को पक्षपाती और अन्यायपूर्ण बना देता है। हम यह कैसे कल्पना कर सकते हैं कि एक न्यायप्रिय, निष्पक्ष और दयालु पिता अपने कुछ बच्चों को अमरता प्रदान करेगा और बाकी को केवल उनके अनैतिक कार्यों या गलतियों के कारण नष्ट होने देगा?
वेदांत धर्म सशर्त अमरता के इस सिद्धांत का प्रचार नहीं करता; बल्कि इसके विपरीत, यह कहता है कि अमर जीवन किसी श्रेष्ठ सत्ता का पुरस्कार या उपहार नहीं हो सकता, क्योंकि वह पुरस्कार या दंड हमारे अपने कर्मों का ही परिणाम है। चूंकि प्रत्येक मानवीय क्रिया समय और स्थान से सीमित है, और फलस्वरूप शाश्वत नहीं है, इसलिए वह अमर जीवन के रूप में शाश्वत प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सकती। मन या शरीर की कोई भी मानवीय क्रिया, चाहे वह कितनी भी अच्छी या पुण्यमय क्यों न हो, समय या स्थान से अप्रतिबंधित शाश्वत प्रभाव उत्पन्न

नहीं कर सकती। ऐसा करना कारण और क्रम के नियम के विरुद्ध होगा, जो प्रत्येक प्रभाव या परिणाम को उसके कारण के समान बनाता है, चाहे वह प्रकृति में हो या गुण में।
एक और महत्वपूर्ण बिंदु है जिस पर वेदांत में अमरता की अवधारणा ईसाई धर्म से भिन्न है। ईसाई धर्म, जन्म के समय व्यक्तिगत आत्मा की विशेष रचना के सिद्धांत में विश्वास करते हुए, जन्म से पहले मानव आत्मा के अस्तित्व को नकारता है।
शरीर के जन्म की बात को तो माना ही जाता है, लेकिन मृत्यु के बाद आत्मा के शाश्वत भविष्य में बने रहने की बात भी स्वीकार की जाती है। यह सिद्धांत भी न तो तर्कसंगत आधार पर टिका है और न ही प्रकृति के किसी तथ्य से समर्थित है, क्योंकि समय में आरंभ होने वाली किसी वस्तु का अनंत काल तक बने रहना असंभव है। किसी ने भी ऐसी किसी वस्तु को न तो देखा है और न ही सुना है जो किसी निश्चित समय पर अस्तित्व में आई हो और भविष्य में अनंत काल तक विद्यमान हो। क्या हम एक ऐसी छड़ी की कल्पना कर सकते हैं जिसका एक सिरा हमारे हाथ में हो और दूसरा सिरा अनंत और असीमित हो? नहीं, यह असंभव है। हम ऐसी किसी वस्तु की कल्पना नहीं कर सकते जिसका एक सिरा समय या स्थान में आरंभ या सीमा हो और दूसरा सिरा समय या स्थान से असीमित हो। जब हम इस प्रकार की किसी सांसारिक वस्तु या भौतिक वस्तु की कल्पना नहीं कर सकते, तो हम यह कैसे कल्पना कर सकते हैं कि समय और स्थान में जन्मी आत्मा अनंत काल तक विद्यमान रहेगी? हम यह कल्पना नहीं कर सकते कि जन्म के समय अस्तित्व में आई आत्मा मृत्यु के बाद अनंत भविष्य में, या अनंत काल तक बनी रहेगी। इसलिए अमरता, जिसका अर्थ है अस्तित्व की शाश्वत निरंतरता, शरीर के जन्म से पहले आत्मा के अस्तित्व को पूर्वधारणा के रूप में मानती है। यदि हम मनुष्य की आत्मा की अमरता में विश्वास करते हैं, तो हमें उसके पूर्व-अस्तित्व को भी स्वीकार करना होगा, क्योंकि जो जन्म लेता है, उसका मरना निश्चित है, और जिसका आरंभ होता है, उसका अंत भी निश्चित है। यह प्रकृति का नियम है; हम इसके विरुद्ध नहीं जा सकते।
प्रकृति के नियम हमेशा एकसमान और सार्वभौमिक होते हैं। अपवाद जैसी कोई चीज नहीं होती। सभी अपवाद अन्य नियमों द्वारा नियंत्रित होते हैं, जिन्हें हम जानते भी हो सकते हैं और नहीं भी। वे केवल विभिन्न नियमों की अभिव्यक्ति मात्र हैं। जो कुछ भी जन्म लेता है, उसकी मृत्यु निश्चित है, और

जिसका आरंभ है, उसका अंत भी निश्चित है। यदि हम भविष्य में अनंत या अमर होना चाहते हैं, तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि अतीत में हमारा कोई आरंभ नहीं था या हम अमर नहीं थे। यहाँ कुछ लोग सोच सकते हैं कि अतीत में हमारा अस्तित्व कैसे संभव है? यदि हम इस नियम को लागू करें कि क्योंकि हमारा अस्तित्व आज है, इसलिए हम शून्य से अस्तित्व में नहीं आ सकते, तो हमें पूर्व-अस्तित्व की अवधारणा की एक झलक मिलेगी।
और इसी कारण वेदांत अमरता और पूर्व-अस्तित्व दोनों की शिक्षा देता है। आत्मा के पूर्व-अस्तित्व को स्वीकार किए बिना अमरता का कोई भी सिद्धांत पूर्ण या संपूर्ण नहीं हो सकता। कोई भी सिद्धांत ऐसे व्यक्ति के लिए शाश्वत भविष्य के जीवन की आवश्यकता को सफलतापूर्वक सिद्ध नहीं कर सका है जिसका अतीत में अस्तित्व अनावश्यक सिद्ध हो चुका है। यदि आप कहते हैं कि आपका पूर्व-अस्तित्व अनावश्यक था, तो आपका अमर जीवन भी उतना ही अनावश्यक होगा। यदि संसार आपके बिना पहले चल सकता था, तो वह आपके बिना आगे क्यों नहीं चल सकता? यदि आपका अस्तित्व पहले नहीं था, तो भविष्य में अमर जीवन की क्या आवश्यकता होगी? यदि आप अचानक अस्तित्व में आए हैं, तो आप अचानक ही अस्तित्व से विलीन भी हो सकते हैं। हमें इस तरह के क्षणभंगुर पदार्थ बनने से कौन रोक सकता है?

68
वेदांत में, सच्ची अमरता का अर्थ है भूतकाल और भविष्यकाल दोनों में शाश्वत अस्तित्व। पूर्व-अस्तित्व और अमरता एक दूसरे से इतने घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं कि यदि हम एक को नकारते हैं, तो दूसरे को स्वीकार नहीं कर सकते। क्योंकि तार्किक रूप से हम गलत होंगे; हम प्रकृति के नियमों के विरुद्ध जाएंगे, और हमारा कथन तर्कसंगत आधार पर नहीं, बल्कि किसी निराधार सिद्धांत या मत पर आधारित होगा। इसलिए, वेदांत में हम सीखते हैं कि प्रत्येक आत्मा शरीर के जन्म से पहले विद्यमान थी। यदि हम मानते हैं कि मृत्यु के बाद भी हमारा अस्तित्व बना रहेगा, तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि हम भूतकाल में विद्यमान थे; अन्यथा, हम भविष्य में अमर जीवन प्राप्त नहीं कर सकते। हम शून्य से अस्तित्व में नहीं आए हैं, बल्कि हमारा वर्तमान हमारे भूतकाल और भविष्यकाल के अस्तित्वों की कड़ी है। हम शायद इसे न जानते हों, हमें अपने भूतकाल के जन्मों की स्मृति न हो, फिर भी हम विद्यमान थे।

यहां यह सवाल उठ सकता है कि अगर हमारा अस्तित्व जन्म से पहले था, तो हमें याद क्यों नहीं है? यह पूर्व-अस्तित्व की मान्यता के विरुद्ध अक्सर उठाई जाने वाली सबसे मजबूत आपत्तियों में से एक है। कुछ लोग अतीत में आत्मा के अस्तित्व को इसलिए नकारते हैं क्योंकि उन्हें अतीत की घटनाएं याद नहीं रहतीं। वहीं दूसरी ओर, स्मृति को अस्तित्व का मानक मानने वाले लोग कहते हैं कि अगर मृत्यु के समय वर्तमान की स्मृति भी समाप्त हो जाती है, तो हम भी उसके साथ ही समाप्त हो जाएंगे और हम अमर नहीं हो सकते, क्योंकि उनका मानना है कि स्मृति ही जीवन का मानक है, और अगर हमें याद नहीं है, तो हम वही प्राणी नहीं रह जाते!
वेदांत इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहता है कि हमारे लिए अपने पिछले जन्मों को याद रखना संभव है। राज योग पढ़ने वालों को यह सूत्र याद होगा: “एक संस्कार का अनुभव करने से व्यक्ति को पूर्व जन्मों का ज्ञान प्राप्त होता है।”
यहां संस्कारों से तात्पर्य अतीत के अनुभवों की उन छापों से है जो हमारे अवचेतन मन में सुप्त अवस्था में रहती हैं और कभी नष्ट नहीं होतीं। स्मृति कुछ और नहीं बल्कि अवचेतन मन की सुप्त छापों का जागृत होना और चेतना की सीमा से ऊपर उठना है। एक राज योगी, अवचेतन मन की इन सुप्त छापों पर गहन एकाग्रता के माध्यम से, अपने पिछले जन्मों की सभी घटनाओं को याद कर सकता है। ऐसे अनेक भारतीय योगियों के उदाहरण हैं जो न केवल अपने पिछले जन्मों को जानते थे, बल्कि दूसरों के पिछले जन्मों को भी सही-सही बता सकते थे। कहा जाता है कि बुद्ध को अपने पांच सौ पिछले जन्म याद थे। श्री कृष्ण भगवद् गीता में कहते हैं:
“हे अर्जुन, हम दोनों ने अनेक जन्म लिए हैं; तुम उन्हें नहीं जानते; परन्तु मैं उन सबको जानता हूँ।” 2
इससे पता चलता है कि श्री कृष्ण को वे बातें याद थीं, क्योंकि वे योगी थे, जबकि अर्जुन को वे बातें याद नहीं थीं, क्योंकि उनमें ऐसा करने की शक्ति नहीं थी।

1. पतंजलि के योग सूत्र, अध्याय 3, श्लोक 18.69
2. भगवत गीता अध्याय 4, श्लोक 5.

जन्मों में अर्जित ज्ञान और बुद्धि है, तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि हमें वे विशेष घटनाएँ या संघर्ष याद हैं या नहीं, जो हमने उस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए किए थे। वे विशेष बातें हमारी स्मृति में भले ही न आएं, लेकिन हमने ज्ञान नहीं खोया है।
अब अपने वर्तमान जीवन का अध्ययन कीजिए और आप देखेंगे कि इस जीवन में आपने कुछ अनुभव प्राप्त किए हैं। आपके जीवन में घटी घटनाएं और संघर्ष आपकी स्मृति से मिटते जा रहे हैं, लेकिन उस अनुभव से प्राप्त ज्ञान ने आपके चरित्र को आकार दिया है और आपको एक अलग रूप दिया है। आपको आगे नहीं जाना पड़ेगा।
उन विभिन्न घटनाओं को फिर से याद करने की कोशिश न करें कि आपने वह अनुभव कैसे प्राप्त किया; यह आवश्यक नहीं है और प्राप्त ज्ञान ही काफी है। फिर हमारे बीच कुछ ऐसे लोग भी हैं जो अद्भुत शक्तियों के साथ पैदा होते हैं। उदाहरण के लिए, आत्म-संयम की शक्ति को ही ले लीजिए। एक व्यक्ति में आत्म-संयम की शक्ति अत्यंत विकसित होती है, जबकि दूसरे को वर्षों के कठिन संघर्ष के बाद भी वह शक्ति प्राप्त नहीं होती। यह अंतर क्यों है? भगवान श्री रामकृष्ण जन्म से ही ईश्वर-चेतना से परिपूर्ण थे और चार वर्ष की आयु में ही समाधि की सर्वोच्च अवस्था को प्राप्त कर चुके थे। परन्तु अन्य योगियों के लिए इस अवस्था को प्राप्त करना अत्यंत कठिन है। एक योगी श्री रामकृष्ण से मिलने आए। वे वृद्ध थे और अद्भुत शक्तियों से संपन्न थे। उन्होंने कहा, “जो अवस्था आपको स्वाभाविक रूप से प्राप्त है, उसे प्राप्त करने के लिए मैंने चालीस वर्ष का संघर्ष किया है।” वेदांत दर्शन के महान टीकाकार शंकराचार्य ने बारह वर्ष की आयु में ही अपनी टीका लिखी थी। विश्व में बहुत कम विचारक और दार्शनिक हैं जो उनके लेखन की भावना को समझ सकते हैं। वे इतने गहन और उदात्त हैं कि सामान्य बुद्धि उन्हें ग्रहण नहीं कर सकती। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो यह दर्शाते हैं कि पूर्व-जन्म एक वास्तविकता है और पूर्व जन्मों की ये सुप्त या निष्क्रिय छापें अतीत की स्मृति पर निर्भर हुए बिना ही व्यक्ति के चरित्र निर्माण में मुख्य भूमिका निभाती हैं। यद्यपि विशिष्ट घटनाओं की स्मृति खो जाने के कारण हम अपने अतीत को याद नहीं कर सकते, फिर भी आत्मा की प्रगति रुकती नहीं है। स्मृति कमजोर होने पर भी आत्मा निरंतर प्रगति करती रहेगी।

प्रत्येक आत्मा के अवचेतन मन में उसके पूर्व अनुभवों का भंडार होता है। दो प्रेमियों का उदाहरण लीजिए। प्रेम क्या है? यह पहले ही समझाया जा चुका है कि यह दो आत्माओं के बीच का आकर्षण है। यह प्रेम शरीर की मृत्यु के साथ समाप्त नहीं होता। सच्चा प्रेम मृत्यु के बाद भी जीवित रहता है और बढ़ता रहता है, और समय के साथ मजबूत होता जाता है। अंततः यह दो आत्माओं को एक कर देता है। पूर्व-अस्तित्व का सिद्धांत ही यह समझा सकता है कि क्यों दो आत्माएं पहली नजर में एक-दूसरे को पहचान लेती हैं और मित्रता के बंधन से जुड़ जाती हैं। यह पारस्परिक प्रेम बढ़ता रहेगा और मजबूत होता जाएगा और अंत में इन प्रेमियों को हर जगह एक साथ रखेगा। इसलिए वेदांत यह नहीं कहता कि शरीर की मृत्यु दो आत्माओं के आकर्षण या लगाव को समाप्त कर देगी, बल्कि यह कहता है कि आत्माएं अमर हैं, इसलिए उनका संबंध शाश्वत रहेगा। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि संबंध और प्रेम पारस्परिक होना चाहिए। यदि आप किसी से प्रेम करते हैं और वह व्यक्ति आपसे प्रेम नहीं करता, तो यह एकतरफा होगा। यह दो आत्माओं को एक नहीं कर पाएगा। इसलिए पारस्परिक आकर्षण होना आवश्यक है।
वेदांत में हम सीखते हैं कि जिस प्रकार अमरता का अर्थ शाश्वत भविष्य में निरंतर अस्तित्व है, उसी प्रकार पूर्व-अस्तित्व का अर्थ शाश्वत अतीत में निरंतर अस्तित्व है। एक के बिना दूसरा अस्तित्व में नहीं रह सकता। इनमें से प्रत्येक हमारी आत्मा के उस भाग को ही व्यक्त करता है जो शाश्वत है। 71 और ये दोनों मिलकर एक संपूर्ण इकाई बनाते हैं, और यही शाश्वत आत्मिक जीवन है। यह पहले से विद्यमान था और हमेशा अजन्मा रहा, और इसलिए यह भविष्य में भी सदा विद्यमान रहेगा। हमारा वर्तमान जीवन अतीत का परिणाम है और हमारा भविष्य वर्तमान का परिणाम होगा। कुछ भी नष्ट नहीं होगा।
आधुनिक अध्यात्मवाद ने भविष्य पर कुछ प्रकाश डाला है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि दिवंगत आत्माएँ भी अपने अतीत के संबंधों को याद रखती हैं। इससे यह पता चलता है कि स्मृति पूरी तरह से भौतिक शरीर पर निर्भर नहीं होती, बल्कि आत्मा जहाँ भी जाती है, स्मृति उसके साथ जाती है। यही वास्तविक स्मृति है। भौतिक शरीर भले ही नष्ट हो जाए, लेकिन स्मृति जीवित रहती है। शरीर के माध्यम से ही अवचेतन मन अपनी अंतर्निहित शक्तियों का पुनरुत्पादन करता है। अतः हमारा वर्तमान जीवन अतीत का परिणाम है। इसमें पिछले जन्मों

के सभी अनुभव और छाप समाहित हैं, और केवल कुछ विशेष परिस्थितियों में ही इन्हें याद किया जा सकता है।
लेकिन यहाँ हमें यह याद रखना चाहिए कि अमरता का अर्थ यह नहीं है कि हम स्वर्ग जाकर शाश्वत सुखों का आनंद लें या अपने बुरे कर्मों के शाश्वत नरक में जाएँ। ये विचार अमरता के अर्थ में अनिवार्य रूप से शामिल नहीं हैं। वेदांत के अनुसार, अमरता में प्रगति का अर्थ शामिल है, अर्थात् आत्मा का निम्नतम से उच्चतर विकास चरणों की ओर बढ़ना। इसमें यह विचार भी शामिल है कि प्रत्येक आत्मा विकास के विभिन्न चरणों से गुजरते हुए अपनी अंतर्निहित शक्तियों को प्रकट करेगी, जब तक कि वह पूर्णता, सर्वज्ञता और सर्वव्यापकता प्राप्त नहीं कर लेती।
इस सर्वोच्च लक्ष्य को प्राप्त करने और उसे पूरा करने के लिए आत्मा को जीवन के विभिन्न चरणों में स्वयं को प्रकट करना और अनुभव अर्जित करना होगा। जिस कारण से हम इस जगत में आए हैं, वही कारण भविष्य में भी हमें यहाँ लाता रहेगा। यदि शरीर की मृत्यु के बाद भी वही कारण हमारे भीतर बना रहता है, तो हमारी इच्छाओं और उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इस जगत में पुनः आने से हमें कोई नहीं रोक सकता।
यह विचार आत्मा के पुनर्जन्म और पुनरावतार के सिद्धांतों को जन्म देता है। आत्मा का पुनर्जन्म और पुनरावतार आत्मा के शाश्वत जीवन के सत्य पर आधारित है, जो पूर्व-अस्तित्व और अमरता द्वारा व्यक्त होता है। मृत्यु के बाद आत्मा का स्वर्ग या किसी दंड लोक या निम्न लोक में प्रस्थान पूरी तरह से आत्मा के विचारों और कर्मों पर निर्भर करता है, और इन लोकों में आत्मा का प्रवास अस्थायी होता है और उन विचारों और कर्मों के फल भोगने की स्थिति पर निर्भर करता है। अर्थात्, आत्मा तब तक वहाँ रहेगी जब तक वह अपने विचारों और कर्मों के फल पूरी तरह से भोग नहीं लेती। उस समय के समाप्त होने पर, स्वर्ग और अन्य लोकों के निवासी इस लोक में वापस आते हैं, ताकि वे और अधिक अनुभव, शक्ति और ज्ञान प्राप्त कर सकें और पूर्णता प्राप्त कर सकें। वेदांत यह नहीं कहता कि स्वर्ग शाश्वत है, बल्कि यह अस्थायी है।
72 आत्मा शाश्वत नहीं है, और उसमें स्वर्ग से परे जाने या सभी दिव्य लोकों से ऊपर उठने की शक्ति है। हमें एक ही स्थान तक सीमित क्यों रहना चाहिए? यदि हम इस भौतिक जगत में वापस आने की परवाह नहीं करते, तो स्वर्ग पहुँचने पर भी

हम असंतुष्ट रहेंगे। तब वह समय आएगा जब हम पूर्णतः परिपूर्ण और दिव्य बनने तक और आगे बढ़ने का प्रयास करेंगे। इसलिए वेदांत में कहा गया है:
“परम स्वर्ग भी क्षणभंगुर और शाश्वत नहीं है। पृथ्वी और परम स्वर्ग के बीच विद्यमान लोक केवल व्यक्तिगत आत्माओं के भौतिक विकास और प्रगति को दर्शाते हैं। जो वहां जाते हैं और वहां रहते हैं, वे जन्म और पुनर्जन्म के अधीन होते हैं। वे फिर लौटेंगे। लेकिन जिन्होंने पूर्णता प्राप्त कर ली है, वे सभी स्वर्गों से परे हैं, शाश्वत जीवन को समझते हैं और सदा-सर्वदा के लिए परिपूर्ण रहते हैं।”

1. भगवद् गीता अध्याय 8, श्लोक 16-27. 73

अध्याय 9

विज्ञान और अमरता
ईसाई धर्म में प्रचलित मान्यता यह है कि यीशु मसीह ने शाश्वत जीवन और अमरता का ज्ञान दिया और अमरता केवल उन्हीं के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। ऐसा प्रतीत होता है मानो शाश्वत जीवन या मृत्यु के बाद के शाश्वत जीवन की यह अवधारणा, जिसे अमरता के रूप में समझा जाता है, यीशु मसीह के आगमन से पहले अस्तित्व में ही नहीं थी। लेकिन तुलनात्मक धर्मों के अध्येता पाते हैं कि प्राचीन काल में, ईसाई युग से बहुत पहले, शाश्वत या अमर जीवन की यही अवधारणा मिस्रियों, कसदियों, हिंदुओं और आर्य वंश की अन्य शाखाओं, जैसे पारसियों, प्राचीन यूनानियों, रोमनों, स्कैंडिनेवियाई आदि में भी प्रचलित थी।
यदि हम मिस्र के सबसे प्राचीन अभिलेखों का अध्ययन करें, जो 12000 से 8000 ईसा पूर्व के बीच के हैं, तो हम पाएंगे कि प्राचीन मिस्रवासी शरीर के पुनरुत्थान और धर्मी लोगों के लिए शाश्वत जीवन में विश्वास रखते थे। शरीर के पुनरुत्थान के इस अपरंपरागत विचार को बाद में मिस्र के पुजारियों और विचारकों ने अस्वीकार कर दिया, जब आत्मा के स्थूल भौतिक शरीर से स्वतंत्र होने का विचार विकसित हुआ। लेकिन अज्ञानी जनता ने भौतिक या नश्वर शरीर के पुनरुत्थान में विश्वास बनाए रखा, जैसा कि आज हम देखते हैं कि रूढ़िवादी ईसाई धर्म के अधिकांश अनुयायी इसे मानते हैं। अज्ञानी वर्ग यह विश्वास नहीं कर सकता कि आत्मा शरीर से अलग हो सकती है और शरीर के बिना जीवित रह सकती है। उनका मानना है कि आत्मा शरीर से जुड़ी रहती है। स्थूल भौतिक रूप से हमारा लगाव इतना प्रबल है कि हम एक क्षण के लिए भी यह नहीं सोच सकते कि हम शरीर के बिना रह सकते हैं, या इस भौतिक रूप के बिना अस्तित्व में रह सकते हैं, जिसे हमने इतनी सावधानी से सजाया है और जिसे हमने सुंदर वस्तुओं और स्वादिष्ट व्यंजनों आदि से सुसज्जित रखा है।
पांचवीं राजवंश के समय, यानी 400 ईसा पूर्व में रहने वाले प्राचीन मिस्रवासियों के लेखों में हमें इस प्रकार की अभिव्यक्तियाँ मिलती हैं: आत्मा स्वर्ग में, शरीर पृथ्वी में।
स्वर्ग में तेरी आत्मा है, पृथ्वी में तेरा शरीर।

आपको याद रखना होगा कि ईसा मसीह के जन्म से 3500 वर्ष पूर्व मिस्र के विचारकों द्वारा इस प्रकार के विचार व्यक्त किए गए थे और लिखे गए थे। इन प्राचीन मिस्रवासियों का मानना था कि धर्मी लोगों की आत्माएं स्वर्ग जाएंगी, दिव्य सुखों का आनंद लेंगी और खाएं-पिएंगी क्योंकि उनका शरीर हल्का, सक्रिय और सूक्ष्म होगा, और इसलिए उन्हें भोजन और पेय की आवश्यकता होगी। यही उनकी धारणा थी और इसी कारण से रिश्तेदारों और
मृतक के 74 मित्र कब्र में भोजन रखा करते थे और कभी-कभी वे कब्र में ताबीज और अन्य पवित्र वस्तुएं भी रखते थे, यह मानते हुए कि दिवंगत आत्मा को बुरी शक्तियों से खुद को बचाने के लिए ऐसी चीजों की आवश्यकता हो सकती है।
और कुछ अन्य लेखों में भी हम पाते हैं कि मृतकों की आत्माएँ स्वर्ग जाती थीं और वे स्पष्ट रूप से सफेद लिनेन के वस्त्र पहने होती थीं, उनके पैरों में सफेद सैंडल होते थे, और वे शांति के मैदानों में विचरण करती थीं, देवताओं के साथ बैठती थीं और प्रकाश का भोजन ग्रहण करती थीं। वहाँ नहरें, जलमार्ग, सड़कें, नावें, रथ, घोड़े और इन सभी चीजों की प्रतिकृतियाँ थीं जो हमें इस लोक में मिलती हैं, स्वर्ग में। इन सभी सुखों और आरामों का अनंत काल तक आनंद लेना ही इन प्राचीन मिस्रवासियों के अनुसार अमरता का अर्थ था। उनका मानना था कि इन दिवंगत आत्माओं का स्वर्ग जाकर इन सभी दिव्य सुखों का आनंद लिया जाएगा, जो इस लोक में प्राप्त किए जा सकने वाले सर्वोच्च सुखों के आदर्श हैं, जो शाश्वत हो गया। अनंत काल तक इन सुखों का आनंद लेना ही उनके द्वारा अमरता का अर्थ दिया गया था। हमें याद रखना चाहिए कि 'अनंत काल' से हमारा तात्पर्य लाखों या करोड़ों वर्षों से नहीं है, बल्कि अनंत काल से है। क्या आप अनंत काल, अनंत काल, और इन सुखों का आनंद लेने का अर्थ समझ सकते हैं?
प्राचीन यूनानियों में भी इसी प्रकार की मान्यता पाई जाती थी, जिन्हें एलिसियम फील्ड्स कहा जाता था। यूनानियों का मानना था कि जो धर्मात्मा लोग एलिसियम फील्ड जाते हैं, वे अनंत काल तक स्वर्गीय सुखों का आनंद लेते रहेंगे। प्रत्येक मृतक अपने सांसारिक जीवन में जिन सुखों और कार्यों में आनंदित होता था, उन्हें पुनः प्राप्त करेगा। स्वीडनबोर्जियन और अन्य चर्चों में आज भी ऐसी ही मान्यता प्रचलित है। कुछ समय पहले न्यूयॉर्क शहर के एक पादरी ने एक समाचार पत्र में एक लेख लिखा था जिसमें उन्होंने कहा था:

“इस धरती पर हमारे कर्म ही स्वर्ग में हमारे कर्म होंगे। हम इसे बदल नहीं सकते; इसे बदला नहीं जा सकता, लेकिन हमें ऐसे कर्मों को खोजना और उनकी तलाश करना होगा। जीवन के कर्मों के बारे में हम जिस भी रूप में सोच सकते हैं, वे स्वर्ग के कर्मों का प्रतिबिंब और प्रतीक होने चाहिए, और अधिक श्रेष्ठ और उच्चतर रूपों में, हमें वही करना जारी रखना होगा जो हम आज इस धरती पर कर रहे हैं।”
यदि यह बात सच है, तो मैं जानना चाहूंगा कि हमारे कितने रसोइये, वेट्रेस, वकील, बेल-बॉय और सड़क सफाईकर्मी अनंत काल तक, बिना किसी अंत के, यही काम करते रहना चाहेंगे। मैं जानना चाहूंगा कि कितने लोग ये काम करते रहना चाहेंगे।
धर्मनिष्ठ ईसाइयों में यह मान्यता पाई जाती है कि स्वर्ग के सुख और शाश्वत जीवन की अवधारणा इस विश्वास से जुड़ी हुई है कि स्वर्ग में मुख्य कार्य निरंतर वीणा बजाना होगा। एक भजन है जो गाया जाता था।

75 चर्चों का वर्णन करता है और यह स्वर्गिक आनंदों का वर्णन देता है, जहाँ सब्त कभी समाप्त नहीं होते।
तो हम देखते हैं कि ईसा मसीह के समय से पहले भी कसदियों, मिस्रियों और यूनानियों में शाश्वत जीवन में विश्वास था। चीनी, हिंदू और पारसियों में भी हमें शाश्वत जीवन और स्वर्ग में मिलने वाले सुखों में ऐसा ही विश्वास मिलता है। इसलिए जब हम ईसाई धर्मशास्त्रियों के इस सिद्धांत की जांच करते हैं कि ईसा मसीह ने पहली बार अमर जीवन का विचार प्रकट किया, तो हम रुककर यह प्रश्न पूछते हैं कि क्या यह सत्य है या नहीं। ईसा मसीह ने यहूदियों की कुछ ऐसी जनजातियों को ज्ञान दिया होगा जो परलोक या मृत्यु के बाद के जीवन में विश्वास नहीं करती थीं, लेकिन उन्होंने इस विचार को दुनिया के सामने पहली बार नहीं रखा; और ईसा मसीह के समय यहूदियों में मृत्यु के बाद पुनरुत्थान का जो कच्चा विचार प्रचलित था, वह भी बेबीलोन की कैद (586-538 ईसा पूर्व) के दौरान पारसियों से लिया गया था। यदि हम ज़ेंड अवेस्ता पढ़ें, तो हम पाएंगे कि प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह कितना भी अच्छा या बुरा हो, मृत्यु के तीसरे दिन पुनर्जीवित होगा और फिर स्वर्ग या किसी दंड स्थान पर जाएगा। यह विचार यहूदियों के बीच प्रचलित हो गया। फरीसियों ने इसे स्वीकार किया;

सदूकियों ने इसे अस्वीकार कर दिया, और रूढ़िवादी यहूदियों के दूसरे वर्ग ने इसे सिरे से खारिज कर दिया।
इसलिए, विश्व के अन्य धर्मों का अध्ययन करने पर हमें पता चलता है कि यह मान्यता पहली बार नहीं आई थी, बल्कि इसका अर्थ स्वर्ग में शाश्वत जीवन है। फिर भी, अमरता का प्रश्न एक अत्यंत जटिल समस्या है। विश्व के अधिकांश विचारकों और तत्वमीमांसाविदों ने अमरता की इस समस्या को हल करने का प्रयास किया है। उनमें से कुछ ऐसे निष्कर्षों पर पहुँचे हैं जो मृत्यु के बाद शाश्वत जीवन के अस्तित्व के पक्ष या विपक्ष में हैं।
लेकिन अगर हम अमरता शब्द के अर्थ का विश्लेषण करें, तो हम जानते हैं कि इसका अर्थ है मृत्युहीनता या वह अवस्था जो मृत्यु के अधीन नहीं है। फिर सवाल उठता है कि मृत्यु क्या है? यदि मृत्यु से हमारा तात्पर्य विनाश, संहार और ब्रह्मांड का पूर्णतः शून्य में विलीन हो जाना है, तो इस संसार में ऐसा कोई भी नहीं है जो ऐसी मृत्यु या संहार के अधीन हो। विज्ञान ने सिद्ध किया है कि पदार्थ और बल दोनों ही अविनाशी हैं। अतः पदार्थ का प्रत्येक कण, चाहे वह कितना भी सूक्ष्म या स्थूल क्यों न हो, पूर्णतः विनाश या मृत्यु के अधीन नहीं है; और इस अर्थ में, हमें कहना चाहिए कि पदार्थ अमर है, बल अमर है और ऊर्जा अमर है, क्योंकि वे न तो विनाश के अधीन हैं और न ही संहार के।
मृत्यु के बारे में पुरानी और व्यापक धारणा यह है कि यह एक प्रकार की नींद है। मृत्यु के समय आत्मा अचेतन अवस्था में चली जाती है; अचेतन अवस्था की उस नींद में, आत्मा पुनरुत्थान की सुबह तक रहती है, जब वह फिर से शरीर के साथ जुड़ जाती है। शरीर और आत्मा दोनों स्वर्ग या नरक में जाते हैं, दयालु पिता के न्याय की प्रतीक्षा करते हुए। ईसाई धर्मशास्त्रियों द्वारा मृत्यु को मनुष्यों का सबसे बड़ा शत्रु माना जाता था और इसका अर्थ आत्मा का अनंत काल तक विनाश था। अच्छी आत्मा हमेशा अच्छी रहती है और बुरी आत्मा
76 दुष्टों को अनंत काल तक कष्ट भोगना पड़ा। मृत्यु की वह भयावह धारणा आज भी ईसाई धर्म के एक विशेष वर्ग में व्याप्त है, और यह भय और निराशा पवित्र स्थानों के गुंबदों में स्थित पवित्र तीर्थस्थलों के वातावरण में भी व्याप्त है, और लोग मृत्यु के निकट आने के विचार से भयभीत हो जाते हैं। क्योंकि यह व्यक्ति की आत्मा पर मुहर लगा देती है, उसके भाग्य को निश्चित कर देती है, और उसे इस प्रकार बांध देती है कि वह हमेशा के लिए बना रहता है।

फिर से, जिस दुष्ट व्यक्ति का कोई धर्म नहीं है, उसे अनंत काल तक कष्ट भोगना पड़ेगा।
अब विज्ञान ने हमें यह सच्चाई दिखाई है कि मृत्यु कोई बुराई नहीं है।
विज्ञान कहता है कि मृत्यु जीवन पर आक्रमण करने वाला शत्रु नहीं है और हम मृत्यु के बिना जी नहीं सकते, बल्कि मृत्यु जीवन का निरंतर प्रवाह है। वास्तव में, मृत्यु के बिना विकास असंभव है। इसलिए मृत्यु से डरने का कोई कारण नहीं है।
एक वैज्ञानिक विचारक मृत्यु से भयभीत नहीं होता, बल्कि इसे परिवर्तन या विकास के लिए आवश्यक मानता है। विज्ञान में मृत्यु का अर्थ परिवर्तन है, अर्थात् एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तन। अपने जीवनकाल में हम देखते हैं कि स्वाभाविक रूप से हर सात वर्ष में हमारा शरीर लगभग नया हो जाता है और हमारे शरीर का प्रत्येक अणु निरंतर परिवर्तित होता रहता है। हमारे शरीर की प्रत्येक सूक्ष्म कोशिका नए रूप उत्पन्न करती है। पुराने रूप नष्ट होते हैं और नए रूप उत्पन्न होते हैं। जब आप कोई पेड़ लगाते हैं, तो आप देखेंगे कि पौधा उगने से पहले ही बीज मर जाता है। इसलिए मृत्यु जीवन के एक नए चरण की शुरुआत है, और अतः हमें उस पुरानी धारणा से चिपके नहीं रहना चाहिए कि मृत्यु जीवन का चिर शत्रु है, बल्कि हमें इसे जीवन का मित्र मानना चाहिए।
अब यदि मृत्यु से हमारा तात्पर्य परिवर्तन है, तो ‘अमरता’ शब्द का नया अर्थ होगा; अर्थात्, यह वह अवस्था होगी जो न मरती है और न ही मृत्यु के अधीन है। दूसरे शब्दों में, अमरता का अर्थ है एक ऐसी अवस्था जो पूर्ण, अपरिवर्तनीय, मृत्युहीन या पूर्णतः अपरिवर्तनीय है। अतः अमरता का वास्तविक अर्थ है अस्तित्व में निरंतर बने रहना, बिना किसी भी प्रकार के परिवर्तन के। अब यदि अमरता का यही अर्थ है, तो क्या कोई ऐसी अवस्था है जो सभी प्रकार के परिवर्तनों से पूर्णतः मुक्त हो? यह एक बड़ा प्रश्न है। इस प्रश्न का उत्तर अत्यंत गहन है। हमें यह जानने के लिए संपूर्ण भौतिक जगत का विश्लेषण करना होगा कि क्या अपरिवर्तनीयता जैसी कोई चीज अस्तित्व में है। क्योंकि विज्ञान हमें बताता है कि सब कुछ परिवर्तन के अधीन है और हर जगह हमें परिवर्तन और क्षय के संकेत दिखाई देते हैं। आप सभी जानते हैं कि सौर मंडल किस प्रकार एक ही प्रकार के धुंधले पदार्थ से अस्तित्व में आया। धीरे-धीरे यह गैसीय रूप से ठोस अवस्था में परिवर्तित हो गया। फिर यह वापस गैसीय

अवस्था में चला गया। हमारे भौतिक शरीर परिवर्तन के अधीन हैं। वास्तव में, हमारे शरीर सदा बदलते रहते हैं। यदि आप स्वयं को ईथर में एक भंवर के रूप में कल्पना कर सकते हैं, या यदि आपने एक्स-रे के माध्यम से अपना हाथ देखा है, तो आप जान जाएंगे कि आपका शरीर कैसा है। आपके चारों ओर पदार्थ के समान ईथरीय कण एक समरूप द्रव्यमान में मौजूद हैं जो अभेद्य है।

77. एक गाढ़ा ठोस पदार्थ। कणों के बीच कोई जगह नहीं है और आप उन्हें अलग नहीं कर सकते। उस द्रव्यमान में, जगह-जगह छोटे-छोटे भंवर होते हैं और उन्हें ही हम अपना शरीर कहते हैं।
शरीर की हर छोटी कोशिका निरंतर परिवर्तनशील है। हम अपनी संवेदनाओं से समझते हैं कि बाह्य जगत से कुछ आ रहा है, चाहे वह प्रकाश के कंपन के रूप में हो या वायु के कंपन के रूप में, और वह हमारे तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है, नेत्र तंत्रिकाओं और मस्तिष्क की अन्य तंत्रिकाओं में परिवर्तन उत्पन्न करता है, और वहाँ एक विशेष कंपन उत्पन्न होता है जिसे चेतना परिवर्तन के रूप में ग्रहण करती है। इस प्रकार हम हर कदम पर परिवर्तन देखते हैं, और परिवर्तन के बिना हम कोई ध्वनि नहीं सुन सकते, कोई रंग नहीं देख सकते और कुछ भी सूंघ नहीं सकते। सभी भावनाएँ और विचार एक प्रकार के कंपन हैं। वे बढ़ते और लुप्त होते हैं। कंपन की एक श्रेणी हमें चेतना के एक विशेष क्षेत्र में ले जाती है और दूसरी श्रेणी भावनाओं के अन्य कंपन उत्पन्न करती है। अतः सभी कंपन परिवर्तन का प्रतीक हैं। हमारा संपूर्ण अस्तित्व भी परिवर्तन के अधीन है। तो फिर वह अमर अस्तित्व कहाँ है, यह प्रश्न हम विज्ञान से पूछते हैं। लेकिन विज्ञान इसका उत्तर नहीं देता। संसार में पूर्ण अपरिवर्तनीयता जैसी कोई वस्तु नहीं है। संसार की घटनाओं में परिवर्तन अवश्यंभावी है। समय और स्थान में विद्यमान कोई भी वस्तु परिवर्तन के अधीन है, और यही बात हमारे द्वारा कल्पना की जा सकने वाली किसी भी आकृति पर लागू होती है। इसका स्वरूप पदार्थ या ईथर का हो सकता है, लेकिन दोनों ही मामलों में यह परिवर्तन के अधीन है।
क्या 'अमरता' से हमारा तात्पर्य यह है कि आत्मा को एक नया रूप धारण होगा और वह स्वर्ग में जाकर अनंत काल तक दिव्य सुखों का आनंद लेगी, जहाँ वह अनंत काल तक सूक्ष्म रूप में रहेगी और उसमें कोई परिवर्तन नहीं होगा? क्या हम एक ऐसे सूक्ष्म रूप की कल्पना कर सकते हैं जो मूर्ति की तरह स्थिर रहे,

क्योंकि किसी भी भावना या अनुभूति के लिए किसी न किसी प्रकार का परिवर्तन आवश्यक है, इसलिए उसके लिए एक ऐसा शरीर होना चाहिए जो किसी भी प्रकार के परिवर्तन के अधीन न हो? नहीं, हम ऐसी किसी बात की कल्पना नहीं कर सकते। इसलिए, चाहे वे कितने भी सूक्ष्म या सूक्ष्म क्यों न हों, अमरता को आकाशीय पिंडों पर लागू नहीं किया जा सकता।
यदि हम सुख की अवधारणा का विश्लेषण करें, तो हम पाते हैं कि यदि हमें पीड़ा की अवधारणा न हो, तो हम सुख का अनुभव नहीं कर सकते। इसी प्रकार, यदि हमें पीड़ा की अवधारणा न हो, तो हम सुख का अनुभव भी नहीं कर सकते। हम किसी एक भावना को तभी जान सकते हैं जब हम उसकी तुलना दूसरी भावना से करें जिसका हमने पहले अनुभव किया हो और दोनों के बीच अंतर को भी समझें। और फिर, यदि हम अनंत काल तक सुख का आनंद लेना चाहते हैं, तो हमें पीड़ा की किसी न किसी अवधारणा का होना आवश्यक है, अन्यथा हम अनंत काल तक सुख का आनंद नहीं ले सकते। इसी कारण से, जो लोग अनंत काल में विश्वास करते हैं, उन्हें अनंत नरक की आग में भी विश्वास करना होगा। इसका मूल सत्य यह है कि हम एक का अनुभव किए बिना दूसरे का आनंद नहीं ले सकते।
नरक और स्वर्ग के स्थूल वर्णनों में हम पाते हैं कि नरक और स्वर्ग को अलग करने वाली एक कांच की दीवार है, जिसके माध्यम से दिव्य सुखों का आनंद लेने वाली आत्माएं दूसरों के कष्टों को देख सकती हैं और उनकी तुलना करके उनके सुखों का आनंद ले सकती हैं; अन्यथा कोई आनंद नहीं है।
78 यदि हम हर समय उसी आनंद का अनुभव करते रहें और बीच में आराम न करें, तो हमारे लिए उस आनंद को पाना वास्तव में असंभव होगा। अब यदि हमें संगीत पसंद है और हम दिन-रात बिना कुछ और किए संगीत सुनते रहें, तो संगीत हमारे लिए आनंद का स्रोत नहीं रह जाएगा और छह घंटे के भीतर ही हम उससे ऊब जाएंगे। यदि हम हर समय एक ही रंग देखते रहें, तो वह रंग नहीं रह जाएगा। यदि हम स्वर्ग जाकर अनंत काल तक वहीं रहें, तो भी यह कोई आनंद नहीं होगा। अब इन सभी परिस्थितियों में हम स्वर्ग में उस शाश्वत जीवन को, जिसमें उत्तम शरीर हो, अमरता का अर्थ नहीं पा सकते, न ही तुलना के लिए किसी भी स्थिति के बिना उसी प्रकार के स्वर्गीय सुखों का आनंद लेना अमरता का अर्थ है।
जो लोग यह मानते हैं कि अमरता का अर्थ व्यक्तिगत अमरता है, वे 'व्यक्तित्व' शब्द का अर्थ नहीं समझते। अब व्यक्तित्व का अर्थ क्या है? यह एक प्रकार का मुखौटा है, मन का आवरण है। हमने दोहरे, तिहरे और चौगुने व्यक्तित्वों के

बारे में पढ़ा है। इंग्लैंड में एक लड़की थी जिसके दस व्यक्तित्व थे, जिनमें से प्रत्येक अलग था। इसलिए व्यक्तित्व से हमारा तात्पर्य चेतना की किसी विशेष अवस्था से नहीं है। यह रंगमंच पर एक काल्पनिक चरित्र के समान है। जब आत्मा जीवन के नाटक में एक विशिष्ट चरित्र धारण करती है और एक विशिष्ट भूमिका निभाती है, तो वह विशिष्ट चरित्र उस समय के लिए विशिष्ट व्यक्तित्व बन जाता है। जब विभिन्न विचार विकसित होते हैं और विभिन्न प्रवृत्तियाँ और इच्छाएँ उत्पन्न होती हैं, तो नए व्यक्तित्व सामने आते हैं। तब हम अपने पुराने व्यक्तित्व को भूल जाते हैं। अतः, यदि हम अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण करें, तो हम पाएंगे कि यह रोग, क्षय और मृत्यु के अधीन है। इसलिए, व्यक्तित्व का अर्थ न तो इस लोक में और न ही स्वर्ग में कोई पूर्ण अपरिवर्तनीय अवस्था है।
कुछ लोगों का मानना है कि अमरता एक सशर्त वरदान है, जो प्राकृतिक रूप से प्राप्त नहीं होती, बल्कि ईश्वर द्वारा कुछ व्यक्तियों को दिया जाने वाला एक विशेष उपहार है। तब यह प्रश्न उठता है कि यह किस प्रकार का वरदान है और किन परिस्थितियों में प्राप्त होता है। यह कौन तय करेगा कि ईश्वर से यह वरदान प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को त्रुटि से कितने ऊपर होना चाहिए? कुछ लोग कह सकते हैं कि कुछ विशेष जीवन शैली, कर्म और भक्तिमय अभ्यास इस वरदान को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त हैं। फिर भी, यदि हम इन भक्तिमय अभ्यासों और मानसिक एवं शारीरिक कार्यों का विश्लेषण करें, तो हम पाएंगे कि हमारे सभी कर्म क्रिया और प्रतिक्रिया के नियम, या कारण और क्रम के नियम द्वारा संचालित होते हैं। प्रत्येक कारण का एक परिणाम अवश्य होता है। अब यदि परिणाम शाश्वत या अनंत है, तो कारण भी शाश्वत या अनंत होना चाहिए, क्योंकि एक सीमित कारण कभी भी अनंत परिणाम उत्पन्न नहीं कर सकता। यह प्रकृति के नियम के विरुद्ध है। अब हमारे कर्मों को अच्छा या बुरा कहें। यदि हम अपने जीवनकाल में, चाहे वह सौ वर्ष का ही क्यों न हो, अपने सभी अच्छे और बुरे कर्मों को जोड़ लें, तो वे असीमित नहीं हो सकते। अतः परिणाम भी असीमित नहीं हो सकता। तब यह समझ लें कि कारण भी असीमित होना चाहिए। ईश्वर भी उस नियम को नहीं बदल सकता, क्योंकि चाहे वह कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो, वह उसका अपना नियम है। क्या हम कारण और क्रम के नियम को एक पल के लिए भी रुकने की कल्पना कर सकते हैं? नहीं; अन्यथा पूरा ब्रह्मांड बिखर जाएगा। इसलिए जो लोग यह मानते हैं कि

79
ईश्वर प्रकृति के नियम को बदलता है, ऐसे दावे निराधार हैं। हम इन दावों पर बिल्कुल भी भरोसा नहीं कर सकते।
अतः ईश्वर किसी को भी अंधाधुंध मुफ्त उपहार नहीं दे सकता, क्योंकि धर्मशास्त्री कहते हैं कि उस उपहार को प्राप्त करने के लिए किसी न किसी प्रकार की भक्तिमय साधना आवश्यक है। अब यदि हम किसी भक्तिमय साधना पर निर्भर हैं, तो वह भी एक सीमित कारण है और उसका प्रभाव भी सीमित ही होगा। ऐसे में हमारे सभी अच्छे कर्मों के फल के रूप में शाश्वत जीवन असंभव है। हम उसे प्राप्त नहीं कर सकते, क्योंकि यह प्रकृति के नियमों के विरुद्ध होगा। इसलिए भारत के दार्शनिक इस कथन में विश्वास नहीं करते। वे अनेक स्वर्गों में विश्वास करते हैं। क्रिया और प्रतिक्रिया के नियम से वे यह समझाने का प्रयास करते हैं कि सांसारिक जीवन स्वर्गीय सुखों की तरह परिवर्तनशील है। इसलिए शाश्वत जीवन शाश्वत नहीं, बल्कि क्षणिक है। लाखों-करोड़ों वर्ष, अनंत काल की तुलना में, हमें प्रकाश की एक चमक के समान प्रतीत होंगे, क्योंकि यह क्षणिक है। इसलिए भारत के सभी महान दार्शनिकों ने कहा है: सर्वोच्च स्वर्ग से लेकर ब्रह्मांड की सीमा तक, ये सभी विभिन्न स्थान... अस्तित्व वृद्धि और परिवर्तन के अधीन हैं।
अच्छे कर्म करने वाले स्वर्ग जाते हैं, वहाँ अपने जीवनकाल तक रहते हैं और फिर किसी अन्य लोक में चले जाते हैं। वे इस पृथ्वी पर लौट सकते हैं, या यदि वे स्वर्ग जाते हैं, तो वहाँ हजारों वर्षों तक दिव्य सुखों का आनंद लेते हैं। लेकिन इसका अंत अवश्य होता है। भले ही हमें दिव्य शरीर प्राप्त हो जाएँ, वे शरीर परिवर्तनशील होते हैं। फिर उन दिव्य लोकों में निवास करने वाले सभी उच्च प्राणी, देवदूत और प्रधान देवदूत भी सीमित हैं। उनके पास मानसिक बोध हो सकता है, लेकिन फिर भी सीमाएँ हैं। और यह अवधारणा हमें वैदिक युग के महान विचारकों के लेखन के अलावा किसी अन्य धर्म या दर्शन में नहीं मिलती। क्योंकि प्राचीन वैदिक युग के विचारक और द्रष्टा गहन अध्ययन करते थे और इसलिए वे सुनी-सुनाई बातों को स्वीकार नहीं करते थे। ईश्वर का वह रहस्योद्घाटन, जो तर्क के अनुरूप नहीं है, हमारी इंद्रियों को स्पर्श नहीं करता, प्रकृति के सभी नियमों का पालन नहीं करता, सत्य नहीं हो सकता।
यदि ईसा मसीह अमर थे, तो हममें से प्रत्येक को जन्मसिद्ध अधिकार से यह प्राप्त होना चाहिए, अन्यथा ईसा मसीह को यह प्राप्त नहीं होता। एक

सार्वभौमिक नियम है, ठीक वैसे ही जैसे प्रकाश का नियम, क्रिया और प्रतिक्रिया का नियम, या कारण और क्रम का नियम। ये सभी एक समान हैं, और हम हर कदम पर इस नियम को लागू होते हुए पाते हैं। जैसा कि ईसाई विज्ञान कहता है:
प्रकृति के नियमों को जानें; यदि आप मसीह के सत्यों को इन नियमों के साथ सामंजस्य नहीं बिठा सकते, तो
आपने प्रकृति के बारे में कोई सत्य नहीं खोजा है।
स्वर्ग जाना अमरता की प्राप्ति नहीं है, और न ही दिव्य शरीर धारण करना। तो फिर अमरता का सच्चा अर्थ क्या है? क्या इस परिवर्तनशील संसार में कुछ भी अपरिवर्तनीय हो सकता है? यह प्रश्न मन को भी विचलित करता है।
1. भगवद् गीता अध्याय 8, श्लोक 16. बहुत समय पहले के 80 विचारकों ने, और आज के कांट, हक्सले और अर्न्स्ट हेकेल ने, अपरिवर्तनीय वास्तविकता और परम सत्य को खोजने का प्रयास किया है। लेकिन क्या वे वास्तव में इसे खोज पाए हैं? मुझे लगता है कि वे सफल नहीं हुए हैं।
इस सत्य की खोज करने वालों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। एक वर्ग भौतिकवादियों का है, जो आत्मा के अस्तित्व को भौतिक शरीर से अलग नहीं मानते और उनके अनुसार अमरता, ईश्वर और आत्मा से संबंधित सभी प्रश्न समय और ऊर्जा की व्यर्थता हैं। वे हर बात को पदार्थ और बल से ही समझने का प्रयास करते हैं। उनका कहना है कि बल अमर है, ऊर्जा अमर है, और बस इतना ही। लेकिन क्या हम विश्व के महान भौतिकवादी विचारकों के इन निष्कर्षों से संतुष्ट रह सकते हैं? भौतिकवादी विचारक केवल बीसवीं शताब्दी की देन नहीं हैं। प्राचीन काल में और यहाँ तक कि वैदिक युग में भी ऐसे लोग थे जो इंद्रियों की पहुँच से परे किसी भी चीज़ के अस्तित्व को नकारते थे। वे अमूर्त हर चीज़ का खंडन करते थे। उन्हें यह नहीं लगता था कि आत्मा शरीर से स्वतंत्र रूप से विद्यमान है। बल्कि वे आत्मा को भौतिक शरीर से ही जोड़ देते थे।
आधुनिक वैज्ञानिकों में भी आपको ऐसा वर्ग मिलेगा, और इसलिए उनके तर्क हमारे मन को संतुष्ट नहीं करते। भले ही वे हमें यह कहें कि आत्मा का अस्तित्व नहीं है, फिर भी भीतर से एक आवाज़ आती है, 'जाओ और फिर से खोजो, और तुम्हें कुछ बेहतर मिलेगा।' इसलिए यदि हम खोज जारी रखते हैं, तो हर कदम पर हमें भीतर से एक आवाज़ सुनाई देती है जो कहती है कि कुछ अमर है। अन्यथा अमरता का यह प्रश्न कभी उठता ही नहीं। क्योंकि अमरता की हमारी लालसा इतनी

प्रबल है कि हम इसका विरोध नहीं कर सकते। अपने आप को मृत मानकर देखें, लेकिन आप ऐसा नहीं कर सकते। आप अपने शरीर को मृत मान सकते हैं, लेकिन आप उसके बगल में खड़े होकर उसकी देखभाल कर रहे हैं। आप स्वयं को अस्तित्वहीन नहीं मान सकते, क्योंकि यह विचार कि आप मृत हैं या आपका अस्तित्व समाप्त हो गया है, यह मानता है कि आप उस विचार के प्रति सचेत हैं, और इसलिए आप ऐसा नहीं हो सकते। यदि हमारा संपूर्ण स्वभाव अनंत काल तक रहने के लिए नहीं बना था, तो हमारे मन में ऐसा विचार क्यों आता है? यह हमारे अस्तित्व का एक अभिन्न अंग है और हमें इसे पाने तक खोज जारी रखनी चाहिए। जो लोग यह मानते हैं कि शरीर और आत्मा अनंत काल तक रहते हैं, वे गलत हैं। परमाणु तो उत्पन्न होंगे ही, क्योंकि वे अविनाशी हैं। परन्तु भौतिक शरीर की तरह सूक्ष्म शरीर भी नश्वर है। सूक्ष्म सूक्ष्म रूप, जो कोशिकाओं के माध्यम से प्रकट होता है, वह भी नश्वर है; वह पार्थिव है। तो फिर हमारे अस्तित्व की अमर चिंगारी कहाँ है? शरीर के भीतर तथा मन और बुद्धि के क्षेत्रों में खोज करने के बाद वैदिक युग के महान विचारकों और ज्ञानी ऋषियों ने यह घोषित किया कि हमारी आत्मा अमर है।
आत्मा एक सूक्ष्म पदार्थ का पात्र है, जो हमारे चेतन अस्तित्व का स्रोत है और वह स्रोत अमर है। यह परिवर्तनशील है और इसे आत्मा कहते हैं। यह अहंकार के समान नहीं है, बल्कि यह अहंकार का ज्ञाता है। यह "मैं" के समान नहीं है, बल्कि वह है जिससे हम स्वयं को जानते हैं - मैं यहाँ खड़ा हूँ, मैं सुन रहा हूँ, और यही हमारा सच्चा अस्तित्व है।
81
आत्मा; यही आत्म है। आप कह सकते हैं: ‘हम ऐसी किसी चीज़ के अस्तित्व को कैसे जान सकते हैं?’ आपको बाहर खोजने की ज़रूरत नहीं है, क्योंकि यह पहले से ही भीतर है। लेकिन बताइए, क्या आप कभी अपने मस्तिष्क के प्रति सचेत रहते हैं? आप कहेंगे, नहीं, आप नहीं जानते कि आप मस्तिष्क के व्याख्याकार हैं। इसी प्रकार यह भी पूछा जा सकता है कि यदि चेतना का स्रोत पदार्थ का स्रोत है, तो पदार्थ को कौन जानता है? पदार्थ स्वयं को नहीं जानता, इसलिए पदार्थ के अलावा कोई और होना चाहिए, जो पदार्थ को जानता हो।
आधुनिक विज्ञान ने संपूर्ण ब्रह्मांड को तीन अवस्थाओं में विभाजित किया है और समझाया है कि ये अवस्थाएँ पदार्थ, ऊर्जा और चेतना हैं। ये तीनों अवस्थाएँ या तत्व ब्रह्मांड के मूलभूत सिद्धांत हैं। यदि आपने विज्ञान या

विश्व के किसी भी दर्शन का अध्ययन किया है, तो आपको ये तीनों तत्व मिलेंगे। लेकिन वास्तव में, पदार्थ और ऊर्जा अविभाज्य हैं। वे एक ही पदार्थ की विभिन्न अवस्थाएँ हैं।
फिर आती है तीसरी चीज़, चेतना। अधिकांश भौतिकवादी विचारक इस चेतना को पदार्थ और बल से अलग करने का प्रयास करते हैं, और आदर्शवादी पदार्थ और बल को मन या चेतना से अलग करने का प्रयास करते हैं। एक आधुनिक ईसाई वैज्ञानिक कहता है कि कोई पदार्थ नहीं है, सब कुछ मन और सब कुछ चेतना है। अब उनसे पूछिए कि मन से उनका क्या तात्पर्य है, और पदार्थ से उनका क्या तात्पर्य है। वे कहेंगे कि वे नहीं जानते। वास्तव में, ये तीनों, पदार्थ, बल और चेतना, अविनाशी, अमर और शाश्वत हैं। प्रश्न उठता है: तीसरे पदार्थ का स्वरूप क्या है? यदि पदार्थ अविनाशी है, बल अविनाशी है, तो चेतना का क्या होगा? क्या हमें इसे पदार्थ और बल का परिणाम मानना चाहिए, जैसा कि भौतिकवादी कहते हैं? जब आप पदार्थ की अवधारणा रखते हैं, तो यह चेतना की एक अवस्था है, अर्थात् ज्ञान। जब आप बल या ऊर्जा की अवधारणा रखते हैं, तो यह एक भौतिक अवस्था है। ये अविनाशी और अमर हैं। यदि चेतना की दो अवस्थाएँ अविनाशी हैं, तो स्वयं चेतना का स्वरूप क्या होगा? क्या यह अविनाशी होगा? यदि वृक्ष का फल अविनाशी और शाश्वत है, तो क्या आप यह मान सकते हैं कि वृक्ष नश्वर और नश्वर है? ये चेतना के वृक्ष के फल हैं, और यदि चेतना की दोनों अवस्थाएँ अविनाशी और शाश्वत हैं, तो चेतना का वृक्ष भी अविनाशी और शाश्वत है।
वास्तव में, हम अचेतन अवस्था में पदार्थ के अस्तित्व को नहीं जान सकते। किसी वैज्ञानिक को क्लोरोफॉर्म जैसी अवस्था में रखकर उससे पूछिए कि क्या वह पदार्थ के अस्तित्व के प्रति सचेत है। वह निश्चित रूप से कहेगा कि वह नहीं जानता, क्योंकि वह अचेतन है। आप एक परमाणु को सूक्ष्मदर्शी से देखकर उसे उपविभागों में विभाजित कर सकते हैं, जैसे कि इलेक्ट्रॉन या आयन। यदि ये अविनाशी और अविनाशशील हैं, तो दोनों अवस्थाएँ भी अविनाशी हैं। सर्वप्रसिद्ध वही है जो जानता है। पदार्थ नहीं जानता और ऊर्जा भी नहीं जानती, और यही जानने वाला हमारा सच्चा स्वरूप है। यह हमसे दूर नहीं है, बल्कि हमारे भीतर का सबसे गहरा अस्तित्व है।

82

आपकी मानसिक स्थिति बदल सकती है, आप क्रोधित हो सकते हैं, आपमें कोई और जुनून जाग सकता है, कोई विशेष इच्छा हो सकती है, आप शरीर के बारे में सोच सकते हैं, और आप स्वयं को दुष्ट या आध्यात्मिक समझ सकते हैं, लेकिन हर समय आप जानते हैं कि ये भावनाएँ आपकी चेतना की विभिन्न अवस्थाएँ मात्र हैं। यह आत्मा या आपके व्यक्तित्व की पृष्ठभूमि है, ठीक उसी प्रकार जैसे कैनवास की पृष्ठभूमि होती है, जिस पर दिव्य हाथों से आपका व्यक्तित्व चित्रित किया गया है। आप चित्र बदल सकते हैं, लेकिन कैनवास हमेशा वही रहेगा। हम अपने सच्चे स्वरूप को जान सकते हैं, जो दिव्य सुख से भी अधिक स्थायी होगा, और जो स्वयं ईश्वरत्व के समान शाश्वत होगा।
किताबें इस सत्य को प्रकट नहीं करेंगी। किताबों, शास्त्रों और उनकी व्याख्याओं को पढ़कर हम परम सत्य को नहीं जान सकते। हम अपने अमर स्वरूप को न तो विचार से, न कर्म से, न ही भक्ति से समझ सकते हैं, परन्तु अपने हृदय में खोज करने से हम अपने अमर स्वरूप को समझ सकते हैं। चेतना के स्रोत को भौतिक वस्तुओं से उसके आसक्ति से अलग करें, अपने स्वभाव का विश्लेषण करें और विवेक करें, और फिर देखें कि आपमें कौन सा अंश अपरिवर्तनीय है, जैसे शरीर, इंद्रियों, बुद्धि, बोध और भावनाओं का ज्ञाता साक्षी होता है। अपने हृदय की गुफा में प्रवेश करें और आप आत्मा को जान पाएंगे। एकाग्रता और ध्यान के अभ्यास से आप अतिचेतना की अवस्था में प्रवेश करेंगे और वहाँ आप मुक्त हो जाएंगे। वहाँ आप यह अनुभव करेंगे कि आप शरीर से परे हैं, मन से परे हैं, बुद्धि से परे हैं और मृत्यु से भी परे हैं। तब मृत्यु आपको छू नहीं सकती, और मृत्यु का भय आपसे सदा के लिए विलीन हो जाएगा। तब तुम जानोगे कि आग तुम्हें जला नहीं सकती, पानी तुम्हें गीला नहीं कर सकता, हवा तुम्हें सुखा नहीं सकती और तलवारें तुम्हें भेद नहीं सकतीं, बल्कि तुम अमर, अपरिवर्तनीय, शाश्वत, अनंत और दिव्य हो।
तब मृत्यु का भय नहीं रहता। क्योंकि सभी भय अज्ञान और स्वार्थ से उत्पन्न होते हैं, और जब आप सभी अज्ञान को दूर कर देते हैं, तो दिव्य प्रकाश प्रकट होता है, ज्ञान का सूर्य आपके मानसिक तल के क्षितिज पर चमकता है, और वहाँ आप शाश्वत सत्य का प्रकाश देखते हैं, और तब आप वास्तविक और अमर को देखते हैं। यदि आप हिंदू शास्त्रों का अध्ययन करेंगे, तो आप पाएंगे कि अमरता का दिव्य विचार हिंदू शास्त्रों का सर्वोच्च आदर्श है। लेकिन इसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है? यह अपने अमर स्वरूप के प्रति सचेत होकर प्राप्त

होगा। क्योंकि जानना ही अस्तित्व है। जब आप स्वयं को अमर जानते हैं, तो आप अमर हो जाते हैं। लेकिन यदि आप स्वयं को एक सीमित भौतिक वस्तु मानते हैं, तो आप मरने वाले हैं। हमारा सारा ज्ञान चेतना की एक अवस्था है। इसलिए यदि आप चेतना की इस अवस्था को बदल देते हैं, तो आप कभी नहीं मरेंगे। क्योंकि आप स्वयं अपरिवर्तनीय सिद्धांत हैं, इसलिए किसी भी प्रकार का परिवर्तन आपको प्रभावित नहीं करेगा। परिवर्तन क्षणभंगुर और अवास्तविक है, लेकिन आप अमर हैं। जब आप ईश्वर को जान लेते हैं, तो आपने सब कुछ प्राप्त कर लिया है। ईश्वर को जानना ही ईश्वर होना है - "ब्रह्मविद ब्रह्मैव"।

1. भगवद् गीता अध्याय 2, श्लोक 23 और 24. 83 भवति 1.” अतः यदि तुम ईश्वर को जानना चाहते हो, तो तुम्हें अपने सच्चे स्वरूप को जानना होगा जो अमर, दिव्य, शाश्वत, अनंत और एक है।

1. मुंडक उपनिषद (जिसे मुंडकोपनिषद भी कहा जाता है) अध्याय 3, खंड 2, श्लोक
9. 84

अध्याय X

अध्यात्मवाद
हमारे मन में अक्सर यह सवाल उठता है कि मृत्यु के बाद क्या होता है। यह सवाल आज भी उठता है और हमेशा उठता रहेगा। यही सवाल राजाओं और भिखारियों ने, ऋषियों और संतों ने, और दुनिया भर के सभी देशों के दार्शनिकों, विचारकों और धर्मगुरुओं ने पूछा है। हम आज इस पर चर्चा कर रहे हैं, और कल यही सवाल दूसरों के मन में फिर उठेगा। हो सकता है कि अभी हम भूल जाएं, और शरीर की मृत्यु के बाद की स्थिति पर ध्यान न दें, लेकिन वह समय अवश्य आएगा जब हम जागेंगे और यही सवाल पूछेंगे। हो सकता है कि हम अपने दैनिक कार्यों में, जीवन-यापन के संघर्षों में, और हर दिन आने वाली परेशानियों और कठिनाइयों में इतने मग्न हो जाएं कि हम भूल जाएं कि मृत्यु के बाद हमारा जीवन होगा या मृत्यु के बाद क्या होगा। लेकिन जैसे ही हम किसी को मरते हुए देखते हैं, अपने रिश्तेदारों को, अपने सबसे प्यारे और करीबी दोस्तों को शरीर छोड़कर जाते हुए देखते हैं, हम रुक जाते हैं और सोचने लगते हैं कि वे कहां चले गए। शरीर का क्या हुआ? शरीर तो सड़ने वाला है। आखिर वो चीज़ क्या थी जिसने इसे जीवित रखा और अब वो कहाँ चली गई? यही सवाल बार-बार उठेगा और हमारे मन की शांति भंग करेगा। जब तक हमें इस सवाल का सही हल नहीं मिल जाता, तब तक हमें मन की शांति नहीं मिल सकती।
लेकिन इस समस्या का हल खोजने से पहले ही, हमारी खोज के आरंभिक चरण में ही हमारे सामने एक ऐसी अभेद्य दीवार खड़ी हो जाती है जिसे तोड़ना लगभग असंभव है। कमजोर बुद्धि वाले यहीं रुक जाते हैं। कमजोर दिमाग और उनके कमजोर प्रयास उस दीवार को पार करने में असफल हो जाते हैं, जो कि केवल यह विश्वास है कि शरीर आत्मा का स्रोत है और आत्मा इस स्थूल भौतिक शरीर की क्रियाविधि का परिणाम है। यह लोकप्रिय मान्यता कि प्रत्येक आत्मा मृत्यु के बाद पुनर्जीवित होगी, क्योंकि एक विशेष व्यक्ति का किसी विशेष समय पर चमत्कारिक पुनरुत्थान हुआ था, अब हमारे मन को भाती नहीं है। हम मूर्खतापूर्ण विश्वास और अंधविश्वास की उन अवस्थाओं से ऊपर उठ चुके हैं। हम पुख्ता प्रमाण चाहते हैं। हम इस विषय पर मनोवैज्ञानिक, आध्यात्मिक और

वैज्ञानिक रूप से चर्चा करना चाहते हैं। अब देखते हैं कि क्या यह सिद्धांत कि शरीर आत्मा का स्रोत है, सही है।
आत्मा के अस्तित्व को सिद्ध करने के प्रयासों में तीन सिद्धांत दिए गए हैं: पहला है उत्पादन सिद्धांत, दूसरा है संयोजन सिद्धांत और तीसरा है संचरण सिद्धांत। उत्पादन सिद्धांत नास्तिकों, अज्ञेयवादियों, भौतिकवादियों और विकासवादियों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत है। उनका मानना है कि शरीर आत्मा का उत्पादन करता है, लेकिन वे इस प्रश्न का उत्तर नहीं देते कि शरीर आत्मा का उत्पादन कैसे कर सकता है, जो विचारों का समूह है, या ऊर्जा का समूह है।

बुद्धि, या वे इसे जो भी नाम दें। ये भौतिकवादी विचारक आपको बता सकते हैं कि शरीर अन्य शरीरों से बनता है, अर्थात् माता-पिता के शरीरों से। लेकिन वह कौन सी शक्ति है जो पदार्थ के सभी अणुओं और कणों को एक साथ बांधे रखती है और उन्हें जोड़ती है, जिससे आपका शरीर एक विशेष रूप में और मेरा शरीर दूसरे रूप में बनता है? ये भेद किस कारण से होते हैं? वे इन प्रश्नों का उत्तर नहीं देते। वे कहते हैं कि यह हमारे लिए अज्ञात है और एक रहस्य है, लेकिन माता-पिता के शरीर बच्चों के शरीरों को जन्म देते हैं और यह सत्य है। लेकिन माता-पिता के शरीर का निर्माण कौन करता है? वे कहते हैं कि उनके माता-पिता ही शरीर का निर्माण करते हैं। लेकिन यह सही उत्तर नहीं है। इस सिद्धांत को समझाने के प्रयास में, वे उन बलों को समझाए बिना ही पदार्थ का एक और संयोजन प्रस्तुत कर देते हैं जो इन स्थितियों को संयोजित और पूर्व-निर्मित करते हैं। वे केवल एक दावा करते हैं और वह दावा एक भ्रांति की ओर ले जाता है कि शरीर शरीर का निर्माण करता है, लेकिन यह मानव शरीर के निर्माण का वास्तविक कारण नहीं है। यह परिणाम से कारण को समझाने जैसा है; यह उल्टी बात करने जैसा है। इसलिए यह व्याख्या हमारे मन को भाती नहीं है। साथ ही, हम देखते हैं कि शरीर विज्ञानियों, चिकित्सकों और रोग विज्ञानियों के बीच यह मान्यता है कि शरीर ही विचार, बुद्धि, चेतना और मन जैसी आत्माओं का निर्माण करता है। कुछ ने तो मन के विशिष्ट कार्यों को मस्तिष्क के कुछ विशेष भागों में स्थापित करने तक का प्रयास किया है। उदाहरण के लिए, जब हम अपने सामने की वस्तुओं को देखते हैं, तो मस्तिष्क की कुछ विशेष तंत्रिकाएं उत्तेजित होती हैं, और जब हम कोई ध्वनि सुनते हैं, तो हमारे कान के पर्दे

उत्तेजित होते हैं, इत्यादि। उत्पादन सिद्धांत में विश्वास रखने वाले लोग कहते हैं कि मन मस्तिष्क के कार्यों और तंत्रिका अवस्थाओं से जुड़ा हुआ है, और वे यह समझाने का प्रयास करते हैं कि जब तक मस्तिष्क सक्रिय रहता है, मन विद्यमान रहता है; लेकिन जब मस्तिष्क अपना कार्य करना बंद कर देता है, तो मन मृत हो जाता है, क्योंकि मन मस्तिष्क के कार्यों से स्वतंत्र रूप से जीवित नहीं रह सकता। उनका सिद्धांत यह है कि कुछ विशेष संवेदनाएं हमारी तंत्रिकाओं के माध्यम से आती हैं और मस्तिष्क के विशिष्ट कार्यों द्वारा मस्तिष्क में समाहित हो जाती हैं। ये विचार, भावनाएँ, संवेदनाएँ, चेहरे के भाव, वाणी आदि में रूपांतरित हो जाते हैं। जिस प्रकार भोजन पेट में जाने के बाद पाचन क्रिया द्वारा विभिन्न तत्वों में परिवर्तित हो जाता है, और जिस प्रकार पेट पाचन क्रिया करता है तथा यकृत पित्त स्रावित करता है, उसी प्रकार मस्तिष्क विचार, बुद्धि और चेतना उत्पन्न करता है। यही उनका तर्क है। उनके अनुसार, ये छापें भौतिक शरीर या शरीर-पदार्थों के समान हैं जो हमारी नसों में प्रवेश करते हैं और मस्तिष्क में पहुँचकर तुरंत विचार, बुद्धि, अवधारणा आदि में परिवर्तित हो जाते हैं।
लेकिन जब हम मस्तिष्क का ठीक से परीक्षण करते हैं, तो पाते हैं कि मनुष्य अपने मस्तिष्क के आधे हिस्से के रोगग्रस्त और क्षीण होने पर भी जीवित रह सकता है और अपने कार्य कर सकता है। ऐसे मामलों पर प्रयोग किए गए हैं और उन्हें दर्ज किया गया है। न्यू यॉर्क में एक महान चिकित्सक और चिकित्सा विशेषज्ञ हैं।
86
यॉर्क सिटी के रूजवेल्ट अस्पताल में डॉक्टर थॉम्पसन एक विशेषज्ञ हैं। उन्होंने एक पुस्तक लिखी है जिसमें उन्होंने पोस्टमार्टम के बाद प्राप्त रिकॉर्ड और आंकड़ों का वर्णन किया है। एक व्यक्ति ने अपने मस्तिष्क का आधा हिस्सा खो दिया था। वह पूरी तरह से नष्ट हो गया था और अपने पूरे जीवन में उसे पता नहीं चला कि कब उसने अपने मस्तिष्क का आधा हिस्सा खो दिया था, लेकिन इससे उसके जीवन शैली, विचारों और व्यवसाय में कोई बदलाव नहीं आया। वह मस्तिष्क के उस आधे हिस्से का उपयोग कर सकता था जो अच्छी स्थिति में था और उससे दोनों हिस्सों के कार्य करवा सकता था।
जो व्यक्ति अपने दाहिने हाथ का उपयोग करता है, उसके मस्तिष्क का वाक् केंद्र बाएँ भाग में स्थित होता है। यह इस युग के वैज्ञानिकों द्वारा

होती हैं। स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाई जाने वाली कुछ मनोविज्ञान की कक्षाएं यह विचार सिखाती हैं कि
चेतना एक धारा है और एक जटिल वस्तु है, जो भावनाओं की धारा से बनी होती है। जब ये धाराएँ तंत्रिकाओं, गैंग्लिया और कॉर्टिकल दीवारों से होकर गुजरती हैं, तो कॉर्टिकल दीवारें प्रतिरोध उत्पन्न करती हैं। यह प्रतिरोध एक प्रकार की तंत्रिका-चमक या सफेद ऊष्मा-चमक उत्पन्न करता है, और यही चमक उनकी चेतना है। यह एक बहुत ही बेतुका विचार है।
हमारे पास इससे भी बेहतर एक और व्याख्या है, जो संचरण सिद्धांत द्वारा दी गई है और अधिक संतोषजनक है। इस सिद्धांत के अनुसार, आत्मा या मन मस्तिष्क से बाहर है। यह मस्तिष्क का परिणाम नहीं है, बल्कि एक प्रकार की आत्म-जागरूक इकाई है जो मस्तिष्क का उपयोग करती है, ठीक वैसे ही जैसे एक संगीतकार पियानो का उपयोग करता है और कुंजियों को बजाता है। अब यह सिद्धांत आम तौर पर सभी अध्यात्मवादियों, धर्मवादियों, तत्वमीमांसाविदों और दार्शनिकों द्वारा स्वीकार किया जाता है, और वे आत्मा की सच्ची भाषा और शरीर के साथ उसके संबंध को समझते हैं।
जो लोग संचरण सिद्धांत में विश्वास नहीं करते, वे यह नहीं समझा सकते कि अमेरिका की साइकिकल रिसर्च सोसाइटी और यूरोप तथा अन्य जगहों पर दर्ज की गई ऐसी घटनाएं, जैसे कि 'डबल' का प्रकट होना, कैसे घटित होती हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए आप अपने कमरे में बैठे हैं, पूरी तरह सचेत अवस्था में हैं, एक रॉकिंग चेयर या सोफे पर आराम कर रहे हैं, आप अकेले हैं और आपका मन किसी काम या समस्या से बहुत विचलित है। आपको नहीं पता कि इसका क्या हल निकालना है। मान लीजिए कमरे में या घर में कोई भी आपको परेशान करने या किसी भी तरह से हस्तक्षेप करने वाला नहीं है। आपका दरवाजा बंद है। अब अचानक आप अपना 'डबल' देखते हैं। यह कुछ ऐसा है जो बिल्कुल आपके जैसा है, आपसे बाहर आता है, डेस्क पर जाता है, हाथ में कागज और पेंसिल लेता है, आपकी समस्या का हल निकालता है और कागज पर उत्तर लिख देता है। फिर आप मानो सपना देख रहे होते हैं, और अचानक आप जाग जाते हैं, अपने डेस्क पर जाते हैं और आपको हल मिल जाता है। आपको याद आता है कि आपने अपना 'डबल' देखा था, लेकिन आप नहीं जानते कि वह क्या है। यह एक प्रेत की तरह है। ऐसे कई उदाहरण सामने आए हैं।
आप इसकी व्याख्या कैसे करेंगे? यह किसने किया है? क्या कोई और व्यक्ति बाहर से आपके समान सूक्ष्म रूप में प्रकट हुआ? भले ही आप यह मानते हों कि

बुद्धि या कोई बुद्धिमान सत्ता अस्तित्व में है जो भौतिक शरीर के बिना भी विद्यमान हो सकती है, यह आपके मन को संतुष्ट कर सकता है, लेकिन इन मामलों की व्याख्या संचरण सिद्धांत के अलावा किसी अन्य सिद्धांत से नहीं की जा सकती। यह संचरण सिद्धांत हमें बताता है कि यह प्रतिरूप व्यक्ति का सूक्ष्म आत्म है और यह सूक्ष्म आत्म स्थूल भौतिक शरीर से स्वतंत्र रूप से विद्यमान हो सकता है; और यह सूक्ष्म आत्म प्रकट होकर सूक्ष्म रूप धारण कर सकता है और ऐसे अनेक कार्य कर सकता है जो हमारा सामान्य जागृत मन नहीं कर सकता। कभी-कभी मृत्युशय्या पर रहने वाले व्यक्ति के रिश्तेदार और मित्र भी इस सूक्ष्म प्रतिरूप को देख लेते हैं।
यह पाया गया है कि मरने वाले व्यक्तियों का अपने बच्चों से बहुत गहरा लगाव हो सकता है। यदि उनके बच्चे अनाथ होने वाले हैं, यदि उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है, और यदि उनके रिश्तेदार
88 दूर हैं, अपने बच्चों की मदद करने की उनकी प्रबल इच्छा उन्हें अपने सूक्ष्म शरीर या पराकाष्ठा को प्रकट करने और रिश्तेदारों के सामने आकर अचानक संदेश देने के लिए प्रेरित करती है। कभी-कभी यह व्यक्ति की मृत्यु के बाद होता है, और अधिकतर मामलों में, यह मृत्यु के समय, ठीक उस क्षण होता है जब व्यक्ति शरीर त्याग रहा होता है या उससे एक मिनट पहले। दोनों प्रकार के उदाहरण दर्ज हैं। अब, यदि आप आत्मा के संचरण के सिद्धांत में विश्वास नहीं करते हैं, तो आप इन्हें कैसे समझाएँगे? यदि आत्मा मस्तिष्क की क्रियाओं का परिणाम है, तो सब कुछ समाप्त हो जाएगा। लेकिन यह तथ्य नहीं है। इन प्रयोगों ने सिद्ध किया है कि आत्मा या व्यक्तित्व या एक ऐसी सत्ता है जो आत्म-जागरूक है और जो स्थूल भौतिक शरीर के त्याग के बाद भी जीवित रहती है।
वेदांत संचरण सिद्धांत को स्वीकार करता है। यह हमें बताता है कि पदार्थ ब्रह्मांड का एक भाग है जो वस्तु है, और मन ब्रह्मांड का दूसरा भाग है जो विषय है। ब्रह्मांड का एक भाग दूसरे भाग को उत्पन्न नहीं कर सकता, इसलिए वे साथ-साथ विद्यमान रहते हैं। वे आरंभ से ही विद्यमान हैं। यही मन और पदार्थ का अस्तित्व है। पदार्थ बोध का विषय है, और मन बोधकर्ता है। इसलिए, यदि आप में बोधकर्ता विषय न हो, तो आप पदार्थ का कोई बोध या अनुभूति नहीं कर सकते। पदार्थ का हमारा ज्ञान हमारे मन की एक अवस्था मात्र है। यह चेतना की अवस्था है। यह चेतना पदार्थ की किसी भी अवस्था, या पदार्थ के हमारी

इंद्रियों के संपर्क से उत्पन्न होने वाली किसी भी संवेदना या भावना से पूर्व होनी चाहिए। चेतना, या आत्मचेतना की प्राथमिकता को कोई नकार नहीं सकता। यदि आप अचेतन हैं, तो आप कोई अनुभूति नहीं कर सकते।
तो आप देख सकते हैं कि हमारा हर अनुभव कमोबेश व्यक्तिपरक होता है। जिसे हम पदार्थ का ज्ञान कहते हैं, वह केवल वस्तु का व्यक्तिगत ज्ञान है, लेकिन उस ज्ञान का एक बड़ा हिस्सा व्यक्तिपरक होता है, यानी हम अपने मन के प्रति सचेत रहते हैं। हम अपने मन से बाहर नहीं निकल सकते। हम कुर्सी या मेज पर जाकर यह पता नहीं लगा सकते कि वहाँ क्या हो रहा है और मेज हमारी इंद्रियों को कैसे प्रभावित करती है और संवेदनाएँ उत्पन्न करती है; यदि ऐसी संवेदनाएँ हमारे मन की चेतना की अवस्थाएँ हैं, तो हम जानते हैं कि मेज या कुर्सी जैसी कोई चीज है; अन्यथा हम ऐसा कभी नहीं कर सकते।
अब, एक वैज्ञानिक तथ्य यह है कि गति से केवल गति ही उत्पन्न होती है। लेकिन हमारी चेतना या बुद्धि गति नहीं है। क्या आप इसका खंडन कर सकते हैं? नहीं, यह गति से परे है। यह वह है जो गति को समझता और जानता है। तो गति मस्तिष्क की गतिविधि, अणुओं, तंत्रिकाओं और मस्तिष्क कोशिकाओं की गतिविधि को कैसे उत्पन्न कर सकती है? वह गति ऐसी किसी चीज को कैसे उत्पन्न कर सकती है जो स्वयं को जानती हो? यह सभी भौतिकवादी सिद्धांतों के विरुद्ध एक प्रमाण है। इसलिए यह कहना कि आत्मा मस्तिष्क की क्रिया का परिणाम है, जो कि बुद्धिमान इकाई है, असंभव है।

89
मन की उस प्राथमिकता का जिक्र करते हुए, उदाहरण के लिए, जब आप किसी मस्तिष्क का विच्छेदन करते हैं और उसमें आपको स्वयं-अस्तित्व या स्वयं- चेतन जैसी कोई चीज नहीं मिलती, तो आप आत्मा के अस्तित्व को नकार देते हैं। इस विशेष मामले में मस्तिष्क के अस्तित्व को नकारने से ही यह धारणा बनती है कि एक और मन है जो इस तरह सोचता है - विच्छेदन करने वाले का मन। अतः हर स्थिति में, आपके द्वारा बनाई जा सकने वाली किसी भी धारणा से पहले मन की प्राथमिकता होती है। यदि आप कहते हैं कि आपके पास आत्मा नहीं है, तो यह उतना ही बेतुका होगा जितना कि यदि मैं इस समय कहूँ कि मेरे पास जीभ नहीं है। मैं बोलते समय जीभ का उपयोग कर रहा हूँ, और यदि मैं जीभ के अस्तित्व को नकारता हूँ, तो मैं मूर्ख हूँगा। इसी प्रकार, यदि आप स्वयं को एक स्वयं-

चेतन इकाई के रूप में अस्तित्वहीन मानते हैं, तो आप इसे नकारते समय उस स्वयं-चेतन इकाई को आधार बना रहे हैं, जो बेतुका और हास्यास्पद होगा। अब, यह समझने के बाद कि आत्मा वह आत्म-जागरूक सत्ता है जो सभी भौतिक परिस्थितियों से पहले विद्यमान है और गति का परिणाम नहीं है, हम यह प्रश्न पूछते हैं कि क्या वह आत्मा अपनी विशिष्टता को बनाए रख सकती है। यहाँ आप विशिष्टता और व्यक्तित्व के बीच थोड़ा अंतर देखेंगे। कई लोग इन दोनों में भ्रमित हो जाते हैं।
कुछ लोग व्यक्तित्व को वैयक्तिकता और वैयक्तिकता को व्यक्तित्व समझ लेते हैं। लेकिन हम इन दोनों शब्दों की जड़ तक जाएंगे और इनके मूल अर्थ को समझेंगे, जिससे भ्रम दूर हो जाएगा। व्यक्तित्व शब्द लैटिन शब्द 'पर्सोना' से आया है, जिसका अर्थ है मुखौटा। व्यक्तित्व वह विशेष चेतना है जो भौतिक शरीर से जुड़ी होती है। इस प्रकार, आप श्रीमान या श्रीमती या कुमारी फलां- फलां हैं। यही आपका व्यक्तित्व है। आप एक सक्रिय व्यक्ति हैं; आप एक व्यवसायी हैं; आपको भूख और प्यास लगती है और शरीर की सभी सीमाएं हैं। यही वह मुखौटा है जिसे व्यक्ति इस समय धारण किए हुए है।
लेकिन व्यक्तित्व वह है जो शरीर से परे है और अविभाज्य है। जो अविभाज्य है, उसे आप अपने "मैं" की भावना की तरह काट या विचलित नहीं कर सकते। यह एक अविभाज्य धारा के समान है। यह एक ही विचार की निरंतरता है, "मैं" का विचार। मैं एक स्कूली छात्र था और अपने सहपाठियों के साथ खेलता था। उसी "मैं" ने इन सभी अनुभवों को जिया है। अब मैं यहाँ खड़ा या बैठा हूँ और यही मेरी पहचान, आधार या व्यक्तित्व है जो अविभाज्य है। यह आपके आध्यात्मिक स्व या आध्यात्मिक चेतना का गुण है। इसका आपके व्यक्तित्व से कोई संबंध नहीं है। अब वह व्यक्तित्व यहाँ रह सकता है और बदल सकता है; लेकिन आपका व्यक्तित्व, "मैं" की भावना कभी नहीं बदल सकती, क्योंकि वह "मैं" की भावना आपके साथ बनी रहेगी, चाहे आप कहीं भी जाएँ। आप एक ऊर्जा इकाई हैं, और वह इकाई एक आत्म-जागरूक इकाई है, और जब आप इस शरीर को छोड़ते हैं, तो आप उस "मैं" की भावना को अपने साथ ले जाते हैं, चाहे आपका स्थूल शरीर हो, सूक्ष्म शरीर हो या कारण शरीर हो।
आपमें हमेशा "मैं" का बोध रहता है। सपने देखते समय भी आपको यह बोध होता है; गहरी नींद में भी यह बोध बना रहता है; अन्यथा आपको याद ही नहीं रहता कि आप सोए थे और आपको कोई सपना नहीं आया। आप इस "मैं" के बोध से तब तक छुटकारा

आत्मा का आगे कोई विकास नहीं होता। आध्यात्मिक नियमों को समझने वाले लोग कभी युद्ध का समर्थन नहीं करते, क्योंकि हमें किसी व्यक्ति का जीवन लेने का अधिकार नहीं है, विशेषकर अपने उन भाइयों का जो इस संसार में अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए आए हैं। उनकी सहायता करने के बजाय, हम तलवारों और युद्ध के सभी प्रकार के हथियारों से उनका जीवन छीन रहे हैं, उन्हें अचानक ही समाप्त कर रहे हैं। यह एक भयावह स्थिति है, और शरीर त्यागने के बाद आत्माएं अचेतन अवस्था में चली जाती हैं। उन्हें पता नहीं होता कि वे कहां हैं। वे घोर भ्रम में पड़ जाती हैं। उन्हें किसी ऐसे व्यक्ति की मदद की ज़रूरत होती है जो उनका मार्गदर्शन करे और उन्हें यह एहसास दिलाए कि उन्होंने अपना शरीर छोड़ दिया है। उन्हें अपनी खोई हुई चेतना को पुनः प्राप्त करने के लिए सहायता की आवश्यकता होती है।
अब मुझे एक कहानी याद आ रही है, जो लॉस एंजिल्स शहर के एक निवासी की ओर से एक संदेश के रूप में कही गई थी, जिनका 1913 में निधन हो गया था। वे सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश थे और माना जाता था कि वे कुछ मित्रों के माध्यम से इस दुनिया से संवाद स्थापित करना चाहते थे।
प्रथम विश्व युद्ध के दौरान, उस महिला की हालत बेहद दयनीय थी, जिससे वह परलोक में मिला था और जिसे वह इस भौतिक संसार में जानता था। वह एक गेस्ट हाउस में रहती थी और मृत्यु के बाद भी वहीं रह रही थी। वह गोमांस, मांस और आलू खाती थी, लेकिन उसे कॉफी पसंद नहीं थी। कॉफी बहुत घटिया थी और वह शिकायत करती रही। उसने कहा, “यह बहुत बुरा है। मैं अपने दोस्तों के साथ मेज पर नहीं बैठ सकती। और आलू भी अच्छे नहीं हैं।” फिर भी उसे भूख लगी थी और उसने खाना खाया।
अब इससे हमें यह अंदाजा लगता है कि जब हम पृथ्वी पर होते हैं तो क्या कर सकते हैं। उसे यह एहसास नहीं था कि उसका देहांत हो गया है, बल्कि वह सोचती थी कि वह अभी भी जीवित है। उसे यह अजीब लगता था कि उसके पास इस दुनिया में जो दोस्त थे, उनसे बेहतर या वैसे दोस्त यहाँ नहीं हैं। इससे पता चलता है कि हम अपनी सभी इच्छाओं को मृत्यु के बाद अपने साथ ले जाते हैं और अपने विचारों से ही इन सुख-सुविधाओं का निर्माण करते हैं। मृत्यु के बाद का लोक साकार आदर्शों या साकार विचारों का लोक है। अगर हम रोटी के टुकड़े के बारे में सोचते हैं, तो रोटी हमारे सामने होती है और हम उसे खाते हैं। अगर हमें भूख लगती है, तो हम खाते हैं। अगर हम कॉफी के बारे में सोचते हैं, तो हम

कॉफी पीते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि यह समझना कितना महत्वपूर्ण है कि अगर हम इस जीवन में किसी विशेष प्रकार के भोजन, किसी विशेष प्रकार के वस्त्र, गहने या किसी भी चीज से आसक्ति के साथ मरते हैं, तो हम उस आसक्ति को अपने साथ ले जाते हैं और अपनी इच्छा से ही परलोक में उन चीजों को और भी सूक्ष्म पदार्थों से निर्मित करते हैं।
आत्माओं की प्रगति को सीमित करने वाली इन संकीर्ण अवस्थाओं से मुक्ति पाने और आगे बढ़ने के बजाय, हम इन्हें अपने साथ लिए फिरते हैं और सोने से लेकर जागने तक इनका आनंद लेते रहते हैं। यदि हमारे अच्छे विचार और अच्छे कर्म हमारी सहायता करें, तो हम प्रगति करते रह सकते हैं। परन्तु कई दिवंगत आत्माएँ लंबे समय तक इस भ्रम की अवस्था में ही रहती हैं। हमारा समय आत्माओं को प्रभावित नहीं करता। हमारे हज़ार वर्ष उनके लिए पाँच दिन के समान हो सकते हैं, क्योंकि हमारा समय हमारे मानक के अनुसार है और उनका उनके मानक के अनुसार। इसलिए कोई नहीं कह सकता कि कोई आत्मा किसी विशेष अवस्था में कितने समय तक रहेगी, परन्तु यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि हम अपना भविष्य स्वयं बनाते हैं, अपना भाग्य स्वयं बनाते हैं और अपने चरित्र का निर्माण अपने विचारों और कर्मों से करते हैं।
ऐसा नहीं है कि हम अचानक रूपांतरित हो जाते हैं और पंख उगा लेते हैं, बल्कि यह वर्तमान जीवन की निरंतरता है। मृत्यु के बाद का जीवन, दूसरे लोक में इसी जीवन की निरंतरता है। लेकिन यह कोई स्थान नहीं है। यहाँ कोई स्थानिक संबंध नहीं है। यह एक पहिये के भीतर दूसरे पहिये की तरह है। जैसे आप विभिन्न वाद्ययंत्रों की ध्वनियाँ सुन सकते हैं, एक की ध्वनि धीमी और दूसरी की तेज़ हो सकती है, और दोनों एक-दूसरे को प्रभावित किए बिना मौजूद रह सकती हैं। साथ ही, आप दोनों की ध्वनियाँ सुन सकते हैं। इसी प्रकार, इस पृथ्वी के चारों ओर एक आध्यात्मिक जगत है। यह चौथी विमा के समान है। यह एक दूसरे लोक में है। इस भौतिक लोक में जो कुछ भी विद्यमान है, वह वहाँ विद्यमान नहीं है, क्योंकि वहाँ स्थानिक संबंध नहीं हैं।

92
जो लोग स्वर्ग में दृढ़ आस्था रखते हैं, जहाँ फ़रिश्ते ईश्वर की स्तुति करते हैं, जहाँ रविवार को शहर में जैसी शांति होती है, सब कुछ बंद होता है, या किसी शांत गिरजाघर में शांति होती है, वे वहाँ स्वर्ग पा लेंगे।

कुछ नए अनुभव प्राप्त करेंगे। और यह एक बड़ा आशीर्वाद है, अन्यथा एक ही धुन पर बार-बार बजाना नीरस हो जाता। मुझे इसमें आनंद नहीं आता। आपको शायद आता, क्योंकि आपको यह विश्वास दिलाया गया है कि यह एक उच्च अवस्था है।

93
तो शर्त यह है कि मृत्यु के बाद भी हम जीवित रहते हैं और विभिन्न लोकों में विचरण करते हैं जहाँ हम कुछ विशेष शक्तियाँ विकसित करते हैं और प्रत्येक लोक में अपार संभावनाएँ और क्षमताएँ निहित होती हैं। आपको यह नहीं सोचना चाहिए कि एक ही लोक में सत्तर वर्षों का जीवन आपका अस्तित्व समाप्त कर देगा। ऐसा संभव नहीं है। ईसाइयों को यह सिखाया गया है कि प्रभु ने उन्हें जन्म के समय सृजित किया और वे अचानक शून्य से प्रकट हुए और वे अनंत काल तक जीवित रहेंगे। यह संभव नहीं है, क्योंकि शाश्वत जीवन का अर्थ यह नहीं है कि उसका एक छोर आरंभ हो और दूसरा छोर अनंत हो। यह पहले ही कहा जा चुका है कि आप ऐसी किसी छड़ी की कल्पना नहीं कर सकते जिसे आप एक छोर से पकड़े हुए हों और दूसरा छोर अनंत तक जाता रहे। नहीं, क्योंकि जिसका आरंभ होता है, उसका अंत अवश्य होता है। यही प्रकृति का नियम है। कोई भी ऐसी वस्तु की कल्पना नहीं कर सकता जिसका आरंभ तो हो लेकिन अंत न हो। कुछ लोग सोचते हैं कि यह भौतिक शरीर अनंत काल तक बना रह सकता है, लेकिन यह असंभव है, क्योंकि जिसका जन्म होता है उसका अंत अवश्य होता है। बेशक, शरीर में परिवर्तन हो सकता है, लेकिन यह वही शरीर नहीं रहेगा, ठीक वैसे ही जैसे बचपन में हमारा शरीर अब वैसा नहीं रहता। शिशु शरीर युवावस्था में और फिर युवावस्था में बदलता है, क्योंकि हर सात साल में हमारे शरीर का हर अणु नवगठित होता है। आपका मस्तिष्क, दृष्टि और श्रवण शक्ति हमेशा एक जैसी नहीं रहती; ये सब निरंतर बदलते रहते हैं। लेकिन इन परिवर्तनों के बीच कुछ ऐसा है जो अपरिवर्तनीय है, और जब तक आप उस तत्व को नहीं पहचान लेते, तब तक आप स्थायी शांति और सुख की अपेक्षा नहीं कर सकते, क्योंकि इन सभी परिवर्तनों के बीच आप केंद्र बने रहते हैं, जिसके चारों ओर ये सभी परिवर्तन एक भंवर की तरह घूमते रहते हैं। आप आत्म-जागरूक सत्ता हैं, जो कभी मर नहीं सकती। इसलिए अपने आप पर विश्वास रखें कि आप अमर हैं।
अमरता का अर्थ है शाश्वत जीवन, जो अनादि और अनंत दोनों है। आपको किसी ने नहीं बनाया है, और न ही कोई आपको शून्य से बना सकता है। स्वयं ईश्वर भी

सृजन नहीं कर सकते, परन्तु वे सब कुछ अपने भीतर से उत्पन्न करते हैं। अतः आप पहले ईश्वर के अंश के रूप में विद्यमान हुए, फिर अनुभव के द्वारा इस संसार में आए, अपनी शक्तियों को प्रकट किया, और पुनः ईश्वर में ही विलीन हो रहे हैं। इस प्रकार आप जीवन चक्र पूरा करते हैं। यह प्रकृति की दिव्य शक्तियों का खेल है, और आप केवल उनकी अभिव्यक्ति हैं। आत्म-चेतन सत्ता की प्रत्येक इकाई इस चक्र में या आने वाले चक्र में अनेक अभिव्यक्तियों से गुजरकर अपने अनंत स्वरूप को साकार करेगी।
आपको यह समझना होगा कि आत्मा स्वर्ग लोक से चेतना के इस लोक में उतरकर पुनः जन्म ले सकती है और अधिक विकसित शक्तियों के साथ नए अनुभव प्राप्त कर सकती है, या तो नए अनुभव प्राप्त करने के लिए या दूसरों को ज्ञान प्राप्त करने में सहायता करने के लिए। कुछ आत्माएँ पूर्ण हो चुकी होती हैं और वे सचेतन रूप से इस लोक में उतरती हैं, अपने सभी अनुभवों को याद रखते हुए। वे सब कुछ याद रखती हैं और मानो परम आनंद से प्रेरित होकर मानवता की सहायता करने और ईसा मसीह, बुद्ध या अन्य उद्धारकर्ताओं की तरह एक उदाहरण स्थापित करने के लिए इस लोक में उतरती हैं। लेकिन हमारे पास वह शक्ति नहीं है।
1. स्कोर 20 संख्या के लिए एक पुराना शब्द है। यह अभिव्यक्ति बाइबिल में मिलती है, "साढ़े स्कोर वर्ष और 94"।
दस” का अर्थ है: “सत्तर वर्ष की आयु” (3*20+10) (भजन संहिता 90)। इसे सामान्य जीवनकाल माना जाता था।
(स्रोत: विकिपीडिया)
हम अपने पिछले कर्मों से प्रेरित होकर आगे बढ़ते हैं। उदाहरण के लिए, मेरी इच्छा सर्वश्रेष्ठ कलाकारों में से एक बनने की है और अपने आदर्श को साकार करने से पहले, यदि मेरी मृत्यु हो जाए, तो मुझे लगता है कि मेरी इच्छाएँ व्यर्थ हो जाएँगी। लेकिन यह सच नहीं है, क्योंकि वे मुझे फिर से वापस लाएंगी और सही माध्यम से मुझे उचित वातावरण में रखेंगी, ताकि मैं एक बार फिर कलाकार बनने के अपने आदर्श को साकार कर सकूँ। यह जानकर बहुत सुकून मिलता है। जीवन का एक स्तर पर्याप्त नहीं है। हमें बताया गया है कि इस दुनिया में आने से पहले ही सब कुछ तय था; लेकिन अनंत घटनाओं से भरे इस संसार को कोई व्यक्ति अनंत जीवन जिए बिना कैसे समझ या जान सकता है? इसीलिए वेदांत की शिक्षाएँ प्रकृति के साथ पूर्ण सामंजस्य में हैं। यह किसी भी ऐसे विचार की निंदा नहीं करती, बल्कि उन्हें उनके उचित स्थान पर

रखती है। कुछ लोग स्वर्ग के सपने देखते हैं और वे वहाँ जाएँगे। लेकिन अगर हमें बताया जाए कि यह स्वर्ग एक शाश्वत अवस्था है, तो हम एक ऐसा कथन सुन रहे हैं जो सत्य नहीं हो सकता। हमें यह समझना चाहिए कि मृत्यु के बाद का जीवन वर्तमान जीवन की निरंतरता है और हम अपने विचारों और कर्मों के अनुसार अपना भविष्य बनाते हैं। हम अपने भाग्य, अपने चरित्र और अपने भविष्य के निर्माता हैं और हम इस पृथ्वी पर या किसी अन्य ग्रह पर जीवन व्यतीत करते रहेंगे, वापस लौटेंगे और पुनर्जन्म लेंगे। हम किसी अन्य ग्रह पर जा सकते हैं जहाँ भिन्न परिस्थितियाँ हों और हम इस सार्वभौमिक आत्मा के अनंत क्षेत्र का विकास कर सकते हैं। अनुभवों का कोई अंत नहीं है, लेकिन एक सिद्ध आत्मा उस अवस्था को प्राप्त करती है जहाँ न जन्म होता है, न मृत्यु और न ही रोग, दुःख या पीड़ा। वहाँ परम शांति और सुख, पूर्ण ज्ञान और बुद्धि का वास होता है जो मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है।

1. बृहदारण्यक उपनिषद (4.4.6) में हम पाते हैं: “व्यस्त होकर वह कार्य सहित प्राप्ति करता है।”
वह परिणाम जिससे उसका सूक्ष्म शरीर (सूक्ष्म-शरीर या लिंगम) या मन जुड़ा हुआ है।
इस जीवन में उसने जो भी काम किया, उसके फल स्वरूप वह उस लोक से इस लोक में (नए) काम के लिए लौटता है।
जो व्यक्ति इच्छा रखता है, क्या वह पुनर्जन्म लेता है? परन्तु जो व्यक्ति इच्छा नहीं रखता, वह कभी पुनर्जन्म नहीं लेता।
जो इच्छाओं से रहित है, जो इच्छा से मुक्त है, जिसकी इच्छा के सभी विषय प्राप्त हो चुके हैं,
और जिनके लिए इच्छा के सभी विषय आत्मा मात्र हैं, उनकी इंद्रियाँ नहीं विमुख होतीं। वह केवल ब्रह्म ही है। 95
(ईश्वर), वह ब्रह्म में विलीन हो गया है। मुंडका उपनिषद, 3.2.2 भी देखें - स्वामी प्रजनानंद,
रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।

अध्याय XI

अध्यात्मवाद और वेदांत
गीता कहती है: 1
परमेश्वर कहते हैं: “देवताओं या स्वर्गदूतों के उपासक देवताओं के पास जाते हैं;
पूर्वजों की पूजा करने वाले पूर्वजों के पास जाते हैं। आत्माओं की पूजा करने वाले आत्माओं के पास जाते हैं; लेकिन
जो मुझमें लीन हैं, वे मुझे प्राप्त करते हैं और पूर्णता की प्राप्ति करते हैं।
आधुनिक अध्यात्मवाद का दावा है कि इसकी उत्पत्ति अलौकिक है, ठीक वैसे ही जैसे दुनिया के अन्य सभी महान धर्मों की, जिनकी स्थापना अलौकिक रहस्यों पर आधारित है। इसने ईसाई धर्मशास्त्र के हठधर्मियों को नरम करने, अधिकांश अमेरिकी लोगों की धार्मिक मान्यताओं में सुधार लाने और मृत्यु के बाद के जगत में नए सिरे से खोज और अन्वेषण शुरू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पिछले पचास वर्षों में, आधुनिक अध्यात्मवाद ने उन आत्माओं के अस्तित्व के बारे में अद्भुत प्रमाण दिए हैं जो अपने स्थूल भौतिक रूप के विघटन के बाद भी जीवित रहती हैं। इसने उन अनेक लोगों के हृदयों को सांत्वना और दिलासा प्रदान किया है जो पिछली शताब्दी के नास्तिक, अज्ञेयवादी और भौतिकवादी विचारकों के निरर्थक सिद्धांतों के कारण भविष्य के जीवन के प्रति संशय और अविश्वास के बुरे प्रभावों से पीड़ित थे। आधुनिक अध्यात्मवाद की सहायता से, इस देश के कई शिक्षित और अशिक्षित लोग अब इस विश्वास पर पहुँच चुके हैं कि मनुष्य की आत्मा या एक चेतन सत्ता होती है जो भौतिक शरीर की मृत्यु के बाद भी विद्यमान रहती है। आधुनिक अध्यात्मवाद ने सिखाया है कि मृतकों की आत्माएँ शाश्वत कष्ट भोगने के लिए अभिशप्त नहीं हैं, बल्कि वे सुख-शांति से रहती हैं और अपने सांसारिक मित्रों और रिश्तेदारों को नहीं भूलतीं। इसके विपरीत, संरक्षक देवदूतों की तरह, वे अपने प्रियजनों की रक्षा करती हैं और हमेशा उनकी सहायता करने और उन्हें सांसारिक जीवन में आने वाले खतरों और दुर्भाग्य से बचाने के लिए तत्पर रहती हैं। आधुनिक अध्यात्मवाद ने मृत्यु के बाद की स्थिति के भय को

दूर कर दिया है और मनुष्य के मन को मृत्यु को उस अद्भुत लोक के द्वार के रूप में देखने में सक्षम बनाया है, जिसके निवासी नए जीवन, नए अनुभव और नए सुख-सुविधाओं का आनंद लेते हैं।
इस प्रकार मृत्यु के बाद जीवन में विश्वास स्थापित करने के बाद, आधुनिक अध्यात्मवाद ने उन आत्माओं के मार्गदर्शन में एक धर्म की नींव रखने का दावा किया है जो माध्यमों को नियंत्रित करती हैं, या उन बुद्धिमान आत्माओं के मार्गदर्शन में जो अध्यात्मवादी सत्रों में भाग लेती हैं, चाहे वे निजी हों या सार्वजनिक।

1. भगवद् गीता अध्याय 9, श्लोक 25. 96 पेशेवर, अलौकिक चीजों के ज्ञान को प्रदान करके उपस्थित लोगों के मन को प्रबुद्ध करने की इच्छा के साथ। आधुनिक अध्यात्मवाद द्वारा दिवंगत आत्माओं से प्राप्त अनुभवों के आधार पर धर्म स्थापित करने के प्रयास हमें उन प्राचीन काल की याद दिलाते हैं जब आदिम जातियाँ अज्ञान के अंधकार में भटक रही थीं और उनका मन मृत्यु के बाद के लोक को ढकने वाले घने कोहरे में प्रकाश की किरण खोजने के लिए संघर्ष कर रहा था। वास्तव में, आधुनिक अध्यात्मवाद का अध्ययन हमें उस युग में वापस ले जाता है जब आदिम जनजातियों का धर्म अपने मृत रिश्तेदारों और मित्रों की स्मृति को संजोए रखने में निहित था; जब मृतकों के भूत-प्रेत जैसे दर्शन देखने के बाद, वे यह मानने लगे कि उनके पूर्वज जीवित हैं, भले ही उनके शरीर कब्र में सड़ रहे हों। यह हमें उस युग में भी ले जाता है जब पूजा का मुख्य रूप दिवंगत आत्माओं को उनके सांसारिक जीवन के दौरान उनकी सबसे पसंदीदा चीजें करने के द्वारा प्रसन्न करना था। इस प्रकार की पूर्वज-पूजा अध्यात्मवाद का प्राचीन रूप थी; और आधुनिक समय के कई विद्वान मानते हैं कि यह उन सभी धर्मों की शुरुआत थी जिनका अलौकिक उद्भव माना जाता है।
जैसा कि हम सभी जानते हैं, पूर्वजों की पूजा का अर्थ है दिवंगत पूर्वजों की आत्माओं और उनकी अलौकिक शक्तियों में विश्वास रखना, साथ ही उनका निरंतर स्मरण करना और उनकी स्मृति में उनकी सेवा करना, चाहे उनके निर्देशों का पालन करके या उनकी सहानुभूति और दयालु भावनाओं को जगाने का प्रयास करके ताकि वे हमारे सांसारिक जीवन के कष्टों और दुर्भाग्य में हमारी सहायता करें। पूर्वजों की यह पूजा विश्व के लगभग सभी धर्मों में पाई जाती है। विभिन्न देशों के प्राचीन धर्मों का अध्ययन करने पर, हमें प्राचीन

मिस्रवासियों, बेबीलोनियों, कसदियों, असीरियों, चीनियों, पारसियों, हिंदुओं और विश्व के विभिन्न भागों में निवास करने वाली अन्य जातियों में अध्यात्मवाद के इस प्राचीन रूप के स्पष्ट निशान मिलते हैं।
प्राचीन मिस्रवासी, आधुनिक अध्यात्मवादियों की तरह, मृत आत्माओं में विश्वास करते थे। उनका मानना था कि मनुष्य के भौतिक शरीर के भीतर एक आत्मा विद्यमान होती है, जिसका आकार हर तरह से स्थूल शरीर जैसा होता है, लेकिन हाथ, पैर और अन्य अंग छोटे होते हैं। यह भौतिक मनुष्य का 'प्रतिरूप' या प्रतिरूप जैसा होता है। जब भौतिक मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, तो उसका प्रतिरूप या 'प्रतिरूप' शरीर से बाहर निकलकर जीवन व्यतीत करता है। मिस्रवासियों की मान्यता के अनुसार, 'प्रतिरूप' का जीवन भौतिक शरीर की स्थिति पर निर्भर करता था, अर्थात् जब तक स्थूल रूप अक्षुण्ण रहता था, 'प्रतिरूप' का रूप भी परिपूर्ण बना रहता था। परन्तु यदि मृत शरीर का कोई अंग क्षतिग्रस्त या घायल हो जाता था, तो 'प्रतिरूप' का भी वही अंग क्षतिग्रस्त या घायल हो जाता था। इसी कारण वे शवों को संरक्षित करने के लिए ममी बनाते थे और पिरामिड बनवाते थे। यह मान्यता अध्यात्मवाद और प्राचीन मिस्रवासियों की पूर्वज-पूजा का मूल सिद्धांत थी।
97
बेबीलोनियों और कसदियों का भी मृतकों की आत्माओं में विश्वास था, लेकिन मिस्रियों की तरह नहीं। वे मृतकों की भटकती आत्मा में विश्वास करते थे जिसे 'एकिम्मु' यानी प्रेत कहा जाता था। यह दिखने में मनुष्य के समान होता था, लेकिन उनका मानना था कि यदि शव को विधिपूर्वक दफनाया न जाए तो प्रेत को बड़ी विपत्तियों का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वे मृतकों की आत्माओं को सभी विपत्तियों से मुक्त करने के लिए अनेक अनुष्ठान करते थे। बेबीलोनियों का मानना था कि जिन शवों को विधिपूर्वक दफनाया नहीं जाता, उनकी आत्माएं मृतकों के घर, जिसे 'अरल्लू' यानी मृतकों का भूमिगत निवास कहा जाता था, में प्रवेश नहीं कर सकतीं। यह यहूदियों के 'शीओल' के समान था। इसलिए बेबीलोनियों, कसदियों और अश्शूरियों ने मृतकों को दफनाने में विशेष सावधानी बरती। आज यूरोप और अमेरिका के ईसाई देशों में प्रचलित मृत शरीर को संरक्षित करना, स्मारक और समाधियाँ बनाना तथा उन्हें फूलों, मालाओं, झंडों और अन्य अंत्येष्टि चढ़ावों से सजाना, प्राचीन बेबीलोनियों और कसदियों की

पूर्वज पूजा के अवशेष मात्र हैं। ये रीति-रिवाज हमें विरासत में मिले हैं और हम अब बिना इनके मूल अर्थ को जाने आँख बंद करके इनका पालन करते हैं। इसी प्रकार, यह सिद्ध किया जा सकता है कि प्राचीन चीनी धर्म पूर्णतः पूर्वजों की पूजा पर आधारित था। चीनी लोग हमेशा से अपने दिवंगत पूर्वजों और रिश्तेदारों की आत्माओं में विश्वास रखते आए हैं। वे संकट के समय उनकी सहायता के लिए प्रार्थना करते हैं और उनके कल्याण एवं समृद्धि के लिए उनसे प्रार्थना करते हैं। आज भी चीन में दिवंगत पूर्वजों को उनके वंशजों द्वारा किए गए पुण्य कर्मों के लिए उपाधियों और प्रशंसाओं से सम्मानित किया जाता है।
प्राचीन पारसी अपने मृत पूर्वजों की आत्माओं में विश्वास रखते थे और उन्हें 'फरावशी' या पिता कहते थे। उनकी मान्यता के अनुसार, धर्मात्माओं की आत्माओं को स्वर्गदूतों, प्रधान स्वर्गदूतों और देवताओं के समान दर्जा प्राप्त था। पारसी उनका आह्वान करते थे, उनकी स्तुति करते थे, उनसे प्रार्थना करते थे और उनसे सहायता और आशीर्वाद मांगते थे। वे 'फरावशी' या पिताओं की स्मृति में उन्हें भोजन और अन्य भेंट अर्पित करते थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि पूर्वजों की पूजा या अध्यात्मवाद के प्राचीन रूप ने पारसियों के साथ-साथ मिस्रियों, बेबीलोनियों, कसदियों और चीनियों के धर्म की नींव रखी।
आधुनिक विद्वानों और धर्मग्रंथों के उच्च आलोचकों ने यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम में पूर्वजों की पूजा के अंश खोजे हैं। पुराने नियम के पहले शमूएल के 28 वें अध्याय में हम पढ़ते हैं कि शाऊल एंडोर की उस चुड़ैल से सलाह लेने गया, जिसके पास आत्माओं को बुलाने की शक्ति थी। शाऊल के अनुरोध पर, चुड़ैल ने शमूएल की आत्मा का आह्वान किया, जो प्रकट हुए और उन्हें अच्छी सलाह दी। पुराने नियम की चुड़ैलें और जादूगर आधुनिक अध्यात्मवाद के माध्यम मात्र थे। यदि आज के अध्यात्मवादी माध्यम लगभग चार शताब्दी पहले जीवित होते, तो चर्च उन्हें चुड़ैल घोषित कर देता और शायद उन्हें फांसी दे देता या आग में जला देता।
98
हिब्रू शब्द 'एलोहिम', जिसका अंग्रेजी बाइबिल में अक्सर अनुवाद 'ईश्वर' के रूप में किया गया है, का प्रयोग निराकार आत्माओं के लिए भी किया जाता था। कहा जाता है कि एंडोर की चुड़ैल ने एलोहिम को धरती से ऊपर उठते देखा था;

यहाँ एलोहिम का प्रयोग मृत आत्मा के निराकार रूप में किया गया था। यह दिवंगत आत्माओं का एक प्रकार का भौतिकीकरण था, जैसा कि आज के séances में देखा जाता है। क्या हमें यहूदी धर्म में पूर्वजों की पूजा का स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता जब हम पढ़ते हैं:
और शाऊल ने पहचान लिया कि वह शमूएल है, और उसने अपना चेहरा ज़मीन पर झुकाकर प्रणाम किया।
रोमन कैथोलिकों में संत-पूजा, पूर्वजों की पूजा का ही एक रूप है या प्राचीन अध्यात्मवाद का अवशेष है। रोम या इटली के किसी भी अन्य भाग में जाने पर, हम देखते हैं कि संत घोषित किए गए लोगों की समाधियाँ फूलों और जलती मोमबत्तियों से सजी होती हैं, और प्रार्थनाओं और चढ़ावों के माध्यम से उनकी आत्माओं का आह्वान किया जाता है। वास्तव में, गिरजाघरों और मंदिरों की वेदियों की उत्पत्ति उन पूर्वजों की कब्रों से हुई है जिन्होंने धार्मिक जीवन व्यतीत किया था। ईश्वर के नाम पर चढ़ाए जाने वाले चढ़ावे और बलिदान भी इस विश्वास से उत्पन्न हुए कि दिवंगत पूर्वजों को भी उतनी ही भूख और प्यास थी जितनी उन्हें जीवित अवस्था में थी। जो पहले मृतकों के लिए भोजन और पेय था, वह धीरे-धीरे बलिदानों के रूप में विकसित हुआ। ईसाइयों का पवित्र भोज, धन्यवाद का अर्पण और यूखारिस्ट, आदिम लोगों की पूर्वजों की पूजा या आत्मा की पूजा से जुड़ी रस्मों के अवशेष मात्र हैं।
इसी तरह की रस्में आज भी उन गैर-ईसाइयों में प्रचलित हैं जिन्होंने ईसा मसीह या उनके सूली पर चढ़ने के बारे में कभी नहीं सुना। ये उन मानवीय भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति थीं जो अपने दिवंगत पूर्वजों की स्मृति का आदर और सम्मान करती थीं। आदिम लोगों द्वारा अपने मृत पूर्वजों के गुणों, वीरतापूर्ण कार्यों और गुणों का वर्णन करने के लिए प्रयुक्त भजन और स्तुति धीरे-धीरे गिरजाघरों और मंदिरों में गाए जाने वाले स्तुति गीतों का रूप ले चुके हैं। ईसा मसीह और मोहम्मद दोनों ही दिवंगत आत्माओं में विश्वास करते थे, उन्होंने स्वर्गदूतों को अपने सिर के ऊपर चढ़ते और उतरते देखा था, और उन लोगों के माध्यम से रहस्योद्घाटन प्राप्त किया था जो वास्तव में धर्मी लोगों की आत्माएं थीं।
1. शमूएल 1, अध्याय 28:14.
2. ग्रांट एलन ने अपनी पुस्तक "ईश्वर के विचार का विकास" में उल्लेख किया है: 'यह सार्वभौमिक कैथोलिक है

गिरजाघरों में संतों या शहीदों के अवशेषों को वेदियों के नीचे रखने की प्रथा है। इस प्रकार संत का शरीर...
वेनिस में सेंट मार्क के ऊंचे वेदी के नीचे सुसमाचार प्रचारक मार्क का शव रखा हुआ है; और इटली के लगभग हर दूसरे चर्च में भी यही स्थिति है। गिरजाघर या चैपल में, अवशेषों को वेदी के भीतर ही रखा जाता है। यह बात इतनी अच्छी तरह से समझी जाती है।
लैटिन चर्च में यह सिद्धांत इतना पुख्ता हो गया है कि यह कहावत बन गई है, 'कोई अवशेष नहीं, कोई वेदी नहीं।'
यह प्रार्थना सभा इसी प्रकार की वेदी पर होती है, और इसे बलि के वस्त्र पहने हुए पुजारी द्वारा संपन्न किया जाता है।
रोमन कैथोलिक अनुष्ठान, वेदी पर सेवा करने के पूर्व पुरोहितीय विचारों से व्युत्पन्न एक अनुष्ठान है।
इसमें मानव अवशेषों की अनिवार्य उपस्थिति के कारण आदिम रूप से इसका संबंध अभी भी बरकरार है।
इसके पवित्र स्थल।
इसके अलावा, चर्च की अवधारणा स्वयं प्रारंभिक ईसाई सभा स्थलों से उत्पन्न हुई है।
भूमिगत कब्रें या शहीदों की समाधियाँ, जिन्हें सर्वत्र स्वीकार किया जाता है कि वे
आदिम ईसाई वेदी। इस प्रकार ईसाई धर्म पूजा की प्राचीन परंपरा से जुड़ा हुआ है।
समाधियाँ, और वेदियों, अवशेषों और संतों के आह्वान के माध्यम से पूर्वजों की पूजा करने की प्रथा, यहाँ तक कि
क्रांतिकारी प्रोटेस्टेंटवाद अभी भी 99 के समर्पण में अपनी उत्पत्ति के कुछ अंतिम धुंधले निशान बरकरार रखता है
विशिष्ट प्रचारकों या शहीदों के लिए समर्पित गिरजाघर, और वेदी का कमोबेश छिपा हुआ अस्तित्व,
पुरोहिती, बलिदान और वस्त्र।
भारत में, प्राचीन काल से ही दिवंगत आत्माओं में विश्वास ने हिंदुओं के धार्मिक आदर्शों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह विश्वास वैदिक काल के सबसे पुराने धार्मिक ग्रंथों में भी मिलता है।

ऋग्वेद के समय से ही, जो ईसा मसीह के जन्म से कम से कम पाँच हज़ार वर्ष पूर्व का है, यह विचार बहुत प्रचलित था और वहाँ हमें पितरों, या दिवंगत पिताओं को संबोधित कई प्रार्थनाएँ और स्तुतियाँ मिलती हैं।1 पितरों का आह्वान, स्तुति और श्राद्ध के समय उन्हें अर्पित की जाने वाली भेंटों को स्वीकार करने का निमंत्रण किया जाता था। संस्कृत शब्द 'श्राद्ध' का अर्थ है दिवंगत पूर्वजों की स्मृति में किया जाने वाला कोई भी कार्य। इसमें प्रार्थना, स्तुति और भेंट शामिल हैं। हिंदू गृहस्थों के दैनिक कर्तव्यों में से एक है अपने दिवंगत पूर्वजों के स्मरण में कुछ मिनट व्यतीत करना और उनके नाम पर कुछ अच्छे कार्य करना। वे गरीबों और भूखों को भोजन कराते हैं, जरूरतमंदों को वस्त्र देते हैं या अपने मृत रिश्तेदारों के नाम पर तीर्थयात्रा करते हैं। हिंदू मान्यता है कि दिवंगत आत्माओं के नाम पर किए गए ऐसे अच्छे कर्मों का फल उन्हें प्राप्त होगा और उनकी आगे की यात्रा में सहायता करेगा। दिवंगत आत्माओं के परिजनों और मित्रों द्वारा उनके पूर्वजों के नाम पर किए गए सभी पुण्य कर्म निश्चित रूप से उन्हें लाभ पहुंचाएंगे।
वेदांत धर्म के अनुसार, साधारण मनुष्यों की आत्माएं मृत्यु के बाद कुछ समय तक पृथ्वी पर ही रहती हैं और अपने पीछे रह गए रिश्तेदारों और मित्रों से सहायता की अपेक्षा करती हैं। जीवित व्यक्तियों के अच्छे विचार और अच्छे कर्म मृत आत्माओं को इस बंधन से मुक्ति दिलाने में सहायक होते हैं, और इस प्रकार वे उच्चतर उठकर पितृ, पितरों या पिताओं के लोक में प्रवेश कर पाती हैं, ताकि वे स्वयं द्वारा किए गए या उनके वंशजों, मित्रों और रिश्तेदारों द्वारा उनके लिए या उनके नाम पर किए गए पुण्य कर्मों का फल भोग सकें। पूर्वजों के लोक को पितृलोक कहा जाता है, जहाँ पूर्वजों की आत्माएँ स्वर्गलोक का आनंद लेती हैं। ऐसा माना जाता है कि इस लोक पर प्रथम मनुष्य का शासन है, जिन्होंने अपने अच्छे कर्मों से इस अवस्था को प्राप्त किया। संस्कृत में उन्हें 'यम' कहा जाता है। कठोपनिषद और सर एडविन अर्नोल्ड की पुस्तक 'सीक्रेट ऑफ डेथ' पढ़ने वाले इस शब्द से परिचित हैं। यम, पितृलोक के स्वामी हैं, जो इस लोक में पहुँचने वालों की इच्छाओं के अनुसार सभी सुख-सुविधाएँ प्रदान करते हैं। पूर्वजों का लोक आधुनिक अध्यात्मवादियों के स्वर्ग के समान है। वहाँ जाना प्राचीन पूर्वज-पूजा और आधुनिक अध्यात्मवाद दोनों का सर्वोच्च आदर्श है।

1. ऋग्वेद के दसवें मंडल में, चौदहवें और अठारहवें सूक्तों के बीच 72 मंत्र हैं।
उन मंत्रों या स्तोत्रों को पितृलोक, यम, पितृलोक-देवता, अग्नि, सरयू, को संबोधित किया गया है।
पुसिया; सरस्वती जल; दफ़न, दाह-संस्कार के संबंध में सोम, मृत्यु, धाता और स्वाद
और आंशिक दाह संस्कार। 16 वें सूक्त के दूसरे श्लोक में हमें पुनर्जन्म का बीज भी मिलता है।
वो आत्मा:
“हे अग्नि, जब आप उसके शरीर को संतोषजनक रूप से जला देंगे, तब उसे पितृलोक के निवासियों के पास भेज दीजिए। जब वह पुनर्जन्म लेगा, तो वह देवताओं को समर्पित होगा।” 100
यह भजन मृत्यु के बाद भी आत्मा के अस्तित्व को सिद्ध करता है। – स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।
आध्यात्मवाद, चाहे प्राचीन हो या आधुनिक, पितरों के लोक से परे किसी अवस्था का वर्णन नहीं कर सकता। आधुनिक आध्यात्मवादी जिस धर्म का प्रचार करते हैं और जिसे सच्चा धर्म मानते हैं, वह हमें इस विश्वास से आगे नहीं ले जाता कि मृत्यु के बाद हम अपने दिवंगत पूर्वजों, मित्रों और रिश्तेदारों से मिलेंगे, उनकी संगति में आनंदित होंगे और जीवन के सभी सुखों का अनुभव करेंगे। यही आदर्श सभी देशों के पूर्वजों की पूजा करने वालों द्वारा माना जाता रहा है। प्राचीन काल के पूर्वजों की पूजा करने वालों का स्वर्ग ही आधुनिक आध्यात्मवादियों का स्वर्ग है। यह पितरों का लोक है। कई लोग इसके अस्तित्व पर संदेह कर सकते हैं, लेकिन ऐसे संदेह का कोई कारण नहीं है। आध्यात्मवाद मानव मन को मृत्यु के बाद भौतिक जगत में केवल एक कदम आगे ले जाता है और दिवंगत आत्माओं के इस लोक में विश्वास का मार्ग प्रशस्त करता है। जहां पूर्वजों की पूजा का आदर्श या आधुनिक अध्यात्मवाद का स्वर्ग समाप्त होता है, वहीं से वेदांत नामक उच्च धर्म का आरंभ होता है, जो उस मार्ग को इंगित करता है जो व्यक्तिगत आत्माओं को उस शाश्वत सत्य की ओर ले जाता है जो सभी घटनाओं से परे है, स्वर्ग से परे है, पितरों के क्षेत्र से ऊपर है, और यहां तक कि स्वर्गदूतों, प्रकाशमान आत्माओं या देवताओं की पहुंच से भी बहुत दूर है।

जीवन के स्वरूप की सदियों की खोज के बाद ही पितृलोक का मार्ग संभव हो पाता है। वेदांतिक ऋषियों और सत्य के द्रष्टाओं ने यह ज्ञात किया है कि पितरों का स्वर्ग शाश्वत सत्य का सर्वोच्च निवास स्थान नहीं है, बल्कि यह भौतिक है और इस भौतिक ब्रह्मांड के नियमों के अधीन है। वे कहते हैं कि वहाँ के निवासी कर्म के नियम, या कारण-प्रभाव के नियम, या क्रिया-प्रतिक्रिया के नियम से बंधे होते हैं, और उनका उस लोक में निवास क्षणिक होता है, भले ही वह हजारों वर्षों तक चले। वेदांतिक सत्य के द्रष्टा कहते हैं कि पूर्वज या पितरों को सर्वोच्च सत्य, या ब्रह्मांड की परम वास्तविकता का ज्ञान नहीं होता, और इच्छाओं से बंधे होने के कारण वे दिव्यता के लोक तक नहीं पहुँच सकते, और फलस्वरूप वे उस दिव्य सत्य का उपदेश भी नहीं दे सकते जिसे वे स्वयं नहीं जानते।
परम सत्य के इन प्राचीन ऋषियों ने अपने अनुभव से यह ज्ञात किया है कि आत्माओं के लोक, पूर्वजों के स्वर्ग या पितरों के लोक में रहने वाले लोग दिव्यता के उच्चतम सत्य को न तो जानते हैं और न ही जान सकते हैं। इसलिए वे दूसरों को शिक्षा नहीं दे सकते, और उन्होंने अपने शिष्यों, अनुयायियों और सत्य के साधकों को चेतावनी दी है कि वे अपना समय और ऊर्जा उन दिवंगत आत्माओं से आध्यात्मिक सहायता प्राप्त करने में व्यर्थ न करें, जिन्हें मानसिक घटनाओं के संसार से परे के सत्यों का कोई ज्ञान नहीं है और जो दिव्य अनुभूति के किसी भी साधक की सहायता करने की शक्ति नहीं रखते हैं।
इन बुद्धिमत्तापूर्ण चेतावनियों की अवहेलना करते हुए, आधुनिक समय के अमेरिकी अध्यात्मवादी अपना समय, ऊर्जा और धन इस व्यर्थ आशा में व्यतीत कर रहे हैं कि वे दिवंगत आत्माओं का आशीर्वाद प्राप्त कर सकेंगे, उनसे जीवन और मृत्यु के रहस्यों को जान सकेंगे और उन समस्याओं का समाधान कर सकेंगे जो अधिकांश मनुष्यों को परेशान करती हैं। आधुनिक अध्यात्मवादी अपूर्ण ज्ञान के आधार पर एक सच्चे धर्म की नींव स्थापित करने का दावा करते हैं, जो कि आध्यात्मिक ज्ञान से प्राप्त होता है।
मृत्यु के बाद के लोकों के बारे में, उन मूर्ख, कपटी, मूर्ख और अज्ञानी सांसारिक आत्माओं के 101 संदेश जो माध्यमों को नियंत्रित करते हैं और सर्वज्ञानी होने का दिखावा करते हैं। वेदांत के विद्यार्थी अक्सर आश्चर्यचकित होते हैं कि कैसे समझदार पुरुष और महिलाएं रात-रात भर सार्वजनिक सभाओं में बैठकर उन अज्ञानी आत्माओं की निरर्थक बकवास को बड़ी

प्रशंसा और तल्लीनता से सुनते हैं, जो माध्यमों के कमजोर दिमागों को नियंत्रित करने का दावा करती हैं।
अमेरिका में मौजूद विभिन्न प्रकार के माध्यमों के साथ कुछ समय बिताने के बाद, मैं अपने अनुभव के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ। मुझे अध्यात्मवादियों द्वारा उनके लिए बोलने और उनकी séances में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया था। मैंने अपनी संतुष्टि के लिए कुछ जाँच-पड़ताल करने हेतु उनका निमंत्रण सहर्ष स्वीकार किया। मैंने कई साकार आत्माओं को देखा है और उनसे बात की है। मैंने कुछ ऐसे माध्यमों से लंबी बातचीत की है जो टिन के तुरही के माध्यम से बोलते थे और उनसे कई प्रश्न पूछे हैं, लेकिन मुझे किसी भी séance में एक भी आत्मा या एक भी माध्यम ऐसा नहीं मिला जो मेरे प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर दे सके। मैंने उनसे मृत्यु के बाद जीवन, आत्मा की उत्पत्ति, आत्मा का वास्तविक स्वरूप, सार्वभौमिक आत्मा से उसका संबंध आदि के बारे में पूछा, लेकिन इन प्रश्नों का उन्होंने कभी उत्तर नहीं दिया; इसके विपरीत, कई बार उन्होंने अपनी अज्ञानता स्वीकार की और कहा: 'हम नहीं जानते; आप हमसे बेहतर जानते हैं।' कुछ आत्माओं ने अक्सर अन्य उपस्थित लोगों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तरों के लिए मेरी स्वीकृति मांगी है। कुछ साल पहले, एक सार्वजनिक séance में एक प्रकट आत्मा ने मुझसे कहा, “ओह, ये तो एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं; इनके सामने हम क्या कहें?” यह उद्गार एक अमेरिकी मूलनिवासी आत्मा का था। मैं उस séance के पति के बगल में बैठा था और क्योंकि वह मेरे मित्र थे, मैंने उनसे इस बात का अर्थ पूछा। उन्होंने कहा, “वह आपके बारे में बात कर रही हैं।” मैंने पूछा, “क्यों?” उन्होंने उत्तर दिया, “वह सोचती हैं कि आप बहुत बुद्धिमान हैं, और वह अपनी शक्ति नहीं दिखा सकतीं।” मुझे यह कहते हुए खेद है कि उस शाम séance सफल नहीं रहा।
एक बार मेरी एक आत्मा से लंबी बातचीत हुई और मैंने उससे आत्माओं की दुनिया में जीवन जीने के तरीके के बारे में कई सवाल पूछे। उसके जवाब बिल्कुल बेतुके थे। आत्मा ने कहा कि वह स्कूलों में जाती है और किताबें पढ़ती है। मैंने पूछा, 'तुम कौन सी किताबें पढ़ती हो? क्या तुम किसी किताब का नाम बता सकती हो?' उसने कहा, 'नहीं, मुझे नाम नहीं पता।'
कभी-कभी मैंने देखा है कि मेरे अपने विचार, मेरी अपनी धारणाएँ और यहाँ तक कि मेरी अभिव्यक्ति भी इतनी सटीक रूप से दोहराई जाती थी मानो मैं अपने ही

प्रश्न का उत्तर दे रहा हूँ। पुनर्जन्म पर मेरे प्रवचन को सुनने के बाद आध्यात्मिक माध्यमों की टिप्पणियाँ सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई। उनमें से कुछ ने मुझे बधाई दी और कहा: 'मेरे मार्गदर्शक आत्माओं ने मुझे ठीक वही सिखाया है जो आपने समझाया है।' लेकिन अन्य माध्यमों को पुनर्जन्म का विचार बिल्कुल पसंद नहीं आया, क्योंकि उन्होंने इसे अपने मार्गदर्शक आत्माओं से नहीं सीखा था।

102
मान लीजिए कि प्रेतात्मावाद की सभी घटनाएँ सत्य और प्रामाणिक हैं, तो इन संवादों से इन अध्यात्मवादियों को अपनी व्यर्थ जिज्ञासा की संतुष्टि के अलावा क्या लाभ हुआ है? क्या उन्होंने कोई उच्च सत्य सीखा है? क्या उन्होंने मनुष्य के आध्यात्मिक स्वभाव को नियंत्रित करने वाले किसी नियम को समझा है? क्या वे जानते हैं कि मनुष्य इस पृथ्वी पर क्यों आते हैं और अचानक क्यों चले जाते हैं? मैंने कई माध्यमों और उनके मार्गदर्शक आत्माओं से पूछा है, और पाया है कि उन्हें आत्मा की उत्पत्ति के बारे में कुछ भी नहीं पता। उनके उत्तर हमेशा ईसाई धर्मशास्त्र के सिद्धांतों पर आधारित होते हैं, जो उन्होंने अपने बचपन में संडे स्कूलों में सीखे थे। वे कहते हैं: 'ईश्वर जन्म के समय आत्मा की रचना करता है, और आत्मा शाश्वत रूप से विद्यमान रहती है।' यदि कोई पूछे: 'आपको कैसे पता कि शरीर के जन्म से पहले आत्मा का अस्तित्व नहीं था?' तो वे उत्तर नहीं देते।
हालांकि आत्माओं के प्रकट होने और उनसे संवाद करने की कई घटनाओं को धोखाधड़ी के रूप में उजागर किया गया है और उनमें से कई को टेलीपैथी और विचार-स्थानांतरण द्वारा समझाया जा सकता है, फिर भी कुछ वास्तविक घटनाएं ऐसी हैं जिन्हें निराकार आत्माओं के संचार के सिद्धांत के अलावा किसी अन्य सिद्धांत द्वारा समझाया नहीं जा सकता है।
कई बार श्रोता आत्माओं के झांसे में आ जाते हैं, जिनमें से कुछ न तो बुद्धिमान होती हैं और न ही सच्ची। कुछ मामलों में, वे किसी अन्य आत्मा का रूप धारण करके श्रोताओं को धोखा देती हैं। भोले-भाले और सीधे-सादे माध्यमों को शायद पता ही न हो कि उनके बेईमान मार्गदर्शक आत्माएं उन पर इस तरह की चालें चल रही हैं, इसलिए कई मामलों में उन्हें इस धोखे के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। लेकिन इसके लिए आत्माएं ही दोषी हैं।

इसलिए हम इन अध्यात्मवादियों से परम सत्य जानने की आशा कैसे कर सकते हैं, जिनके नियंत्रक और मार्गदर्शक स्वयं अज्ञानी, कपटी और माध्यमों से भी कम बुद्धिमान हैं? उन अध्यात्मवादियों की आशा व्यर्थ है जो पृथ्वी पर विद्यमान आत्माओं से संवाद के माध्यम से परम सत्य जानने की उम्मीद रखते हैं।
भारत में, परम सत्य की खोज करने वाले लोग आत्मा या ईश्वर के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए किसी आध्यात्मिक माध्यम के पास नहीं जाते, क्योंकि उन्हें बचपन से ही यह सिखाया जाता है कि जो आत्माएँ माध्यमों के द्वारा मनुष्यों से संवाद करती हैं, वे अज्ञानी और सांसारिक होती हैं। उन्हें हमारी सहायता की आवश्यकता हमसे कहीं अधिक है।
सत्य के ये साधक अपने पूर्वजों या पितरों से ज्ञान की खोज नहीं करते, क्योंकि वे जानते हैं कि आत्मालोक या स्वर्ग, या पितृलोक, यानी पितरों का लोक, के निवासी परिपूर्ण नहीं हैं, बल्कि वे वहाँ कुछ समय के लिए अपने अच्छे कर्मों का फल भोगने की इच्छाओं से बंधे हुए जाते हैं। उस अवधि के समाप्त होने पर, उन्हें उस लोक से संसार में लौटना पड़ता है, और अंततः वे अपने भीतर छिपी अन्य मानवीय इच्छाओं को पूरा करने और उनके फल भोगने के लिए मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेते हैं।

1. इस अध्याय के अंत में टिप्पणी देखें। 103 कर्मों के ऐसे परिणाम जो केवल मानवीय स्तर पर ही प्राप्त किए जा सकते हैं। मानवीय इच्छाओं के तल पर रहने वाला कोई भी व्यक्ति जन्म-पुनर्जन्म के इस चक्र से बच नहीं सकता, जो एक ओर सर्वोच्च स्वर्ग और दूसरी ओर सांसारिक अस्तित्व के बीच की सभी अवस्थाओं को समाहित करता है। जब तक हमारे भीतर इच्छाएँ बनी रहती हैं, हम परिवर्तनशील परिस्थितियों और अस्तित्वों से गुजरने और परिवर्तनशील वातावरणों का सामना करने के लिए बाध्य हैं।
आधुनिक आध्यात्मिक ज्ञानियों के स्वर्ग में प्रवेश करने वाले भी कर्म के नियम के अधीन होते हैं, जो कारण और क्रम का नियम है। इस नियम से बंधे होने के कारण, उन्हें तब तक वहीं रहना पड़ता है जब तक वे अपने अच्छे कर्मों और अच्छे विचारों का फल प्राप्त नहीं कर लेते। फिर वे इस भौतिक पृथ्वी पर लौट आते हैं और मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेते हैं, ताकि वे अपनी मानवीय इच्छाओं और प्रवृत्तियों को मानव लोक में संतुष्ट कर सकें। चक्र दर चक्र,

आत्माएं अपने विचारों, इच्छाओं और कर्मों के अनुसार विभिन्न लोकों में पुनर्जन्म लेती हैं। वे पितरों के स्वर्ग, पूर्वजों के स्वर्ग या आत्माओं के किसी अन्य उच्च लोक में जा सकती हैं।
कर्म के इस महान नियम को समझकर, भारत में वेदांत दार्शनिकों और परम सत्य के साधकों ने उस सूक्ष्म मार्ग की खोज की, जिसके द्वारा आत्मा इस संसार में पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त होकर, आध्यात्मिक साधकों और पूर्वजों की पूजा करने वालों के स्वर्ग से लेकर देवताओं के सर्वोच्च लोक तक, इस भौतिक ब्रह्मांड के सभी नियमों और सभी अवस्थाओं को पार कर सके। भगवद् गीता में भगवान कहते हैं:
"यहाँ तक कि सर्वोच्च स्वर्गों के निवासी भी पुनर्जन्म के नियमों के अधीन हैं और
पुनर्जन्म। केवल वही जन्म और पुनर्जन्म से मुक्त है और समस्त घटनाओं से परे है।
जो परम सत्य को जानने और सर्वोच्च आत्मा का अनुभव करने के बाद,
ईश्वर के साथ एक हो जाता है।
परम सत्य की प्राप्ति या ब्रह्मांड की शाश्वत और अपरिवर्तनीय वास्तविकता के धाम तक ले जाने वाला मार्ग, पूर्वजों के लोक या अध्यात्मवादियों या द्वैतवादी धर्मों के स्वर्ग तक ले जाने वाले मार्ग से भिन्न है। पूर्वजों की पूजा करने वालों के स्वर्ग में प्रवेश अच्छे और धार्मिक कर्मों पर निर्भर करता है। यह अच्छे विचारों और अच्छे कर्मों का फल है। लेकिन अच्छे कर्म और अच्छे विचार करने से ईश्वर-चेतना, दिव्य अनुभूति या परम सत्य की प्राप्ति नहीं हो सकती, जो सभी धर्मों का सर्वोच्च आदर्श है। अच्छे विचारों और कर्मों की कोई मात्रा ऐसी किसी चीज को उत्पन्न नहीं कर सकती जो विचारों और मन से परे हो, और परिणामस्वरूप, उनके प्रभाव की पहुँच से बाहर हो, क्योंकि दिव्य अनुभूति मानसिक घटनाओं के दायरे में नहीं है, और न ही इसे मन, बुद्धि और इंद्रियों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

1. भगवद् गीता अध्याय 8, श्लोक 19-21. 104 वह मार्ग जो व्यक्ति की आत्मा को परम सत्य के अहसास की ओर ले जाता है, न तो धार्मिक कर्मों से, न ही दिवंगत आत्माओं में विश्वास से, न ही पूर्वजों की आत्माओं की पूजा से, बल्कि आत्मज्ञान से, या उस संबंध के ज्ञान से जो व्यक्ति की आत्मा का सार्वभौमिक

वे दावा करते हैं, तो हम क्यों देखते हैं कि इनमें से कई माध्यम अज्ञानी और मूर्ख होते हैं?

1. Chandogya Upanishad (Chapter 5, Section 10, Verses 3-4) and Brihadaranyaka Upanishad, 6.2.15.
ईशा उपनिषद के 18 वें श्लोक में भी हमें यह मिलता है: “अग्ने नयसुपथा राये अस्मना” इत्यादि।
सुपथ शब्द का अर्थ है देवयान, जो श्रमिकों (कर्मी) के दक्षिणामार्ग के विपरीत है।
जो स्वर्ग या किसी अन्य उच्च लोक में जाने की इच्छा से यज्ञ करते हैं। 105 भगवद् गीता (अध्याय 8, श्लोक 24-25) में भी पथों, उत्तरायण और अन्य बातों का उल्लेख है।
दक्षिणायन. - स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।
वे हमारी आत्माओं को नियंत्रित करने वाले नैतिक और आध्यात्मिक नियमों को नहीं समझते। उन्होंने आत्म-नियंत्रण खो दिया है। वे उस समाधि जैसी अवस्था को नियंत्रित नहीं कर पाते जब उनकी चेतना रुक जाती है और उनका मन, मस्तिष्क और पूरा शरीर किसी बाहरी शक्ति के वश में होता है। माध्यमों की इच्छाशक्ति आम तौर पर कमजोर होती है। उनकी प्राण ऊर्जा, जीवन शक्ति और बौद्धिक क्षमता का उपयोग उन आत्माओं द्वारा किया जाता है जो उन पर नियंत्रण रखती हैं। एक बार मैंने एक कुशल माध्यम से पूछा कि माध्यम बनने की अवस्था से बाहर आने के बाद उन्हें कैसा महसूस हुआ। उन्होंने उत्तर दिया: 'मुझे ऐसा लगता है जैसे मुझमें कुछ भी नहीं है, जैसे मुझसे सारी प्राण शक्ति और जीवन छीन लिया गया हो। मैं कुछ समय तक कुछ सोच या कर नहीं सकती।' क्या यह दयनीय स्थिति नहीं है? इसी कारण भारत में, पृथ्वी से बंधी आत्माएं जो कमजोर मन वाले मनुष्यों पर अधिकार करने की कोशिश कर रही हैं, किसी भी ऐसे व्यक्ति को पाकर प्रसन्न होती हैं जो उनकी सहायता चाहता है।
प्रेतात्मावाद की वास्तविक घटनाएं कुछ लोगों की जिज्ञासा को शांत करने या मृत्यु के बाद जीवन के आश्वासन देने में सहायक हो सकती हैं। वे हमारे व्यवसाय या दैनिक जीवन से संबंधित कुछ तुच्छ घटनाओं की भविष्यवाणी कर सकती हैं, लेकिन वे हमें वह सर्वोच्च ज्ञान और सुख नहीं दे सकतीं जो आत्मा को ईश्वर से संवाद के माध्यम से प्राप्त होता है।

ये आत्माएँ स्वर्गदूत नहीं हैं, जैसा कि अध्यात्मवादी दावा करते हैं, बल्कि वास्तव में ये पृथ्वी से बंधी आत्माएँ हैं। आधुनिक अध्यात्मवाद हमारे मित्रों और रिश्तेदारों की दिवंगत आत्माओं से मिलने की आशा जगा सकता है और उनके अस्तित्व पर संदेह करने वालों को सांत्वना दे सकता है, लेकिन यह हमें परम सत्य का अहसास या ईश्वर-चेतना की प्राप्ति नहीं करा सकता। यह हमें पितृलोक में निवास करने वाले पूर्वजों या पितरों के लोक से ऊपर नहीं उठा सकता। इसके विपरीत, वेदांत धर्म का उद्देश्य व्यक्तिगत आत्मा को उसके वास्तविक स्वरूप का अहसास कराना, उसे सार्वभौमिक आत्मा से मिलाना और उसे उस दिव्य सत्ता में रूपांतरित करना है जो समय और स्थान की सभी सीमाओं और हमें इस सांसारिक तल से बांधने वाले सभी नियमों से परे है। वेदांत धर्म का उद्देश्य हमें इस जीवन में शाश्वत सत्य का अहसास कराना और स्वर्ग में पिता के समान परिपूर्ण बनाना है।
ईश्वर-चेतना की प्राप्ति वेदांत का सर्वोच्च आदर्श है। यह वह मार्ग दिखाता है जिससे हम सभी धर्मों के अंतिम लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं, अपने दैनिक जीवन के कर्मों में दैवीयता प्रकट कर सकते हैं, और स्वार्थ से मुक्त होकर, भौतिक और मानसिक स्थितियों से स्वतंत्र होकर, एक जीवित ईश्वर के समान जीवन जी सकते हैं। इसी कारण वेदांत में कहा गया है:
आप धर्मग्रंथों को पढ़ सकते हैं, या प्रतिदिन धर्मग्रंथों के अंशों को दोहरा सकते हैं; आप
सहायता के लिए आत्माओं या स्वर्गदूतों को बलिदान, प्रार्थना और आह्वान अर्पित करना, या पूजा करना।
ज्ञान और बुद्धि के लिए दिवंगत पूर्वजों की आत्माओं से प्रार्थना करें; लेकिन जब तक आप ऐसा करते हैं
जब तक आप अपने भीतर के उस पुनर्मिलन को महसूस नहीं करते, तब तक आप अपने सच्चे स्वरूप को नहीं जान पाएंगे।
106
'अपनी आत्मा को सार्वभौमिक आत्मा के साथ विलीन करने से तुम आध्यात्मिक स्वतंत्रता और पूर्णता प्राप्त नहीं कर पाओगे।' 1

• • • • •

टिप्पणी

स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता द्वारा
वदारयान (जिसे बदरायण भी लिखा जाता है) ने अपने ब्रह्मसूत्र (अध्याय 3, खंड 1, श्लोक 1-27) में बताया है कि आत्मा, मुख्य प्राण (प्रधान प्राण या आत्मा), इंद्रियों और मन के साथ, अज्ञान (अविद्या), अच्छे या बुरे कर्म और अपने पूर्व अस्तित्व के प्रभाव को अपने साथ लेकर, (मृत्यु के बाद) अपने शरीर को छोड़कर नया शरीर प्राप्त करती है। ब्रह्मसूत्र के तीसरे अध्याय (खंड 1) के आठवें श्लोक पर टिप्पणी करते हुए आचार्य शंकर बताते हैं:
यज्ञ आदि करने वालों की आत्माएँ धुएँ आदि से होकर चंद्रमा के लोक तक जाती हैं, और अपने कर्मों के फल का आनंद लेने के बाद, वहाँ निवास करके फिर से अवतरित हो जाती हैं। “यवत्सम्पताम्… पुनर्वर्तन्ते यतेताम्,” – “वे जिस मार्ग से आई थीं, उसी मार्ग से लौट जाती हैं” इत्यादि। ब्रह्मसूत्र के मंत्र 3.1.22 के संदर्भ में, शंकराचार्य ने उपनिषद के पाठ का उद्धरण देते हुए आत्माओं के अवतरित होने की विधि का वर्णन किया है: “वे जिस मार्ग से आई थीं, उसी मार्ग से आकाश में लौट जाती हैं, आकाश से वायु में। फिर यज्ञकर्ता वायु बनकर धुएँ में परिवर्तित हो जाता है, धुएँ में परिवर्तित होकर कोहरे में परिवर्तित हो जाता है, कोहरे में परिवर्तित होकर
वह बादल बन जाता है, बादल बनकर वह बारिश बरसाता है। मैक्स मुलर: द सिक्स भी देखें।
भारतीय दर्शन की प्रणालियाँ।

1. आदि शंकराचार्य कृत भज गोविंदम, श्लोक 17. 107

अध्याय XII

अध्यात्मवाद और पूर्वजों की पूजा
अनेक विद्वानों का मानना है कि पूर्वजों की पूजा ही उन सभी महान धर्मों का आरंभ है जो अलौकिक उत्पत्ति का दावा करते हैं। जैसा कि हम सब जानते हैं, पूर्वजों की पूजा का अर्थ है दिवंगत आत्माओं और उनकी अलौकिक शक्तियों में विश्वास रखना और उन्हें निरंतर याद रखना। उनके मार्गदर्शन में अपनी इच्छाशक्ति का समर्पण करने से उनके पीछे रह गए लोगों के प्रति सहानुभूति और दयालुता की भावनाएँ जागृत होती हैं।
पहले भी कहा जा चुका है कि विश्व के प्राचीन धर्मों में, मिस्रवासियों, कसदियों, चीनियों, हिंदुओं और विश्व के विभिन्न भागों में निवास करने वाली अन्य जातियों में पूर्वजों की पूजा के अंश मिलते हैं। प्राचीन मिस्रवासियों में आधुनिक अध्यात्मवादियों के समान एक मान्यता पाई जाती है। उनका मानना था कि मनुष्य के शरीर के भीतर एक प्रकार का प्राणी विद्यमान होता है, जो मनुष्य के समान रूप, हाथों, पैरों और शरीर के अन्य सभी अंगों के साथ होता है, और यह भौतिक मनुष्य का एक प्रकार का 'द्वितीय' रूप होता है। यह 'द्वितीय' शरीर से बाहर निकलता है और जीवन व्यतीत करता है, और उनकी मान्यता के अनुसार, इस 'द्वितीय' का जीवन मनुष्य के भौतिक रूप पर निर्भर करता है।
यदि इस भौतिक रूप का कोई भी भाग क्षतिग्रस्त हो जाता, तो इसके प्रतिरूप या समकक्ष का समान भाग भी क्षतिग्रस्त हो जाता। इसी कारण मिस्रवासी अपने पूर्वजों के शवों का इतना ध्यान रखते थे और उन्हें ममी बनाकर संरक्षित करते थे। पिरामिडों का निर्माण ममियों या शवों को संरक्षित करने के उद्देश्य से किया गया था। मिस्रवासियों का मानना था कि जब तक ये भौतिक रूप पूर्ण और अक्षुण्ण रहेंगे, तब तक इनका प्रतिरूप भी पूर्ण और अक्षुण्ण रहेगा।
प्राचीन बेबीलोनियों की मान्यताएँ मिस्रियों से थोड़ी भिन्न थीं। वे शवों को संरक्षित करते थे, उन्हें लेप लगाते थे और उनके ऊपर मकबरे बनाते थे, जिन पर फूल, मालाएँ और झंडे चढ़ाते थे। यह प्रथा आज भी यूरोप और अमेरिका में प्रचलित है और बेबीलोनियों की पूर्वज-पूजा का अवशेष है।

चीनियों का मुख्य धर्म भी पूर्वज-पूजा है। प्राचीन काल के पारसी भी दिवंगत आत्माओं में विश्वास करते थे और उन्हें फरावशी या पिता कहते थे। वे इन आत्माओं का आह्वान करते थे, उनसे प्रार्थना करते थे और उनसे सहायता और आशीर्वाद मांगते थे।
पारसियों की मान्यता के अनुसार, धर्मात्मा लोगों की आत्माओं को प्रधान देवदूतों और संरक्षक देवदूतों के समान दर्जा प्राप्त था। पारसी लोग दिवंगत पूर्वजों के नाम पर भोजन और बलिदान अर्पित करते थे और जब चाहें उनका आह्वान करते थे।
108 अलौकिक प्रकृति की कोई भी वस्तु। इस प्रकार हम देखते हैं कि पूर्वजों की यह पूजा पारसियों के साथ-साथ बेबीलोनियों, चीनियों और मिस्रियों के धर्मों की भी नींव बनी। आधुनिक विद्वानों ने यहूदी धर्म और इस्लाम में भी इस पूजा के अंश खोजे हैं।
इब्रानी शब्द ‘एलोहिम’, जिसका अनुवाद ईश्वर के रूप में किया जाता है, का प्रयोग दिवंगत आत्मा के अर्थ में किया जाता है। एंडोर की चुड़ैल ने ‘एलोहिम’ को धरती से निकलते देखा था। क्या हमें शमूएल की पुस्तक में पूर्वजों की पूजा का कोई अंश नहीं मिलता?
‘और शाऊल ने देखा कि वह शमूएल है, और उसने अपना चेहरा जमीन पर झुकाकर प्रणाम किया?’
ईश्वर के नाम पर किए जाने वाले बलिदान इस विश्वास से उत्पन्न हुए कि दिवंगत आत्माओं को भी उतनी ही भूख और प्यास लगती है जितनी जीवित अवस्था में लगती थी। भोजन और पेय पदार्थों का यह अर्पण धीरे-धीरे बलिदानों में परिवर्तित हो गया। ईसाई धर्म में पवित्र भोज, धन्यवाद अर्पण और यूखारिस्ट पूर्वजों की पूजा से संबंधित अनुष्ठानों के अवशेष मात्र हैं। आदिम लोगों द्वारा अपने पूर्वजों की स्मृति में और दिवंगत आत्माओं के वीर कर्मों और गुणों का वर्णन करने के लिए गाए जाने वाले भजन और स्तुतियाँ धीरे-धीरे आज के स्तुति गीतों में विकसित हो गईं।
ईसा मसीह और मोहम्मद दोनों ही दिवंगत आत्माओं और स्वर्गदूतों में विश्वास करते थे, चाहे वे अच्छे हों या बुरे। उन्हें इन पवित्र और धर्मी स्वर्गदूतों के माध्यम से ईश्वरीय संदेश प्राप्त होते थे। मुसलमानों में मस्जिदें और मकबरे बनवाए जाते थे। इन मकबरों को पवित्र स्थान माना जाता है और तीर्थयात्री समय-समय पर यहाँ दर्शन करने आते हैं। भारत में, दिवंगत

आत्माओं में इस विश्वास ने हिंदुओं के धार्मिक आदर्शों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है; और यह विश्वास प्राचीनतम धार्मिक ग्रंथों में भी व्यक्त होता है।
वेदों में लिखा है कि श्राद्ध समारोह के समय पूर्वजों की आत्माओं को भोजन और पेय पदार्थ का अर्पण करने के लिए आमंत्रित किया जाता था। किसी व्यक्ति की मृत्यु के पखवाड़े या एक महीने बाद सभी रिश्तेदार एकत्रित होकर अच्छे कार्य करते हैं और दिवंगत आत्मा के नाम पर यज्ञ करते हैं। वे गरीबों को भोजन कराते हैं, धन दान करते हैं, दान-पुण्य आदि करते हैं। श्राद्ध शब्द का अर्थ है किसी की स्मृति में अच्छे कार्य करना। हिंदू गृहस्थ का एक दैनिक कर्तव्य है कि वह कुछ मिनट दिवंगत पूर्वजों के स्मरण में व्यतीत करे और उनके नाम पर कुछ अच्छे कार्य करे, जैसे गरीबों को दान देना, भूखों को भोजन कराना या जरूरतमंदों को वस्त्र देना। हिंदुओं का मानना है कि दिवंगत आत्माओं के नाम पर किए गए ये अच्छे कार्य उनकी आत्मा की यात्रा में सहायक होते हैं।

109
हिंदू मान्यता के अनुसार, मृत्यु के बाद प्रत्येक नश्वर प्राणी कुछ समय के लिए पृथ्वी पर ही रहता है, और इस अवस्था में रहने वाली आत्माएं जीवित प्राणियों, वंशजों, रिश्तेदारों और मित्रों से पृथ्वी के बंधन से मुक्ति पाने के लिए सहायता मांगती हैं। दिवंगत आत्माओं की स्मृति में किए गए अच्छे कर्म और अच्छे विचार उन्हें इस बंधन से मुक्त होने में मदद करते हैं, और धीरे-धीरे वे पितरों के लोक में चले जाते हैं, जहां वे स्वयं द्वारा किए गए या उनके नाम पर वंशजों, मित्रों और रिश्तेदारों द्वारा किए गए अच्छे कर्मों का फल भोगते हैं। पितरों के लोक की खोज उस प्रथम नश्वर प्राणी ने की थी, जिसने अच्छे कर्मों के द्वारा उस लोक का मार्ग खोजा था, और बाद में आने वाले सभी प्राणियों का स्वामी बन गया। इसे पितृलोक कहा जाता है। कथा और अन्य उपनिषदों का अध्ययन करने वाले इस लोक से परिचित हैं। यह लोक वहां पहुंचने वालों को जीवन के सभी सुख-सुविधाएं प्रदान करता है।
पूर्वजों का यह लोक स्वर्ग है, पूर्वजों की पूजा करने वालों के लिए आदर्श स्थान है, साथ ही आधुनिक अध्यात्मवादियों के लिए भी स्वर्ग है, भले ही वे इसे इस नाम से न पुकारें। अध्यात्मवादियों का धर्म, चाहे प्राचीन हो या

आधुनिक, उस अवस्था का वर्णन नहीं कर सकता जिसमें उनके पूर्वज निवास करते हैं। वह धर्म हमें उस लोक से परे नहीं ले जा सकता और हमें इस विश्वास से अधिक कुछ नहीं दे सकता कि हमारी मृत्यु के बाद, हम अपने बिछड़े हुए मित्रों से मिलेंगे और उनके साथ सदा के लिए रहेंगे, आनंद मनाएंगे और उस स्वर्गीय अवस्था में सुख का अनुभव करेंगे। लेकिन पूर्वजों की पूजा करने वालों और आधुनिक अध्यात्मवादियों का यह स्वर्ग सर्वोच्च स्वर्ग नहीं है। जहाँ पूर्वजों की पूजा करने वालों और आधुनिक अध्यात्मवादियों का स्वर्ग समाप्त होता है, वहीं सच्चे धर्म की नींव शुरू होती है जो शाश्वत सत्य के निवास की ओर ले जाती है, जो सभी नियमों, सभी मानसिक स्थितियों, सभी सुखों और जीवन के सभी आरामों से परे है।
सदियों के गहन शोध के बाद हिंदू ऋषियों और सत्य के द्रष्टाओं ने यह ज्ञात किया है कि पितरों का यह लोक सत्य का शाश्वत निवास नहीं है। यह भौतिक है, और इस लोक के निवासी स्वतंत्र नहीं हैं, बल्कि जीवन के सुख-सुविधाओं की इच्छाओं से बंधे हुए हैं। वे कर्म के नियम, कारण-कार्य के नियम, क्रिया- प्रतिक्रिया के नियम के अधीन हैं, और इस लोक में उनका निवास क्षणिक है, यद्यपि यह हजारों वर्षों तक चल सकता है। वे आधुनिक अध्यात्मवादियों से भी अधिक गहन अध्ययन में लगे रहे, और उस लोक में जीवन की परिस्थितियों का अध्ययन करके उन्होंने यह देखा कि किन परिस्थितियों का उस लोक में उनके निवास से संबंध है।
हिंदू धर्म के प्राचीन ऋषियों ने यह देखा कि ये ऋषि उस क्षेत्र से परे नहीं जा सकते, दिव्यता के स्तर तक नहीं पहुंच सकते, दिव्य सत्य को नहीं समझ सकते, और इसलिए दिव्य सत्य के शिक्षक नहीं हो सकते। यह जानकर, हिंदू धर्म के सत्य के ऋषियों ने अपने शिष्यों, अनुयायियों और सत्य की खोज करने वालों को चेतावनी दी कि वे अपना समय और ऊर्जा उन लोगों की सहायता मांगने में बर्बाद न करें जो मानसिक स्तर से परे सत्य को नहीं जान सकते, जो भौतिक जगत में ही हैं और दिव्यता के स्तर तक नहीं पहुंच सकते।

110
प्राचीन सत्य के उन ऋषियों की चेतावनियों और उपदेशों की अवहेलना करते हुए, आधुनिक अध्यात्मवादी देहहीन आत्माओं से दिव्य ज्ञान और बुद्धि प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, और दिवंगत आत्माओं की कृपा पाने की हर संभव कोशिश

करते हैं, इस आशा में कि उन्हें ईश्वर, आत्मा के वास्तविक स्वरूप और व्यक्तिगत आत्मा का सार्वभौमिक आत्मा से संबंध के बारे में कुछ ज्ञान प्राप्त होगा। वे सच्चे धर्म की नींव रखने का प्रयास करते हैं, जो पूरी तरह से कुछ मूर्ख, मंदबुद्धि और सांसारिक मृत आत्माओं के संदेशों से प्राप्त ज्ञान पर निर्भर है। हिंदू इस बात पर आश्चर्य करते हैं कि समझदार लोग रात-रात भर सार्वजनिक प्रार्थना सभाओं में बैठकर उन अज्ञानी आत्माओं की निरर्थक बातों को कैसे सुनते हैं, जो कुछ भी नहीं जानतीं और न ही हमें जीवन के उच्च सत्यों के बारे में कुछ सिखा सकती हैं।
मैंने पहले भी कहा है कि अमेरिका में मौजूद हर तरह के माध्यमों के साथ कुछ समय बिताने के बाद, मुझे एक भी ऐसा माध्यम या दिवंगत आत्मा नहीं मिली जो मृत्यु के बाद के जीवन, या व्यक्तिगत आत्मा के वास्तविक स्वरूप या सार्वभौमिक आत्मा से उसके संबंध के बारे में मेरे द्वारा पूछे गए किसी भी प्रश्न का संतोषजनक उत्तर दे सके। इसके विपरीत, मैंने कई आत्माओं को ये प्रश्न पूछे जाने पर यह कहते सुना: 'इन प्रश्नों का उत्तर आप स्वयं हमसे बेहतर दे सकते हैं।' कई बार मैंने कई आत्माओं को अन्य उपस्थित लोगों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में मेरा उल्लेख करते सुना। पिछले ग्रीष्मकाल में एक प्रेत-संवेदना सत्र में एक आत्मा को यह कहते हुए सुनकर मुझे हंसी आई। यह प्रकट होने वाले माध्यम का आत्मा-नियंत्रित रूप था और आत्मा ने सबसे पहले यह कहा: 'ओह, यहाँ एक विचार-स्तंभ है, हम इसके सामने कैसे बात कर सकते हैं?' मैं इसका अर्थ नहीं समझ पाया, और बाद में मुझे पता चला कि यह अभिव्यक्ति मेरे संदर्भ में थी।
आत्माएँ आतीं और कुछ विषयों पर बात करतीं, लेकिन कई बार मैंने देखा कि उनके कुछ उत्तर मेरे विचारों, मेरी धारणाओं और मेरे परिचित भावों की हूबहू नकल थे, और वे इतनी सटीक रूप से टेलीपैथिक रूप से दोहराए जाते थे मानो मैं खुद अपने सवालों के जवाब दे रहा हूँ। मैं पहले भी कह चुका हूँ कि कई बार जब मैं पुनर्जन्म के सिद्धांत पर व्याख्यान दे रहा था, तो मुझे सुनने आए माध्यमों ने व्याख्यान के बाद अपनी राय व्यक्त की। कुछ आए और मुझसे बोले: 'मेरे मार्गदर्शक ने ठीक वही सिखाया है जो आपने आज दोपहर समझाया है।' उनके मार्गदर्शक ने उन्हें पुनर्जन्म के बारे में सिखाया था, लेकिन अन्य माध्यमों को यह सिद्धांत बिल्कुल पसंद नहीं था। वे आए और बोले: 'यह एक भयानक विचार है।' मैंने इतने विरोधाभासी विचार सुने कि मैं उन्हें अभी

बयान नहीं कर सकता। कुछ कहते: 'पुनर्जन्म ही जीवन का एकमात्र समाधान है' और अन्य आत्माएँ अलग राय रखतीं। अगर वे सब कुछ जानते हैं, तो वे इसे क्यों नहीं सिखाते? उनकी राय इतनी विरोधाभासी क्यों होती है? तो आप इन आत्माओं से ब्रह्मांड के परम सत्य और वास्तविकता, हमारे सच्चे स्वरूप और ईश्वर से उसके संबंध को जानने की उम्मीद कैसे कर सकते हैं, जो स्वयं माध्यमों से कमतर हैं? जैसे माध्यमों को कोई भी नियंत्रित कर सकता है, वैसे ही उनके नियंत्रण में आने वाली आत्माएं साधारण प्राणी हैं जो उच्च कोटि की किसी भी बात की व्याख्या नहीं कर सकतीं। मैंने पहले भी कहा है कि यह मानते हुए कि 111 ये आध्यात्मिक सत्र सत्य सिद्ध हो चुके हैं, तो जिज्ञासा की संतुष्टि और जीविका कमाने के साधनों से परे इन संवादों से अध्यात्मवादियों ने क्या सीखा है?
भारत में, बेशक, हम अपने दोस्तों को माध्यम बनने की अनुमति नहीं देते, बल्कि इसे एक बीमारी मानते हैं। एक बार कोई माध्यम बन जाए तो उससे बाहर निकलना बहुत मुश्किल होता है। हम सार्वजनिक séances की अनुमति नहीं देते, क्योंकि हम अपने पूर्वजों और दिवंगत मित्रों का अधिक सम्मान करते हैं और इन आत्माओं का शोषण करके धन कमाना नहीं चाहते। हम उन आत्माओं को बुलाकर उनसे जीवन यापन और धन कमाने में मदद मांगने की बजाय अभाव में मरना पसंद करेंगे। हिंदू, बेशक, सत्य की खोज करने वालों की इतनी परवाह नहीं करते। वे आध्यात्मिक माध्यमों और सार्वजनिक séances में नहीं जाते, क्योंकि वे जानते हैं कि संवाद करने वाली आत्माएं अज्ञानी और पृथ्वी से बंधी होती हैं। वे इसके बजाय प्रार्थना करते हैं, उनके लिए अच्छे विचार भेजते हैं और उनके नाम पर अच्छे कर्म करने का प्रयास करते हैं, ताकि वे अपनी पृथ्वी से बंधी अवस्था से मुक्त हो सकें।
जन्म और मृत्यु का चक्र देवताओं के सर्वोच्च स्वर्ग और मनुष्य के लोक के बीच के सभी चरणों को समाहित करता है। हम अपनी इच्छाओं के अनुसार ऊपर-नीचे होते रहते हैं। लेकिन इस महान नियम को जानने के बाद, परम सत्य के साधकों ने उस मार्ग की खोज की जिससे व्यक्ति इस पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त होकर उस अवस्था को प्राप्त कर सकें जहाँ से कोई वापसी नहीं होती। वे सभी घटनाओं से परे जाकर पितरों के लोक से भी ऊपर उठ जाते हैं। भगवद् गीता में कहा गया है: सर्वोच्च स्वर्ग से लेकर सभी लोक भौतिक हैं। उनमें रहने वाले लोग...

इसलिए, वे कारण और प्रभाव के नियमों, या क्रिया और प्रतिक्रिया के नियमों के अधीन हैं; नहीं
जो व्यक्ति इन नियमों से मुक्त है, वही स्वतंत्र है। केवल वही व्यक्ति मुक्त है जिसने घटनाओं से परे जाकर मुक्ति प्राप्त कर ली है।
जो सत्य को जानकर स्वयं सत्य बन गया है, और जो परम आत्मा को जानकर,
वह उस आत्मा के साथ एक हो गया है।
पूर्वजों की पूजा करने वालों के लिए स्वर्ग की ओर ले जाने वाला मार्ग पितृयान कहलाता है, अर्थात् पूर्वजों का मार्ग। 1. परन्तु सत्य की प्राप्ति की ओर ले जाने वाला दूसरा मार्ग इससे भिन्न है। स्वर्ग में प्रवेश पूरी तरह व्यक्ति के अच्छे विचारों और कर्मों पर निर्भर करता है, परन्तु कितने भी अच्छे विचार और कर्म उस चीज़ को उत्पन्न नहीं कर सकते जो सभी विचारों से परे है और विचारों और कर्मों के प्रभावों से भी परे है। सच्चे आत्मज्ञान और सार्वभौमिक आत्मा से हमारे संबंध के ज्ञान के माध्यम से परम सत्य की प्राप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को संस्कृत में देवयान, दिव्य मार्ग कहा जाता है। इस मार्ग के शिक्षक वे हैं जो सत्य के सबसे सच्चे और गंभीर साधक हैं, जो भौतिक या मानसिक किसी भी घटना की परवाह नहीं करते।

1. इस अध्याय के अंत में दी गई टिप्पणी देखें। 112
2. इस अध्याय के अंत में टिप्पणी देखें। आधुनिक आत्माओं का सबसे वास्तविक अनुभव कुछ लोगों की जिज्ञासा को शांत करने या बिछड़े हुए रिश्तेदारों और दोस्तों से मिलने की आशा जगाने में सहायक हो सकता है, और उन लोगों के दिलों को सांत्वना दे सकता है जो अपने मित्रों और रिश्तेदारों से मिलने के लिए तरस रहे हैं, लेकिन इससे आगे यह सत्य की अनुभूति या ईश्वर-चेतना की प्राप्ति नहीं करा सकता।
सच्चे धर्म का उद्देश्य व्यक्ति की आत्मा को दिव्य आत्मा से जोड़ना और प्रत्येक आत्मा को उस आत्मा के साथ पुनर्मिलन का अहसास कराना है, जिससे वह आत्मा सुख-सुविधाओं और बंधनों से मुक्त हो जाए। जो इस अहसास को प्राप्त कर लेता है, वह अज्ञान, स्वार्थ और अन्य सभी दोषों से मुक्त हो जाता है। वह ज्ञान के लिए किसी आत्मा के पास नहीं जाता, बल्कि अपने भीतर ही सारा ज्ञान पाता है। वह ज्ञान के स्रोत तक जाता है और वहीं से ज्ञान का जल ग्रहण करता है। आत्माएँ ऐसी बातें नहीं सिखा सकतीं, और न ही पिता या पूर्वज उसे सिखा

सकते हैं जिसने परमेश्वर के साथ अपने एकत्व का अहसास कर लिया है। ऐसी आत्मा मुक्त हो जाती है और उतनी ही परिपूर्ण होती है जितनी कि ब्रह्मांड का पिता परिपूर्ण है। वह इस पृथ्वी पर साक्षात ईश्वर है।

• • • • •

टिप्पणी
स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता द्वारा
1. पितृयान को धूम-मार्ग, यानी पूर्वजों का अंधकारमय मार्ग कहा जाता है। छान्दोग्य ग्रंथ में,
Brihadaranyaka, Katha, Prashna and other Upanishads, and in the Bhagavad Gita, it has
इसका अच्छा वर्णन किया गया है। लेकिन इसका बीज हमें अक्सर ऋग्वेद के भजनों में मिलता है, जिसका प्रयोग एक के साथ किया जाता है।
अंत्येष्टि के बजाय बलिदान का भाव:
ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 2, मंत्र 7: “हे अग्नि, तुम पृथ्वी और आकाश से उत्पन्न हो।”
(द्वव-पृथ्वी)। आप पितृलोक का निश्चित मार्ग जानते हैं, इसलिए आप इतने प्रकाशमान हों कि...
उस मार्ग को रोशन करो।
2. इसका मूल हमें हिंदू धर्म के सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद में मिलता है। वहीं से हमें यह जानकारी मिलती है।
hymn: (Rig Veda, Mandala 10, Sukta 18 Mantra 1), i.e., “O Mrityu, go back through a
अलग मार्ग: देवताओं तक ले जाने वाले मार्ग (आर्चिर-मार्ग) को त्यागकर दूसरे मार्ग पर चलें।
इसके अलावा दूसरा तरीका (पितृयाना) है।

113

अध्याय XIII

आध्यात्मिक माध्यमता
आधुनिक अध्यात्मवाद की घटनाओं ने वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए एक नया क्षेत्र खोल दिया है और यूरोप और अमेरिका के उत्साही पुरुषों और महिलाओं को अपने दिवंगत मित्रों और रिश्तेदारों से संवाद करने की इच्छा से प्रेरित किया है। मृत्यु के बाद जीवन में विश्वास न रखने वाले संशयवादियों और अज्ञेयवादियों ने आत्माओं के वास्तविक संवादों के माध्यम से भविष्य के जीवन के बारे में कुछ सत्य खोजे हैं। उन्होंने जाना है कि शरीर की मृत्यु आत्मा के जीवन का अंत नहीं है, बल्कि इसके विपरीत, यह उस अद्भुत लोक की दहलीज है जहाँ मृतकों की आत्माएँ विद्यमान रहती हैं और नए अनुभव और नए आनंद का अनुभव करती हैं।
जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है, आधुनिक अध्यात्मवाद ने ईसाई धर्मशास्त्र के नरक की आग से संबंधित सिद्धांतों और अन्य मान्यताओं के साथ-साथ इस सिद्धांत को भी करारा प्रहार किया है कि मनुष्यों की आत्माएं शाश्वत कष्ट भोगने के लिए अभिशप्त हैं। इसने इस तथ्य को सिद्ध किया है कि हमारे मृत मित्रों और रिश्तेदारों की आत्माएं हमें यह बताने के लिए उत्सुक रहती हैं कि वे सुख-शांति से हैं, हमारे सांसारिक मामलों में गहरी रुचि रखती हैं, और हमें सही मार्ग पर मार्गदर्शन करने, अच्छी सलाह देने और दूर से ही हम पर मंडरा रहे खतरों और दुर्भाग्य से हमारी रक्षा करने के लिए हमेशा तत्पर रहती हैं। ये और इसी तरह की कई अन्य मान्यताएं उन अधिकांश अध्यात्मवादियों द्वारा कायम रखी गई हैं जो माध्यम बनकर अपने दिवंगत मित्रों से संवाद करने का प्रयास करते हैं।
हम सभी माध्यम बनने की प्रक्रिया से परिचित हैं। जो लोग माध्यम बनना चाहते हैं, वे ऐसे अन्य मित्रों की संगति तलाशते हैं जिनकी इच्छा भी यही हो। वे एक समूह बनाते हैं जिसे विकास समूह कहा जाता है। अन्य माध्यमों या उनके आध्यात्मिक मार्गदर्शकों द्वारा उन्हें एक निश्चित कमरा चुनने के लिए कहा जाता है जहाँ उन्हें सप्ताह में कम से कम एक बार यथासंभव अधिक से अधिक बार बैठना चाहिए, लेकिन बैठक का समय और समय सप्ताह की एक ही शाम होना चाहिए। उन्हें प्रत्येक बैठक ठीक समय पर शुरू करनी चाहिए, क्योंकि

आत्माएँ भी हमारी तरह ही यहाँ अपने कर्तव्यों और दायित्वों का निर्वाह करने में व्यस्त रहती हैं।
इसलिए उन्हें पहले से अपॉइंटमेंट लेना होगा और विकास प्रक्रिया में सहायता करने के लिए निर्धारित समय पर आना होगा। कमरे के वातावरण को चुंबकीय बनाने के लिए कम से कम पांच या छह बैठकों की आवश्यकता होती है, और जब यह पूरी तरह से चुंबकीय हो जाता है, तो माध्यम बनने की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। बैठकें पूर्ण अंधकार में होनी चाहिए। जिस प्रकार एक फोटोग्राफर के लिए नेगेटिव विकसित करने के लिए एक डार्क रूम अनिवार्य है, उसी प्रकार यह बिल्कुल आवश्यक है।
114 माध्यम बनने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति के लिए आवश्यक है। यहाँ हमें यह याद रखना चाहिए कि माध्यम बनना मन और शरीर की एक नकारात्मक अवस्था है, जो आसानी से उत्पन्न हो सकती है यदि उपस्थित व्यक्ति कुछ भी न सोचे, बल्कि निष्क्रिय रहे और केवल ग्रहणशील भाव रखे, मानो कुछ प्राप्त करने की प्रतीक्षा कर रहा हो। अंधकार, जो भौतिक दृष्टि को अवरुद्ध करता है, प्रकाश का नकारात्मक ध्रुव होने के कारण, स्वाभाविक रूप से इंद्रिय गतिविधियों को शांत करने और उन्हें पूर्णतः नकारात्मक अवस्था में लाने में सहायक होता है।
मधुर संगीत विकास प्रक्रिया में बहुत सहायक होता है, लेकिन ध्यान लगाने वालों को स्वयं संगीत प्रस्तुत नहीं करना चाहिए, क्योंकि गाने के लिए सकारात्मक इच्छाशक्ति और मन की सक्रियता आवश्यक होती है। ध्यान लगाने वालों में नकारात्मक प्रवृत्ति वाले लोगों को सकारात्मक प्रवृत्ति वाले लोगों के साथ बारी-बारी से आना चाहिए। इस दौरान, ध्यान लगाने वालों को कुछ भी नहीं सोचना चाहिए और न ही कोई प्रश्न पूछना चाहिए, बल्कि अपने भीतर के अदृश्य नियंत्रण की इच्छा के प्रति स्वयं को समर्पित कर देना चाहिए और विकास प्रक्रिया के अद्भुत परिणामों की शांतिपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए।
माध्यम विद्या का सर्वोत्तम परिणाम उन लोगों को प्राप्त होगा जो अपने शरीर, मन और इच्छाशक्ति को पूर्णतः आध्यात्मिक शक्ति के अधीन कर लेते हैं। धीरे-धीरे आध्यात्मिक बुद्धि माध्यम की इच्छाशक्ति, संकल्प शक्ति और इंद्रियों को नियंत्रित करने लगती है। यह नियंत्रण आंशिक या पूर्ण हो

सकता है। आंशिक नियंत्रण मस्तिष्क के किसी विशेष भाग, किसी विशेष अंग, किसी तंत्रिका केंद्र, या शरीर के किसी अंग या मांसपेशी पर हो सकता है। आंशिक नियंत्रण को दो सामान्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: पहला, चेतन और दूसरा, अचेतन। इनमें से प्रत्येक को घटनाओं के अनुसार विभिन्न अन्य वर्गों में उपविभाजित किया जा सकता है। देश भर में ऐसे अनेक पुरुष और महिलाएं हैं जिनकी कुछ मानसिक क्रियाएं आंशिक रूप से किसी बाहरी आध्यात्मिक शक्ति के नियंत्रण में होती हैं, जिनसे उन्हें कभी-कभी कुछ आभासों के रूप में संदेश प्राप्त होते हैं, जिनके बारे में वे सचेत नहीं होते, परन्तु वे अपने शरीर या अपने परिवेश के प्रति सचेत रहते हैं। इस चेतन आभास माध्यमता में, व्यक्ति उन चीजों के बारे में बोल या लिख सकता है जिन्हें वह नहीं जानता या समझता है। इनमें से कुछ वर्गों को प्रेरक वक्ता और लेखक के रूप में जाना जाता है। परन्तु दूसरे वर्ग में वे माध्यम शामिल हैं जो किसी भी बाहरी आध्यात्मिक नियंत्रण के प्रति सचेत नहीं होते जो आंशिक रूप से उनके मन को प्रभावित करता है। वे यह जाने बिना बोलते और लिखते हैं कि वे किसके नियंत्रण में बोल और लिख रहे हैं।
कुछ लोग बोलने या लिखने के समय अपने शरीर और परिवेश के प्रति आंशिक रूप से अचेत हो जाते हैं। मांसपेशियों और तंत्रिका केंद्रों पर आंशिक नियंत्रण से कई प्रकार की माध्यमता संभव हो पाती है। प्लांचेट लेखन, ओइजा बोर्ड का संचालन, स्वचालित लेखन, अंतर्ज्ञान और श्रवण शक्ति, मांसपेशियों और तंत्रिका तंत्र से संबंधित माध्यमता की कुछ अलग-अलग घटनाएं हैं। जब कोई आत्मा भुजाओं की मांसपेशियों को नियंत्रित करती है, तो माध्यम उन्हें हिला सकता है।
115 भारी वज़न। जब ऑप्टिक नसें और रेटिना नियंत्रित होते हैं, तो माध्यम उन चित्रों या छवियों को देख पाता है जो उसके आध्यात्मिक नियंत्रण द्वारा उसकी चेतना को प्रस्तुत की जाती हैं। इसी प्रकार, जब कान की तंत्रिका प्रणाली और श्रवण नसें आत्मा द्वारा नियंत्रित होती हैं, तो माध्यम ऐसी ध्वनियाँ सुन सकते हैं जो उनके नियंत्रण द्वारा उन्हें सुनाई जानी चाहिए। इसी तरह, गंध, स्वाद या स्पर्श जैसी अन्य इंद्रियों पर भी आंशिक नियंत्रण किया जा सकता है। कुछ इंद्रियाँ इस नियंत्रण के प्रति सचेत होती हैं, जबकि अन्य अचेत होती हैं।

यह आंशिक नियंत्रण आम तौर पर अधिक पूर्ण और व्यापक नियंत्रण की ओर ले जाता है, यदि उपस्थित व्यक्ति विकास प्रक्रिया को जारी रखते हैं। माध्यम के मन और शरीर पर पूर्ण नियंत्रण ट्रान्स माध्यमता में प्रकट होता है। इसकी घटनाएँ विविध और अत्यंत आकर्षक होती हैं, क्योंकि इस प्रकार की माध्यमता रहस्यमय प्रकृति की होती है। माध्यम आम तौर पर गहरी नींद की अवस्था में चला जाता है जो सम्मोहन नींद के समान होती है। इस अवस्था में जो कुछ भी होता है, माध्यम उससे अनभिज्ञ होता है। नियंत्रक शक्तियों का माध्यम के भौतिक शरीर पर पूर्ण प्रभुत्व होता है। आत्माएँ माध्यम के स्वर अंगों या किसी अन्य अंग का अपनी इच्छा से उपयोग कर सकती हैं। माध्यम की इच्छाशक्ति और संकल्प शक्तियाँ पूर्णतः निलंबित हो जाती हैं। माध्यम के शरीर के माध्यम से आत्माएँ माध्यम की चेतना पर कोई प्रभाव डाले बिना बोल सकती हैं या कोई भी घटना कर सकती हैं। जिस प्रकार सम्मोहन की अवस्था में कोई रोगी अपनी इच्छाशक्ति और संचालक के सुझाव के पूर्ण नियंत्रण में रहते हुए बात कर सकता है, चल सकता है, खा सकता है, नाच सकता है या कोई अन्य क्रिया कर सकता है, लेकिन सामान्य चेतना में लौटने के बाद उसे उन क्रियाओं या शब्दों में से कुछ भी याद नहीं रहता, उसी प्रकार एक ट्रान्स माध्यम को ट्रान्स की अवस्था के दौरान घटी घटनाओं का कोई स्मरण नहीं रहता।
हर देश में अध्यात्मवादियों के बीच ऐसे अनेक समाधि माध्यम मौजूद हैं। यह समाधि माध्यमता धीरे-धीरे 'भौतिक माध्यमता' में विकसित हो सकती है। माध्यम गहन समाधि की अवस्था में चला जाता है। आध्यात्मिक नियंत्रक, जो भौतिकीकरण की कला में निपुण होते हैं, इस प्रक्रिया को समझते हैं। वे माध्यम के भौतिक और मानसिक अंगों से प्राणिक और चुंबकीय ऊर्जाओं को निकालकर उन्हें बाहरी अमिश्रित तत्वों और विलीन पदार्थ (एक्टोप्लाज्म) के साथ मिलाकर ऐसी घटनाएँ उत्पन्न कर सकते हैं जिन्हें उपस्थित व्यक्ति अनुभव कर सकता है। बेशक, कई फर्जी भौतिकीकरण होते हैं, जिनका अमेरिका और यूरोप दोनों जगह बार-बार पर्दाफाश हुआ है। लेकिन कुछ वास्तविक भौतिकीकरण भी होते हैं, जिनमें से कुछ को मैंने स्वयं देखा है और उन परिस्थितियों में संभव हर तरीके से उनकी सावधानीपूर्वक जांच की है।
1. सर आर्थर कॉनन डॉयल अपने लेख "द एब्सोल्यूट प्रूफ" में लिखते हैं: "...गवाहों ने कहा कि

कुछ लोग, जिन्हें वे 'भौतिक माध्यम' कहते थे, उनके पास एक विचित्र भौतिक क्षमता थी कि वे
वे अपने शरीर से एक चिपचिपा, जिलेटिन जैसा पदार्थ निकाल सकते थे जो देखने में भिन्न प्रतीत होता था।
पदार्थ का प्रत्येक ज्ञात रूप, इस अर्थ में कि वह ठोस रूप धारण कर सकता है और भौतिक उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जा सकता है, और फिर भी
यह पुनः समाहित हो जाता है, और जाते समय जिन कपड़ों से गुजरा था, उन पर भी कोई निशान नहीं छोड़ता।
शरीर। 116
इस पदार्थ को वास्तव में कुछ उद्यमी जांचकर्ताओं ने छुआ था जिन्होंने बताया कि यह था
यह लचीला था और संवेदनशील प्रतीत होता था, मानो यह वास्तव में माध्यम से निकला एक जैविक पदार्थ हो।
शरीर।" (स्वामी प्रज्ञानानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता द्वारा प्रदान किया गया संदर्भ।)
मुझे एक प्रेतात्माओं से संपर्क करने के लिए कक्ष में बुलाया गया, जहाँ मैंने अपनी पीठ पर कम से कम बीस हाथों का स्पर्श महसूस किया। कुछ हाथ मेरा कॉलर और कमरबंद खींच रहे थे, और कुछ एक ही समय में मेरी पीठ पर हाथ रख रहे थे। तभी एक आत्मा बोली: 'क्या तुम्हें लगता है कि यह सब कुछ माध्यम कर रहा है?' कक्ष में घोर अंधेरा था, हालाँकि कमरे के एक कोने में लकड़ी के बक्से से हल्की रोशनी आ रही थी। फिर उसी आवाज़ ने कहा: 'माध्यम पर हाथ रखो,' और मेरे हाथों को खींचकर माध्यम पर रख दिया। मैंने माध्यम के अकड़े हुए अंगों को महसूस किया, जिसके हाथ एक मोटी रस्सी से कसकर बंधे हुए थे। वह एक झुकी हुई झूलती कुर्सी पर गहरी समाधि की अवस्था में बैठा था।
मैंने एक अमेरिकी मूलनिवासी आत्मा का साकार हाथ थामा था जो मेरे हाथ में ही विलीन हो गया। मैंने कलकत्ता के मूल निवासी अपने एक मित्र का वास्तविक साकार रूप भी देखा है। बहुत कम लोग साकार होने की प्रक्रिया को समझते हैं। हर देश में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहाँ आत्माओं ने किसी माध्यम की सहायता के बिना स्वयं को साकार रूप में प्रकट किया है।
माध्यम और उपस्थित व्यक्तियों की जीवनदायिनी और चुंबकीय ऊर्जाएँ ही उन सभी घटनाओं का आधार हैं जो किसी भी प्रेतवादन सत्र में घटित होती हैं।

मैंने प्रेतवादन सत्र के दौरान कई माध्यमों से बात की है और उनसे पूछा है कि सत्र समाप्त होने के बाद उन्हें कैसा महसूस हुआ। उन्होंने हमेशा यही उत्तर दिया है कि मानो उनका पूरा शरीर खाली हो गया हो, मानो उनमें न तो जीवन बचा हो और न ही ऊर्जा, और मानो उनके मन और शरीर से सब कुछ छीन लिया गया हो। वे जागृत अवस्था में न तो सोच सकते हैं और न ही कोई मानसिक गतिविधि प्रदर्शित कर सकते हैं। क्या यह सबसे दयनीय स्थिति नहीं है?
निःसंदेह इन समाधि माध्यमों को शहीद कहा जा सकता है। अज्ञानता के कारण वे अपनी जीवन शक्ति और इच्छाशक्ति को आध्यात्मिक घटनाओं के नाम पर अर्पित कर देते हैं, जो अंततः उन्हें शारीरिक, मानसिक और नैतिक रूप से नष्ट कर देती हैं और उनकी आत्मा के विकास और उन्नति को रोक देती हैं। अन्य प्रकार की समाधि भी होती हैं, जैसे चित्रकारी माध्यम, तुरही वादन माध्यम और स्वतंत्र स्लेट-लेखन माध्यम आदि। एक और प्रकार का समाधि नियंत्रण है जिसे पुराने समय में प्रेतबाधा या जुनून के रूप में जाना जाता था, लेकिन अब चिकित्सकों द्वारा इसे एक प्रकार का पागलपन माना जाता है। माध्यमता की ये सभी और अन्य विभिन्न घटनाएँ अब मान्य हैं और वैज्ञानिक रूप से सिद्ध तथ्य हैं। इन घटनाओं की व्याख्या के लिए विभिन्न सिद्धांत प्रतिपादित किए गए हैं। हालाँकि, आध्यात्मिक सिद्धांत के बाहर के अधिकांश सिद्धांत अपर्याप्त सिद्ध हुए हैं।
जिन लोगों ने वास्तविक माध्यमों के माध्यम से प्रकट होने वाली घटनाओं का अनुभव किया है, उनमें से अधिकांश इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि निराकार आत्माएं जीवित मनुष्यों से संवाद कर सकती हैं, कुछ विशेष परिस्थितियों में स्वयं को साकार कर सकती हैं और कई अन्य चमत्कार कर सकती हैं। अब सवाल यह उठता है कि क्या मनुष्यों के लिए इन शक्तियों का विकास करना लाभकारी है?
1. इस अध्याय के अंत में दी गई टिप्पणी देखें। 117
2. इस अध्याय के अंत में दिया गया नोट देखें। क्या हमें माध्यम बनने और माध्यम बनने की क्षमता विकसित करने वाले अध्यात्मवादियों को प्रोत्साहित करना चाहिए? हम पहले ही देख चुके हैं कि माध्यम बनने का अर्थ मन और शरीर की ग्रहणशील या नकारात्मक अवस्था है। यदि कोई व्यक्ति सकारात्मक है, तो उसके लिए एक अच्छा माध्यम बनना अत्यंत कठिन होगा। इसलिए, सभी परिस्थितियों में सभी व्यक्ति माध्यम बनने की क्षमता विकसित नहीं कर सकते।

यह सच है कि कुछ लोग जन्मजात माध्यम होते हैं, या स्वभाव से ही नकारात्मक होते हैं, और वे आसानी से किसी भी सजीव या निराकार सत्ता के वश में आ सकते हैं। माध्यम होने का अर्थ उच्च आध्यात्मिक बुद्धि से प्राप्त कोई वरदान, विशेष प्रतिभा या शक्ति नहीं है। जो लोग ऐसा सोचते हैं वे गलत हैं। स्पष्ट रूप से कहें तो, माध्यमता के संदर्भ में 'विकास' शब्द का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। क्योंकि माध्यमता एक व्यक्तिपरक प्रक्रिया है जिसमें मन और शरीर को निष्क्रिय किया जाता है और इच्छाशक्ति और संकल्प शक्तियों को किसी बाहरी प्रभाव के अधीन कर दिया जाता है जो माध्यम के शरीर को नियंत्रित करता है, जबकि 'विकास' का अर्थ है आत्मा में निहित सकारात्मक शक्तियों का प्राकृतिक विकास प्रक्रिया द्वारा धीरे-धीरे प्रकट होना। बाद वाली प्रक्रिया रचनात्मक है, जबकि पहली विनाशकारी है।
एक माध्यम जो अर्ध-सम्मोहन या पूर्ण समाधि की अवस्था में प्रेरित प्रतीत होता है, वह अपनी कोई ऐसी शक्ति प्रदर्शित नहीं करता जिसे वरदान या प्रेरणा कहा जा सके। यह माध्यम की शक्ति नहीं है जो उसे प्रेरित प्रतीत कराती है, बल्कि इसके विपरीत, माध्यम की इच्छाशक्ति और बौद्धिक क्षमताएं उस नियंत्रक आत्मा द्वारा निलंबित, नियंत्रित और निष्क्रिय रखी जाती हैं जो मन और शरीर का उपयोग करती है, जो निष्क्रिय रूप से आत्मा की इच्छा के प्रति समर्पित होते हैं। यह माध्यम को आत्मा का वरदान प्राप्त है। इसलिए इसे विकास नहीं कहा जा सकता।
जो माध्यम मन और शरीर से पूरी तरह नकारात्मक या निष्क्रिय हो जाता है, वह पृथ्वी से जुड़ी आत्माओं के चारों ओर के प्रभावों के अधीन हो जाता है। ये आत्माएँ लगातार नियंत्रण करने और किसी को अपना शिकार बनाने का अवसर तलाशती रहती हैं। इस प्रकार अज्ञानता के कारण, माध्यम एक ऐसा मानसिक क्षेत्र खोल देता है जो इन पृथ्वी से जुड़ी आत्माओं की इच्छा से प्रभावित होता है। हममें से कई लोगों ने एक ही सत्र में दर्जनों आत्माओं को प्रकट होते देखा है और वे प्रकट होने के लिए कितनी उत्सुक दिखाई देती हैं! यदि एक बार वह द्वार खुल जाए, तो उन बाहरी प्रभावों को रोकना मुश्किल हो जाता है जो भोले-भाले और नासमझ माध्यम की जीवन शक्ति को सताते और नष्ट करते रहते हैं। मैं ऐसे कई लोगों के मामले जानता हूँ जो कभी माध्यम थे, लेकिन अब बाहरी प्रभावों से बुरी तरह पीड़ित हैं और निरंतर प्रयासों के बाद भी उन पर काबू पाना उनके लिए कठिन है। इसलिए, माध्यम बनना किसी भी परिस्थिति में

वांछनीय स्थिति नहीं है, बल्कि पृथ्वी से जुड़ी आत्माओं की इच्छाओं के आगे अपनी इच्छा, मन और शरीर को समर्पित करना अपराध है।

118
कुछ माध्यमों को यह सोचकर प्रलोभन होता है कि वे दूर से देखने या सुनने की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं, या भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन वे भूल जाते हैं कि माध्यम बनने की प्रक्रिया से जो लोग दिव्य दृष्टि प्राप्त कर लेते हैं, वे अपनी इच्छा अनुसार कुछ भी देख या सुन नहीं सकते। वे केवल वही देख या सुन सकते हैं जो उनके नियंत्रक उन्हें दिखाना या सुनाना चाहते हैं। वे पूरी तरह से अपने नियंत्रकों के वश में होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे सम्मोहन के शिकार लोग अपने संचालक की इच्छा और सुझाव के वश में होते हैं। यह सर्वविदित तथ्य है कि माध्यम धीरे-धीरे अपना आत्म-नियंत्रण खो देते हैं। वे अधिकाधिक घबरा जाते हैं और यह घबराहट कभी-कभी मानसिक दुर्बलता में परिणत हो जाती है। विभिन्न प्रकार के मस्तिष्क रोग, जीवन शक्ति का क्षय, पशुवत आकर्षण, निरंतर पागलपन और अल्प आयु माध्यम बनने के दुष्परिणाम हैं।
उच्च स्तर की माध्यमता का अर्थ है माध्यम की मानसिक स्थिति का बिगड़ जाना। माध्यम आमतौर पर स्मृति हानि से ग्रस्त होते हैं। वे किसी एक विषय पर लंबे समय तक ध्यान केंद्रित नहीं कर पाते। वे क्रमबद्ध रूप से सोच या तर्क नहीं कर पाते। उनकी इच्छाशक्ति कमजोर हो जाती है और वे चिड़चिड़े स्वभाव के हो जाते हैं। वे अभिमानी, अहंकारी और अत्यंत स्वार्थी हो जाते हैं। उनमें पशुवत प्रवृत्ति और इच्छाएं प्रबल हो जाती हैं। कुछ माध्यम अनैतिक, बेईमान और असत्य हो जाते हैं। आंकड़ों से पता चला है कि 74 प्रतिशत पेशेवर माध्यमों में असामान्य पशुवत प्रवृत्ति विकसित हो जाती है। लगभग 60 प्रतिशत हिस्टीरिया के शिकार हो जाते हैं, 85 प्रतिशत तंत्रिका संबंधी चिड़चिड़ापन से पीड़ित होते हैं, 58 प्रतिशत धोखाधड़ी और बेईमानी में लिप्त हो जाते हैं, और 95 प्रतिशत में नैतिक विवेक और साहस की कमी दिखाई देती है, जबकि 70 प्रतिशत अभिमान और स्वार्थ से ग्रस्त हो जाते हैं। माध्यम बनने के कुछ बुरे परिणाम ऐसे ही होते हैं। क्या अब हमें आश्चर्य करना चाहिए कि भारत में सत्य के द्रष्टा किसी के माध्यम बनने का इतना विरोध क्यों करते हैं? क्या हमें आश्चर्य करना चाहिए कि वेदांत दर्शन

आध्यात्मिक माध्यमता को क्यों स्वीकार नहीं करता? भारत में योगी अपने शिष्यों को कभी भी नकारात्मक या निष्क्रिय अवस्था में नहीं जाने देते। वे इस बात से इनकार नहीं करते कि हम पृथ्वी पर विद्यमान आत्माओं या दिवंगत पूर्वजों से संवाद कर सकते हैं, लेकिन वे जानते हैं कि माध्यम बनना एक विनाशकारी प्रक्रिया है, रचनात्मक नहीं। उन्होंने राज योग नामक एक प्रणाली की खोज की है, जिसमें वे उन सभी अद्भुत घटनाओं का वर्णन करते हैं, जिन्हें नकारात्मक अवस्था में जाए बिना या किसी निराकार आत्मा के समक्ष इच्छा और मन को समर्पित किए बिना वैज्ञानिक रूप से प्राप्त किया जा सकता है।
एक योगी एकाग्रता और ध्यान के अभ्यास के माध्यम से सकारात्मक विधि द्वारा अपनी दृष्टि और श्रवण शक्ति विकसित करता है। वह किसी भी समय और कहीं भी कुछ भी देख या सुन सकता है। जब वह अतिचेतन अवस्था को प्राप्त करता है, तो सभी उज्ज्वल और बुद्धिमान आत्माएं उसकी सेवा करने और उसके आदेशों का पालन करने के लिए आती हैं। वह निराकार आत्माओं का दास नहीं, बल्कि स्वामी होता है। एक सच्चा योगी सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ सर्वोच्च सार्वभौमिक आत्मा का माध्यम होता है, जबकि एक आध्यात्मिक माध्यम पृथ्वी से बंधी आत्मा के नियंत्रण में होता है।
119 जो अज्ञानी और अपूर्ण है। किसी भी माध्यम ने कभी आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त नहीं किया है, न ही उसने दिवंगत आत्माओं के संवाद के माध्यम से हमारी आत्माओं को नियंत्रित करने वाले उच्च नियमों को समझा है, जबकि एक सच्चा योगी, जो अतिचेतन अवस्था तक पहुँच चुका है, पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर ईश्वर-चेतना तक पहुँच चुका है। वह राष्ट्रों का आदर्श है। वह ईसा मसीह, बुद्ध और रामकृष्ण के समान है। वह इसी जीवन में पूर्णता प्राप्त कर लेता है, जबकि एक आध्यात्मिक माध्यम अपना सारा आत्म-नियंत्रण खो देता है और आध्यात्मिक प्रकृति को प्रकट करने का एक महान अवसर खो देता है और अज्ञान के अंधकार में रहता है, और मृत्यु के बाद नियंत्रकों के साथ जुड़ जाता है और उनके विचारों और कर्मों के अनुसार सुख या दुख भोगता है। दूसरी ओर, एक सच्चा योगी, इसी जीवन में पूर्णता प्राप्त करके, दिवंगत आत्माओं के क्षेत्र से परे चला जाता है, स्वर्ग से भी आगे निकल जाता है, और सर्वज्ञता और शाश्वत आनंद को प्राप्त करता है।

• • • • •

टिप्पणी
स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता द्वारा
1. बी. वी. श्रेन्क नॉटज़िंग अपनी पुस्तक 'फेनोमेना ऑफ मैटेरियलाइजेशन' (पृष्ठ 282) में लिखते हैं -
“वस्तुकरण प्रक्रिया में दो कारक शामिल हैं, जिनमें से एक सरल है आकृतियों, छवियों आदि के निर्माण के लिए इस सामग्री का स्वतः स्राव और निर्माण।
और सजीव अंग।
लेकिन भौतिकीकरण को नियंत्रित करने वाले नियम और शक्तियां चाहे जो भी हों, माध्यम की मानसिकता
इसे एक निर्णायक कारक के रूप में, या कम से कम एक सहायक कारक के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।"
2. नॉटज़िंग ने 'फेनोमेना ऑफ मैटेरियलाइजेशन' (पृष्ठ 13) में फिर से लिखा है - "सबसे महत्वपूर्ण
माध्यमता के वस्तुनिष्ठ प्रदर्शनों को दो मुख्य समूहों में विभाजित किया जा सकता है:
(1) टेलीकाइनेटिक घटनाएँ: इस वर्ग में निर्जीव वस्तुओं पर होने वाली हर प्रकार की क्रिया शामिल है।
बिना संपर्क के वस्तुएं, जैसे दोलन, मेजों का हिलना (आकर्षण और प्रतिकर्षण), वस्तुओं का उत्तोलन (उठाना और लटकाना), मुद्रास्फीति और गतियाँ
पर्दा, तथाकथित 'अपॉर्ट्स' से जुड़ी गति की यांत्रिकी, और अंत में
दूरस्थ स्थानों पर संगीतमय स्वरों और ध्वनियों का उत्पादन (जिसमें खटखटाहट और अन्य श्रव्य ध्वनियाँ शामिल हैं)
प्रभाव)। साथ ही संगीत वाद्ययंत्रों पर प्रभाव, प्रत्यक्ष लेखन - संक्षेप में, सभी रूप
दूरस्थ क्रिया के मामले में, चाहे उनके मामले में उत्पादन का तरीका कुछ भी हो।
माध्यमवादी शक्ति एक समान थी।
(2) टेलीप्लास्टिक घटनाएँ: इस समूह में तथाकथित भौतिकीकरण शामिल है

अध्यात्मवादियों की घटनाएँ, अर्थात् जैविक या यहाँ तक कि भौतिक रूपों और सामग्रियों का उत्पादन
120
अकार्बनिक पदार्थ, निश्चित अवधारणा और विचार छवियों के अनुसार
माध्यम, जिसकी उत्पत्ति स्मृति में या मानसिक अंतर्धाराओं में हो सकती है।
माध्यम, गवाहों में से एक की मानसिकता में, या (आध्यात्मिक अर्थ में) शक्तियों में
और माध्यम से परे की बुद्धिमत्ताएँ।"

121

अध्याय 14

स्वचालित स्लेट-लेखन
सन् 1899 में, मुझे संयुक्त राज्य अमेरिका के न्यूयॉर्क राज्य में चट्टाक्वा के पास लिली डेल में आयोजित आध्यात्मिक शिविर सभा में व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया गया था। मैंने हिंदू धर्म और पुनर्जन्म पर भाषण दिया। सभा एक ऐसे सभागार में आयोजित की गई थी जिसके किनारे खुले थे और सीटें अध्यात्मवाद में रुचि रखने वाले लोगों से भरी हुई थीं। मैं वर्षगांठ के दिन वक्ता था, और द्वार पर बिके टिकटों की संख्या के अनुसार, लगभग सात हजार लोग मुझे सुनने आए थे। इस विशाल श्रोता समूह में सभी प्रकार के माध्यम मौजूद थे। मेरे व्याख्यान सुनने के बाद, कई माध्यमों ने कहा कि उनके आध्यात्मिक मार्गदर्शकों ने भी वही सत्य सिखाया जो मैं सिखा रहा था, और उन्होंने मुझे अपने séances में आमंत्रित करके अपना सम्मान प्रकट किया।
4 अगस्त, 1899 को मैं एक प्रेतात्माओं से संपर्क करने के सत्र में शामिल हुआ, जहाँ मैंने एक टाइपराइटर पर स्वचालित टाइपिंग देखी। सभी ने अपने दिवंगत मित्रों के नाम बताए, जिनसे शायद वे संवाद कर सकें। मैंने भी अपने दिवंगत गुरुभाई, जोगेन का नाम बताया। उत्तर में मुझे नीली पेंसिल से लिखा हुआ 'जोगेन' नाम प्राप्त हुआ। इससे मेरी जिज्ञासा जागी और मैं यह जानना चाहता था कि इसे किसने लिखा है।
अगली सुबह, 5 अगस्त को 10 बजे, मुझे प्रसिद्ध स्वतंत्र स्लेट-लेखन माध्यम श्री कीलर से मिलने का निमंत्रण मिला। कुछ मिनटों बाद मैं बैठक कक्ष में गया और श्री कीलर के सामने खिड़की के पास एक झूला कुर्सी पर बैठ गया। खिड़की से धूप आ रही थी। हमारे बीच में एक छोटी सी चौकोर मेज थी, जिस पर कालीन जैसा कपड़ा बिछा था। श्री कीलर दो स्लेट लेकर आए, जिनके दोनों किनारों को मैंने अपने हाथों से स्पंज से साफ किया। फिर उन्होंने उन्हें अपने रुमाल से पोंछा। इसके बाद उन्होंने मुझसे उस आत्मा से कुछ प्रश्न लिखने को कहा जिससे मैं संवाद करना चाहता था।
मैंने उनसे पूछा कि क्या मैं अपने प्रश्न अपने मित्र की मातृभाषा में लिख सकता हूँ। उन्होंने उत्तर दिया: 'हाँ, आप लिख सकते हैं।' तब मैंने कागज की

एक पर्ची पर बंगाली में लिखा, उसे मोड़ा और उन दो स्लेटों के ऊपर रख दिया, जिनके बीच श्री कीलर ने पहले से ही लगभग आधा इंच लंबी स्लेट-पेंसिल का एक छोटा सा टुकड़ा रखा हुआ था। उन्होंने स्लेटों के चारों ओर अपना रुमाल ढीला-ढाला लपेट दिया। मैंने स्लेटों के दो कोनों को दोनों हाथों से पकड़ा और माध्यम ने अन्य दो कोनों को अपने हाथों से पकड़ा। इस तरह स्लेटें हमारे हाथों के बीच मेज से ऊपर हवा में उठी रहीं। हम कुछ मिनटों तक बैठे रहे और थोड़ी बातचीत की, क्योंकि उन्होंने कहा कि बातचीत से लेखन में कोई बाधा नहीं आती।

122
श्री कीलर ने तब कहा: 'मुझे नहीं पता कि आपका दोस्त आएगा या नहीं, लेकिन मैं पूरी कोशिश करूंगा।' कुछ मिनट बाद मैंने उनसे पूछा कि क्या कागज़ पर अपना नाम लिखना ज़रूरी है। उन्होंने जवाब दिया: 'हाँ।' फिर उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मैंने अपने दोस्त का नाम अंग्रेज़ी में लिखा है या नहीं। मैंने 'नहीं' में जवाब दिया। उन्होंने कहा: 'शायद मेरा आध्यात्मिक मार्गदर्शक आपके मनचाहे व्यक्ति को नहीं बुला पाएगा, क्योंकि वह आपकी भाषा नहीं पढ़ सकता।' यह सुनकर मैंने एक और पर्ची पर अंग्रेज़ी में निम्नलिखित लिखा: ‘जोगेन, क्या तुम यहाँ हो? मेरे बंगाली में लिखे सवालों के जवाब दो।’
और मैंने अपना नाम स्वामी अभेदानंद लिखकर हस्ताक्षर किए। फिर मैंने कागज की इस पर्ची को मोड़कर स्लेटों के ऊपर रख दिया। स्लेटों को फिर से अपने हाथों में लेकर हमने कई विषयों पर बातचीत की। श्री कीलर ने मुझसे पूछा कि क्या मेरे दिवंगत मित्र ने पहले कभी संवाद किया था। मैंने उत्तर दिया: 'कल शाम श्री कैंपबेल के सेन्स में मैंने अपने मित्र से कुछ प्रश्न पूछे, लेकिन उत्तर में मुझे कागज का एक टुकड़ा मिला जिस पर नीली पेंसिल से उनका नाम 'जोगेन' लिखा था और कुछ नहीं। बस इतना ही।'
कुछ ही मिनटों में श्री कीलर ने स्लेटों को मेज पर रखा और पेंसिल से ऊपर वाली स्लेट के एक कोने पर 'जोगेन यहाँ है' लिखा। उन्होंने मुझसे इसे पढ़ने को कहा। मैंने इसे पढ़ा और कहा कि नाम सही है। फिर उन्होंने दोनों हाथों से दोहरी स्लेट के दो कोने पकड़े और मुझे ऊपर बताए अनुसार बाकी दो कोने पकड़ने को कहा। स्लेटें मेज से लगभग छह इंच ऊपर हवा में हमारे हाथों के बीच लटकी हुई थीं, क्योंकि हम मेज के दोनों ओर बाहें फैलाकर बैठे थे। तभी मुझे

स्लेटों के अंदर से चलती हुई पेंसिल की खरोंच जैसी आवाज सुनाई दी। श्री कीलर ने कहा: 'क्या तुम्हें पेंसिल की आवाज सुनाई दे रही है?' मैंने कहा: 'हाँ।' यह लगभग दो सेकंड में खत्म हो गया। पेंसिल के चलने के दौरान मुझे अपनी बाहों में बिजली का झटका लगा। श्री कीलर ने कहा कि उन्हें भी हल्का सा झटका लगा। हमने स्लेटें खोलीं और उनमें साफ लिखावट में निम्नलिखित शब्द लिखे हुए पाए:
'मुझे यहां कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो इस सज्जन के सवालों का जवाब दे सके।'
हस्ताक्षर जी.सी. द्वारा किए गए थे। फिर मैंने श्री कीलर से पूछा कि ये जी.सी. कौन हैं, तो उन्होंने उत्तर दिया: ‘जी.सी. मेरे आध्यात्मिक मार्गदर्शक हैं। उनका पूरा नाम जॉर्ज क्रिस्टी है।’ फिर श्री कीलर ने कहा: ‘अरे, आपका मित्र यहाँ है, उसे लिखना ही होगा।’ उन्होंने स्लेटों को पोंछा और पहले की तरह फिर से लगा दिया। उन्होंने प्रश्नों वाली पर्ची को कुछ सेकंड के लिए अपने हाथों में पकड़े रखा और मुझे भी ऐसा ही करने को कहा। मैंने वैसा ही किया। फिर हमने स्लेटों को पहले की तरह फिर से पकड़ लिया। कुछ मिनटों बाद मुझे फिर से अपनी बाहों में हल्का सा बिजली का झटका लगा और दोहरी स्लेटों के अंदर से पेंसिल की खरोंच जैसी आवाज़ सुनाई दी। कुछ ही सेकंड में आवाज़ बंद हो गई और नतीजा यह हुआ कि स्लेट पर लिखी हुई बातें चार अलग-अलग भाषाओं में थीं: संस्कृत, ग्रीक, अंग्रेजी और बंगाली। लिखावट देखकर श्री कीलर बहुत हैरान हुए, क्योंकि वे
123 लोग संस्कृत, ग्रीक और बंगाली पढ़-लिख नहीं सकते थे। यहाँ मुझे यह उल्लेख करना आवश्यक है कि लिली डेल में मेरे अलावा एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जो संस्कृत और बंगाली पढ़-लिख सकता हो। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि बंगाली में लिखावट मेरे मित्र 'जोगेन' (स्वामी योगानंद) की लिखावट से मिलती-जुलती थी, जब वे जीवित थे।
मैंने श्री कीलर को इस असाधारण घटना के लिए धन्यवाद दिया, जिसे मैं समझा नहीं पा रहा था, और उनसे वे स्लेटें देने की विनती की, क्योंकि मैं अन्य माध्यमों या अध्यात्मवादियों को स्लेट पर लिखी हुई बातें दिखाकर यह पता लगाना चाहता था कि यह कैसे संभव हुआ। श्री कीलर ने कहा कि उन्होंने पहले कभी ऐसी स्लेट पर लिखी हुई बातें नहीं देखी थीं। मैंने स्लेटें लीं और उन्हें अलविदा कहा। इस प्रकार वह सत्र समाप्त हुआ।

मैं यहाँ यह बताना चाहूँगा कि न तो मेरे मित्र को और न ही मुझे ग्रीक भाषा आती थी। हालाँकि, एक अन्य प्रेतात्मा से संपर्क के दौरान, मुझे उस आत्मा ने बताया कि मेरा मित्र अपने साथ एक ग्रीक दार्शनिक की आत्मा लेकर आया था जिसने ग्रीक श्लोक लिखा था। पहले तो मुझे इस कथन पर विश्वास नहीं हुआ, लेकिन जब मैंने न्यूयॉर्क में कोलंबिया विश्वविद्यालय के ग्रीक भाषा के प्रोफेसर को वे पंक्तियाँ दिखाईं, तो उन्होंने कहा कि यह श्लोक प्लेटो की एक प्रसिद्ध रचना है, और इसका हर शब्द सही लिखा गया है। फिर उन्होंने श्लोक का शाब्दिक अर्थ समझाया।
एक और प्रेतात्माओं से संपर्क के दौरान, जब मैंने जोगेन को साकार रूप में देखना चाहा, तो उन्होंने कहा कि उन्हें यह पसंद नहीं है। लेकिन न्यूयॉर्क राज्य के लिली डेल में श्रीमती मॉस के प्रेतात्माओं से संपर्क के दौरान, कलकत्ता के 57, रामकांत बोस स्ट्रीट के बाबू बलराम बसु की आत्मा को पूर्ण रूप से साकार देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। उन्होंने अपने सिर पर वही जानी-पहचानी सफेद पगड़ी पहनी हुई थी, जैसी वे अपने नश्वर शरीर में रहते हुए पहनते थे। लेकिन अब उनकी पगड़ी के चारों ओर छोटे-छोटे बिजली के बल्ब जगमगा रहे थे। लहराती दाढ़ी और राजसी रूप वाले इस तेजस्वी व्यक्तित्व को देखकर मेरी आँखें चौंधिया गईं। उन्होंने कुछ नहीं बोला, बल्कि पगड़ी पहने सिर को हिलाकर मेरे प्रश्नों का उत्तर दिया। उन्होंने अपना दाहिना हाथ मेरे सिर पर रखा और चुपचाप मुझे आशीर्वाद दिया। उस समय मैंने देखा कि माध्यम श्रीमती मॉस (जो बहुत हष्ट-पुष्ट थीं) एक झूलती कुर्सी पर बेहोश होकर बैठी थीं। मुझे आशीर्वाद देने के बाद, बलराम बसु की पूरी साकार आकृति धुंध जैसे सफेद पदार्थ (एक्टोप्लाज्म) में विलीन हो गई और गायब हो गई।1
मुझे आश्चर्य हुआ कि वे क्यों नहीं बोले, और पूछने पर मुझे उत्तर मिला कि वे इसलिए नहीं बोले क्योंकि अपने सांसारिक जीवन से विदा होने से पहले वे बोल नहीं सकते थे। यह कथन इस तथ्य से पुष्ट होता है कि बलराम बसु अपनी मृत्यु से पहले दोहरी निमोनिया से पीड़ित थे और एक सप्ताह से अधिक समय तक बोल नहीं पाए थे।
एक अन्य प्रेतात्माओं से संपर्क के दौरान मैंने जोगेन की बंगाली आवाज़ सुनी, जब उन्होंने मुझसे टिन के तुरही के माध्यम से बात की। उन्होंने मुझसे कहा, 'क्या तुम्हें यह देश (अमेरिका) पसंद है?' जिस पर मैंने उत्तर

दिया, 'हाँ।' तब उन्होंने कहा, 'मुझे यह जगह पसंद नहीं है; मैं हमारी पवित्र माता के दर्शन के लिए भारत जा रहा हूँ।'
1. हमने स्वामी जी से यह भी सुना है कि उन्होंने पवित्र माता शारदा देवी के दर्शन किए थे।
Vivekananda, Swami Adbhutananda (Latu Maharaj), the Poet Girish Chandra Ghose and Sister
निवेदिता अपने देहधारण के ठीक बाद, साकार शरीरों में प्रकट होती हैं। प्रत्येक मामले में, 124
उन मानसिक दृष्टियों के समाप्त होने के तुरंत बाद, स्वामी को भारत से संदेश प्राप्त हुए।
उनके निधन की दुखद खबर देते हुए। - स्वामी प्रज्ञानानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ
कलकत्ता।
यहां मुझे यह अवश्य बताना चाहिए कि पृथ्वी पर रहते हुए जोगेन ने भगवान श्री रामकृष्ण की पत्नी, हमारी पवित्र माता की पूरे मन और आत्मा से सेवा की। मैंने अमेरिका में एक अदृश्य आत्मा द्वारा मेरे सामने बनाए गए चित्र भी देखे थे।

125

अध्याय पंद्रह

मृत्यु के बाद क्या है?
मृत्यु के बाद क्या होता है, इस पर पहले ही चर्चा हो चुकी है। यह प्रश्न अक्सर हमारे मन में उठता है और हम जानना चाहते हैं कि मृत्यु के समय शरीर त्यागने के बाद हमारा क्या होगा। जब हम विभिन्न धर्मग्रंथों को पढ़ते हैं, तो पाते हैं कि इसी प्रश्न पर चर्चा हुई है और विभिन्न उत्तर प्राप्त हुए हैं, या तो बुद्धि के माध्यम से, या संसार की अवधारणा के माध्यम से, या ईश्वरीय ज्ञान के माध्यम से। अनादि काल से हमें प्राप्त उत्तरों में, हम पाते हैं कि पुराने नियम में, जब यह प्रश्न अय्यूब के मन में उठा, तो उसने नकारात्मक उत्तर दिया। उसने मृत्यु की कामना की, यह सोचकर कि इससे उसकी मानसिक पीड़ा समाप्त हो जाएगी। भजन संहिता में हम पढ़ते हैं:
क्या तू मृतकों को चमत्कार दिखाएगा? क्या मरे हुए उठकर तेरी स्तुति करेंगे?
हमने फिर पढ़ा:
मृत्यु में तेरा स्मरण नहीं होता; कब्र में कौन तेरा धन्यवाद करेगा? 2 उनकी सांस निकल जाती है, वे इस धरती पर लौट आते हैं; उसी दिन उनके विचार नष्ट हो जाओ.3
“मृतक प्रभु की स्तुति नहीं करते, न ही वे जो मौन में विलीन हो जाते हैं।”4 सोलोमन ने साहसपूर्वक कहा:
‘सब कुछ सबके लिए एक समान होता है: धर्मी और दुष्ट दोनों के लिए एक ही घटना घटित होती है;
अच्छे और पवित्र, और अपवित्र: …जैसा अच्छा है, वैसा ही पापी है। 5. जाओ अपने मार्ग पर चलो, आनंद से रोटी खाओ और प्रसन्न मन से शराब पियो; … आनंदपूर्वक जीवन जियो।
पत्नी के साथ, क्योंकि उसमें न तो काम है, न युक्ति है, न ज्ञान है, न बुद्धि है।
कब्र, जहाँ तुम जा रहे हो 6. मरे हुए लोग कुछ नहीं जानते, न ही उनके पास कुछ बचा है
इनाम; क्योंकि उनकी स्मृति भुला दी गई है।

इसके अलावा हमने यह भी पढ़ा:
“जो कुछ मनुष्यों के साथ घटित होता है, वही पशुओं के साथ भी घटित होता है; दोनों के साथ एक ही बात घटित होती है: जैसे एक मरता है, वैसे ही दूसरा भी मरता है; हाँ, सब एक ही साँस लेते हैं; इसलिए मनुष्य किसी पशु से श्रेष्ठ नहीं है।” “सब एक स्थान पर जाते हैं; सब मिट्टी के हैं, और सब मिट्टी में मिल जाते हैं।”
1. किंग जेम्स बाइबिल: भजन संहिता 88, पद 10.
2. किंग जेम्स बाइबिल: भजन संहिता 6, पद 5.
3. किंग जेम्स बाइबिल: भजन संहिता 146, पद 4. 126
4. किंग जेम्स बाइबिल: भजन संहिता 115, पद 17.
5. किंग जेम्स बाइबिल: सभोपदेशक, अध्याय 9, पद 2.
6. किंग जेम्स बाइबिल: सभोपदेशक, अध्याय 9, पद 7, 9, 10.
7. किंग जेम्स बाइबिल: सभोपदेशक, अध्याय 9, पद 5.
“मनुष्य की आत्मा जो ऊपर की ओर जाती है और पशु की आत्मा जो पृथ्वी की ओर नीचे जाती है, उसे कौन जानता है?”
ऐसे कई कथन हैं जो हमारे मन में काफी भ्रम पैदा करते हैं। इनमें से कौन सा उत्तर सत्य है: क्या कब्र में प्रवेश करने के बाद भी हमारा जीवन जारी रहता है, या क्या हम कब्र में ही नष्ट हो जाते हैं?
इस पर पहले ही चर्चा हो चुकी है कि कई ईसाई मानते हैं कि यीशु मसीह ने अनन्त जीवन का प्रकाश फैलाया। बेशक, उन्होंने यहूदी जनजातियों के बीच अनन्त जीवन का प्रकाश फैलाया, जो मृत्यु के बाद जीवन में विश्वास नहीं करते थे, या इस सत्य में कि मृत्यु के बाद भी जीवन जारी रहता है। प्राचीन काल से लेकर बेबीलोन की कैद तक के यहूदी आत्मा के अस्तित्व में विश्वास नहीं करते थे, जो भौतिक शरीर से अलग रह सके। उनका मानना था कि जीवन की साँस यहोवा से आती है, और मृत्यु के समय वही जीवन की साँस यहोवा में वापस चली जाती है। जो पशुओं के साथ होता है, वही संतों और पापियों के साथ भी होता है। मैंने जिन अंशों का उद्धरण दिया है, वे उस समय की विश्वास की स्थिति, उस मानसिकता की स्थिति को संदर्भित करते हैं।
लेकिन ईसा पूर्व 586 से 536 तक चले बेबीलोन के बंदीकाल के दौरान, यहूदियों का संपर्क फारस के एक अत्यंत सभ्य राष्ट्र, पारसियों या ज़ोरोस्ट्रियन लोगों से हुआ, जो मृत्यु के बाद पुनरुत्थान में विश्वास करते थे। वे

स्वर्ग और नरक, स्वर्गदूतों और प्रधान स्वर्गदूतों और न्याय के अंतिम दिन में विश्वास रखते थे। ये सभी विचार प्राचीन काल के यहूदियों के लिए अज्ञात थे। लेकिन कुछ यहूदियों ने इस विश्वास को स्वीकार किया, जबकि अन्य ने इसे अस्वीकार कर दिया। पुनरुत्थान, स्वर्गदूतों और प्रधान स्वर्गदूतों में विश्वास रखने वाले यहूदियों में से, फरीसी कहलाए। 'फरीसी' शब्द स्वयं 'पारसी' शब्द का हिब्रू रूप है। फारस में रहने वाले फरीसी ज़ोरोस्ट्रियन धर्म के अनुयायी थे। लेकिन अन्य रूढ़िवादी यहूदी थे, जिन्होंने इन नए विचारों को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने इन विचारों को विधर्मी माना और वे सदूकी कहलाए। इसलिए सदूकी वे रूढ़िवादी यहूदी थे जो पुनरुत्थान में विश्वास नहीं करते थे।
नए नियम में भी हमें एक सदूकी का उल्लेख मिलता है जिसने आकर यह प्रश्न किया कि क्या पुनरुत्थान जैसी कोई चीज़ होती है। लेकिन प्राचीन पारसियों में पुनरुत्थान की जो अवधारणा पाई जाती है, वह ईसाइयों द्वारा स्वीकार की गई शरीर के पुनरुत्थान की अवधारणा से भिन्न है। प्राचीन पारसियों के पुनरुत्थान की अवधारणा में भौतिक शरीर का पुनरुत्थान निहित नहीं था।
वे आध्यात्मिक शरीर के पुनरुत्थान में विश्वास करते थे, जो स्थूल भौतिक शरीर के नष्ट होने के बाद भी जीवित रहता है। उनके अनुसार, तीसरे दिन के बाद शरीर को कब्र में रख दिया जाता है और चौथे दिन की सुबह सभी आत्माएं उठती हैं, और यही आध्यात्मिक पुनरुत्थान है।

1. किंग जेम्स बाइबल: सभोपदेशक, अध्याय 3, पद 19-21. 127 आत्माएँ। और जो धर्मी हैं वे स्वर्ग में जाएँगे, अच्छे विचारों, अच्छे शब्दों और अच्छे कर्मों के स्वर्ग में। जो धर्मी नहीं हैं वे भी उठेंगे, और वे बुरे विचारों, बुरे शब्दों और बुरे कर्मों के नरक में जाएँगे। वहाँ वे अंधकार में रहेंगे, अंतिम न्याय के दिन तक जब अच्छाई के सृष्टिकर्ता अहूरा मज़्दा, बुराई के सृष्टिकर्ता अहरिमन पर विजय प्राप्त करेंगे।
अहरिमन पहले अहूरा मज़्दा के प्रति मित्रवत था, लेकिन बाद में उसने अहूरा मज़्दा के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और स्वर्ग से निकाले जाने का बदला लेने के लिए पृथ्वी पर आया। यही अहरिमन ईसाई धर्म में शैतान बन गया। शैतान की अवधारणा हमें पारसी धर्मग्रंथों, ज़ेंड अवेस्ता में मिलती है। इसलिए यह अहरिमन इस संसार का स्वामी है, ठीक वैसे ही जैसे चौथे सुसमाचार में शैतान

को इस संसार का राजकुमार बताया गया है। वह सृष्टिकर्ता अहूरा मज़्दा के अच्छे कार्यों को नष्ट करने का प्रयास कर रहा है और उसने इस संसार में पाप और मृत्यु ला दी है। वह निरंतर अच्छे सृष्टिकर्ता अहूरा मज़्दा के कार्यों के विरुद्ध लड़ रहा है और अंततः उसकी शक्ति पर अच्छे सृष्टिकर्ता द्वारा विजय प्राप्त कर ली जाएगी, और तब प्रभु अहरिमन के प्रभाव या शक्ति से मुक्त एक नए संसार की रचना करेंगे। यही वह समय होगा जब न्याय का अंतिम दिन आएगा।
वे मसीहा में भी विश्वास करते थे। उनका मानना था कि वह मसीहा आकाश में, बादलों में प्रकट होगा। उसका नाम साओश्यांत है और वह धर्मात्माओं को स्वर्ग में प्रवेश करने और शाश्वत दिव्य सुखों का आनंद लेने में सहायता करेगा। लेकिन जो अज्ञानता के अंधकार में हैं, उनके पाप भी क्षमा कर दिए जाएंगे और उन्हें भी स्वर्ग में प्रवेश करने की अनुमति दी जाएगी। पारसियों में यही मूल मान्यता थी।
अब ईसाई और पारसियों की मान्यताओं की तुलना करने पर हम पाते हैं कि ईसाई मान्यताएं पुनरुत्थान, न्याय के अंतिम दिन और स्वर्ग में जाने की प्राचीन पारसी मान्यताओं से कितनी मिलती-जुलती हैं। ये सभी अवधारणाएं ईसा मसीह के समय से बहुत पहले फारस में मौजूद थीं और 586 से 536 ईसा पूर्व तक चले उस बंदी काल के दौरान फरीसियों ने इन्हें देखा और स्वीकार किया था। अतः पुनरुत्थान के बारे में उनकी अवधारणा पूरी तरह से ईसा मसीह के शरीर के पुनरुत्थान पर निर्भर नहीं थी। ये सभी ऐतिहासिक तथ्य हैं।
तो फिर हम यह कैसे मान सकते हैं कि ईसा मसीह ने शाश्वत जीवन की अवधारणा को उसके शाब्दिक अर्थ में प्रकाश में लाया, जबकि हम जानते हैं कि शाश्वत जीवन की अवधारणा न केवल पारसियों में, बल्कि मिस्रियों, कसदियों, बेबीलोनियों, चीनियों, हिंदुओं और रोमनों, यूनानियों और स्कैंडिनेवियाई जैसे सभी प्राचीन राष्ट्रों में भी मौजूद थी। उन सभी का शाश्वत जीवन में विश्वास था। ईसा पूर्व 12000 के आसपास ही हमें मिस्रियों के बीच इसके अभिलेख मिलते हैं। ईसा पूर्व 12000 से 8000 के बीच के मिस्री लेखकों ने दर्ज किया है कि प्राचीन मिस्रियों में स्थूल भौतिक शरीर के पुनरुत्थान में विश्वास था और वे यह भी मानते थे कि धर्मी की आत्मा स्वर्गलोक में जाएगी और सभी सुखों का आनंद लेगी।

128 उन क्षेत्रों में मिलने वाले सुखों के बारे में। उनका भौतिक रूप लगभग वैसा ही होता जैसा पृथ्वी पर हमारा होता है। स्थूल भौतिक शरीर के पुनरुत्थान का वह कच्चा विचार बाद में तब त्याग दिया गया जब उन्होंने प्रकृति की सूक्ष्म शक्तियों और सूक्ष्म बलों को समझा और यह अहसास किया कि प्रत्येक मानव शरीर का एक प्रतिरूप होता है जो पदार्थ के सूक्ष्म तत्वों से बना होता है। जब उनका उस प्रतिरूप में विश्वास मजबूत हो गया जिसका रूप स्थूल भौतिक शरीर के समान था, तो उन्होंने स्थूल भौतिक शरीर के पुनरुत्थान का विचार छोड़ दिया। प्राचीन मिस्रियों में पाँचवीं राजवंश के दौरान, यानी ईसा से लगभग 3400 वर्ष पूर्व, रहने वाले लेखकों ने स्पष्ट रूप से कहा, 'स्वर्ग में तेरी आत्मा है और पृथ्वी में तेरा शरीर है।' आत्मा स्वर्ग की है और शरीर पृथ्वी का है।
उस दिन से शरीर को संरक्षित करने का विचार उत्पन्न हुआ, क्योंकि उनका एक और विश्वास था कि यह प्रतिरूप, जो आकार और रूप में स्थूल भौतिक शरीर के समान है, तब तक अक्षुण्ण रहता है जब तक कि स्थूल भौतिक शरीर अक्षुण्ण रहता है। इसी विचार से भौतिक शरीर को ममी बनाने की प्रथा का जन्म हुआ। यही उस प्रथा और इस विश्वास का आधार था कि यदि भौतिक शरीर का कोई हाथ या अंग क्षतिग्रस्त हो जाता है, तो प्रतिरूप का वह विशेष अंग भी क्षतिग्रस्त हो जाएगा। इसी कारण वे ममी बनाने की उस विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा पूरे शरीर को अक्षुण्ण रखने का प्रयास करते थे।
उनका यह भी मानना था कि धर्मात्माओं की आत्माएं स्वर्ग में जाएंगी, देवताओं के साथ रहेंगी और उनके साथ खाएं-पिएंगी। उनका भौतिक शरीर, यद्यपि सूक्ष्म कणों से बना होता है, जैसे सूक्ष्म शरीर, फिर भी भौतिक होता है और उसे भोजन और पेय की आवश्यकता होती है। इसी कारण, दिवंगत आत्माओं के कुछ मित्र और रिश्तेदार कब्र में भोजन और पेय रखते थे। यह प्रथा कुछ समय तक जारी रही। कुछ तो कब्रों में ताबीज और मंत्र भी रखते थे, क्योंकि उनका मानना था कि दिवंगत मित्रों और रिश्तेदारों को बुरी शक्तियों से बचाव के लिए इन मंत्रों की आवश्यकता होती है। यह भी लिखा है कि धर्मात्माओं की ये आत्माएं स्वर्ग में जाएंगी और शांति के मैदानों में विचरण करेंगी, सफेद लिनेन और सफेद सैंडल के दिव्य वस्त्र धारण करेंगी। वहां नहरें हैं जहां वे आनंद में स्नान करती हैं। इस पृथ्वी पर हमें जो परम सुख प्राप्त होता है, वही मिस्र के स्वर्ग में भी विद्यमान है।

फिर जब हम बेबीलोनियों और कसदियों के लेख पढ़ते हैं, तो पाते हैं कि कसदियों का भी शव के पुनरुत्थान में विश्वास था और इसी कारण वे शव को संरक्षित करने के लिए उसे भूमिगत कब्र में दफनाते थे। यह प्रथा ईसाइयों तक भी पहुंची है, जो प्राचीन कसदियों और बेबीलोनियों की तरह ही मृतकों को दफनाते हैं। इससे पता चलता है कि कसदियों और बेबीलोनियों में शाश्वत जीवन में विश्वास था। और जो विचार हमारे पास हैं

आज जो 129 शब्द हमें मिले हैं, वे हमें ईसा मसीह के समय से नहीं मिले हैं, बल्कि वे महान ईश्वर के आगमन से सदियों पहले से मौजूद थे।
यदि हम यूनानी और रोमन इतिहास पढ़ें, तो हमें पता चलता है कि यूनानियों का एलिसियन फील्ड्स में विश्वास था कि धर्मी लोगों की आत्माएं एलिसियन फील्ड्स में जाएंगी और वहां पृथ्वी पर अपने जीवन के कार्यों को संपन्न करेंगी। वे अपने मित्रों से मिलेंगी, पति अपनी पत्नी से मिलेंगे, माता- पिता अपने बच्चों से मिलेंगे और वे वहां रहकर जीवन के सभी सुखों का आनंद लेंगे।
स्कैंडिनेवियाई लोगों का वलहल्ला में विश्वास था। वे योद्धा और योद्धा थे, और वे ओडिन की उपस्थिति में स्वर्ग में अपना युद्ध लड़ते थे। वहाँ युद्ध के मैदान में घायल हुए वीर सैनिक अपने शत्रुओं से लड़ने जाते थे और घायल हो जाते थे; लेकिन ओडिन की चमत्कारी शक्तियों से उनके घाव भर जाते थे, और वे फिर से हथियार उठाकर युद्ध करते थे। युद्ध के मैदान में लड़ने के बाद, वे एक जंगली सूअर का शिकार करते, उसे मारते, भूनते और एक भव्य भोज का आयोजन करते। और यह प्रक्रिया अनंत काल तक प्रतिदिन चलती रहेगी। ध्यान रहे कि अनंत काल का अर्थ हज़ार वर्ष, दस हज़ार वर्ष, दस लाख वर्ष या खरबों वर्ष नहीं है, बल्कि इसका अर्थ है अनंत काल।
लेकिन अमेरिकी मूलनिवासियों जैसे अन्य विश्वासी भी हैं। उनके लिए स्वर्ग में सुखद शिकारगाह हैं। फिर मुसलमानों में स्वर्ग की एक अलग अवधारणा पाई जाती है। उनका कहना है कि अल्लाह के आदेशों का पालन करने वाले धर्मी लोगों की आत्माएं उनके मुस्लिम स्वर्ग में जाती हैं, जहां भरपूर छाया है, शुद्ध जल की नदियां बहती हैं, दूध, शराब और शहद की नदियां बहती हैं। वहां हुर्रे (युवतियां) हैं जो नेक लोगों के प्यालों में शराब डालती हैं, और नेक लोग उन युवतियों की संगति का आनंद लेते हुए शराब पीते हैं। वहां वृक्ष हैं, जिनके

नीचे वे विश्राम करते हैं और उन वृक्षों के स्वादिष्ट फलों का स्वाद लेते हैं। आप जानते हैं कि अरब लोग रेगिस्तान में रहते थे, जहां पानी और छाया की बहुत आवश्यकता थी। अरब लोगों को पानी की आवश्यकता थी, और उन्होंने भरपूर छाया, स्वादिष्ट फलों और इस धरती पर कल्पना की जा सकने वाली सभी सुख-सुविधाओं से युक्त स्वर्ग की कल्पना की और एक ऐसा स्वर्ग बनाया जिसमें ये सभी मनभावन चीजें समाहित थीं। यह एक ऐसा स्वर्ग है जो नम, गीला और पानी से भरा हुआ है। लेकिन मैं ऐसे देश से आता हूँ जहाँ वार्षिक वर्षा पाँच सौ चालीस इंच होती है। मैं ऐसे गीले स्वर्ग में जाना पसंद नहीं करूँगा। अतः, इन वर्णनों से हम सीखते हैं कि प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक जनजाति स्वर्ग के अपने सर्वोच्च आदर्शों को प्रस्तुत करते हैं और एक स्वप्नलोक जैसा स्वर्ग बनाते हैं, और स्वर्ग की अवधारणा वह स्थान है जहाँ हम बिना किसी अवरोध, दुःख या वियोग के सभी सुखों का आनंद ले सकते हैं।

130 का अर्थ है कि प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक जनजाति की आत्माएं अनंत काल तक इन सुखों का आनंद लेती रहेंगी। यही उनका विश्वास है।
कुछ लोगों का मानना है कि स्वर्ग में उनका काम गायन और वीणा वादन होगा। वे शाश्वत संगीत गाएंगे और संगीत सुनेंगे। एक भजन में, जो कभी रूढ़िवादी चर्चों में गाया जाता था, स्वर्ग के सुखों का वर्णन करते हुए एक पंक्ति है: "जहाँ सभाएँ कभी विलीन नहीं होतीं और सब्त कभी समाप्त नहीं होते।" निःसंदेह, ऐसा स्वर्ग उन लोगों के लिए विद्यमान होगा जो इस आदर्श में विश्वास करते हैं। एक ऐसा स्थान या लोक होगा जहाँ वे आत्माएँ जो प्रभु में विश्वास रखती हैं और एक ही आस्था रखती हैं, एकत्रित होंगी और अपने उद्धारकर्ता की स्तुति गाएँगी, और उद्धारकर्ता यीशु मसीह, बुद्ध, कोई पैगंबर या कोई अन्य उद्धारकर्ता हो सकता है, जैसा कि हिंदुओं में है। वे अपने आदर्श के चारों ओर एकत्रित होंगे, जैसे उपग्रह किसी ग्रह के चारों ओर घूमते हैं। इस प्रकार ये निष्ठावान विश्वासी अपने विश्वास द्वारा अपने आदर्श के केंद्र, यानी उद्धारकर्ता से जुड़े रहेंगे, और वह मसीह, बुद्ध या ईश्वर का कोई अन्य अवतार हो सकता है। तो वही स्वर्ग होगा, वह आदर्श स्थान जहाँ महान धर्मात्मा संत जाएँगे।
लेकिन ये मान्यताएँ जो हमें पीढ़ी दर पीढ़ी मिली हैं, हमें आश्वस्त नहीं करतीं और न ही हमें यह विश्वास दिलाती हैं कि मृत्यु के बाद हम स्वर्ग

जाएँगे या शाश्वत नरक में। हम इसके बारे में और अधिक जानना चाहते हैं, और अधिक प्रमाण चाहते हैं। आध्यात्मिक सत्र आपको बताएगा कि आत्माएँ, मृत्यु के बाद, विभिन्न अवस्थाओं में प्रवेश करती हैं और देवदूत बन जाती हैं। ऐसा माना जाता है कि देवदूत सब कुछ जानते हैं और वे मानवता, उनके मित्रों और रिश्तेदारों की सहायता कर सकते हैं। लेकिन सवाल यह है कि क्या वे किसी भी तरह से हमारी सहायता कर सकते हैं। बहुत से लोग मानते हैं कि वे कर सकते हैं, जबकि अन्य इसे नकारते हैं। लेकिन वे मृत्यु के बाद आत्माओं के अस्तित्व से इनकार नहीं करते। वे निराकार आत्माओं के अस्तित्व में विश्वास करते हैं, लेकिन क्या वे संवाद के माध्यम से किसी भी तरह से हमारी सहायता कर सकते हैं, यह एक अलग मुद्दा है, और इस मुद्दे को समझना आवश्यक है।
लेकिन वे दिवंगत आत्माएँ कौन हैं जो हमसे संवाद करती हैं और हमारी सहायता कर सकती हैं? आम धारणा यह है कि मनुष्य ने इस पृथ्वी पर चाहे जैसे भी जीवन व्यतीत किया हो, मृत्यु के द्वार से प्रवेश करते ही वह एक सक्रिय लोक में प्रवेश कर जाता है, जहाँ वह सब कुछ के प्रति सचेत हो जाता है, सभी नियमों को जान लेता है और परिपूर्ण हो जाता है; और वे विभिन्न तरीकों से संदेश देकर मानव जाति की सहायता करने की शक्ति रखते हैं। लेकिन इस प्रकार के आदर्श में विश्वास करने वाले लोग यह नहीं समझते कि मृत्यु के बाद का हमारा जीवन इसी जीवन की निरंतरता होगा। मृत्यु इस जीवन की शत्रु नहीं है, जैसा कि रूढ़िवादी ईसाई धर्म में आम तौर पर समझा जाता है। रूढ़िवादी ईसाई धर्म ने मृत्यु को जीवन का भयंकर शत्रु बना दिया है, और उनका मानना है कि मृत्यु के लोक में प्रवेश करते ही उसका जीवन बंध जाता है और वह या तो सभी सुखों का आनंद लेने के लिए या शाश्वत विनाश में जाने और सदा के लिए कष्ट भोगने के लिए अभिशप्त हो जाता है। इसलिए मृत्यु जीवन की ऐसी शत्रु नहीं है, बल्कि केवल एक अवस्था है।
131
अब हम आसानी से समझ सकते हैं कि मरणासन्न व्यक्ति की स्थिति का अध्ययन करने पर यह एक ऐसा चरण या मार्ग है जिससे होकर हम कहीं और जा सकते हैं। अब, मरणासन्न व्यक्ति के साथ क्या होता है? हम पाते हैं कि उसका शरीर और इंद्रियाँ कमजोर हो रही हैं। संवेदनाएँ मंद पड़ रही हैं। भौतिक शरीर गतिहीन हो जाता है। लेकिन उसकी मानसिक शक्तियाँ तीव्र और प्रबल होती जा

रही हैं। उनमें से कुछ में शायद दूरदृष्टि और श्रवण शक्ति विकसित हो जाती है। वे दूर की चीजों को देख पाते हैं। वे दूर से आने वाली आवाज़ें सुन पाते हैं। उनकी तीव्र मानसिक इंद्रियाँ विकसित हो जाती हैं, और वे सभी शक्तियाँ जो अब हमारे अवचेतन स्तर में सुप्त हैं, चेतन स्तर पर जागृत हो जाती हैं। स्मृति तब और भी प्रबल हो जाती है। ऐसे मामले भी सामने आए हैं जहाँ मरणासन्न व्यक्ति प्रेत के रूप में दूर चले गए और एक संदेश दिया, जिसमें उन्होंने रिश्तेदारों से अपने अनाथ बच्चों की देखभाल करने या उन कार्यों को पूरा करने के लिए कहा जो उन्होंने अधूरे छोड़ दिए थे। ऐसे मामले दर्ज किए गए हैं। यूरोप में, कुछ ही वर्ष पहले तक, समय और घंटे के सभी विवरणों के साथ उचित सत्यापन सहित ये आँकड़े रखे जाते थे। आपको यह जानकारी साइकिकल रिसर्च सोसाइटी के अभिलेखों और इतिहासों में भी मिलेगी, जिन्होंने इस प्रकार के अभिलेख रखे हैं।
अब ये अभिलेख क्या सिद्ध करते हैं? ये अभिलेख सिद्ध करते हैं कि हमारे भीतर एक ऐसी शक्ति है जो शायद वर्तमान में सुप्त अवस्था में है, लेकिन मृत्यु के समय वह शक्ति प्रबल और तीव्र हो जाती है। पहले भी इस पर चर्चा हो चुकी है कि मृत्यु की अवस्था में व्यक्ति अपने उन मित्रों और रिश्तेदारों से संवाद कर सकते हैं जो उनकी मृत्यु से बहुत पहले ही इस दुनिया से चले गए हैं और परलोक में रह रहे हैं। वे न केवल उनसे संवाद कर सकते हैं, बल्कि इस पृथ्वी पर मौजूद लोगों से भी संवाद कर सकते हैं।
मृत्यु के बाद वे एक अवस्था से गुजरते हैं; अर्थात्, आत्माएँ जागृत अवस्था में बिखरी हुई अपनी शक्तियों को संकुचित कर लेती हैं, ठीक वैसे ही जैसे हम सोते समय करते हैं। हमारा केंद्रीय जीवन, बुद्धि का स्रोत, एक बिंदु पर केंद्रित होकर, शरीर में बिखरी हुई सभी शक्तियों, इंद्रिय शक्तियों को समेट लेता है, और ये सभी शक्तियाँ उस केंद्र में केंद्रित हो जाती हैं, जो एक नाभिक के समान है। यह नाभिक नींद के समय उन शक्तियों को धारण करता है, और मृत्यु के समय भी यही होता है। यह हमारी सामान्य नींद से अधिक गहरी नींद होती है। मृत्यु के समय आत्मा संकुचित होकर उस केंद्रीय नाभिक में केंद्रित हो जाती है जहाँ इंद्रिय शक्तियाँ, विचार शक्तियाँ, तर्क शक्तियाँ, स्मृति और अन्य सभी शक्तियाँ उस जीवन शक्ति द्वारा एक साथ बंधी होती हैं जो व्यक्तिगत आत्मा का अंतर्निहित गुण है। यहाँ उस व्यक्तिगत आत्मा से मेरा तात्पर्य विचारक से है, जो सोचता है, जो महसूस करता है, जो

अनुभव करता है और जो जानता है। फिर वह व्यक्तिगत आत्मा अपनी शक्तियों को समेट लेती है, ठीक वैसे ही जैसे आपने शायद कछुए के मामले में देखा होगा। अब जब एक कछुआ डर जाता है, तो वह क्या करता है? यह अपने अंगों को खोल के अंदर समेट लेता है।
1. दिवंगत आत्माएं उन आत्माओं से संवाद कर सकती हैं जो पहले ही गुजर चुकी हैं और जो गुजर चुकी हैं।
इस अद्भुत दुनिया में रहना।
2. इस केंद्रक को प्राण या मुख्य-प्राण (जीवन शक्ति) कहा जाता है। “जब प्राण शरीर से बाहर निकलता है
यह अपने साथ उन सभी इंद्रियों को भी ले जाता है, जो इस पर निर्भर हैं। मरणासन्न व्यक्ति अपने साथ ले जाता है।
देखने, सुनने, सूंघने, चखने, छूने, पकड़ने, हिलाने, बोलने, मल त्यागने की शक्तियाँ
सोचने की शक्ति और आत्मचेतना। सभी जीवन शक्तियाँ और 132
प्राण के शरीर से बाहर निकलने पर अंगों की अवचेतन गतिविधियाँ भी समाप्त हो जाती हैं।” - स्वामी
अभेदानंद ने अपनी पुस्तक 'आत्मज्ञान' में इसका उल्लेख किया है। साथ ही कौशितकी उपनिषद अध्याय 3, श्लोक 4 में भी इसका उल्लेख है। (फुटनोट)
1 और 2 लेखक - स्वामी प्रजनानंद, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।)
भगवद् गीता (2-58) में भी यही उदाहरण दिया गया है:
‘आत्मा अपने अंगों को अपने खोल के भीतर समेट लेती है, ठीक वैसे ही जैसे एक कछुआ भयभीत होने पर अपने अंगों को अपने खोल के भीतर समेट लेता है।’
आप कल्पना कर सकते हैं कि यह प्रक्रिया मृत्यु से ठीक पहले घटित होती है और उस समय उस सत्ता या विचारक का एक सूक्ष्म रूप होता है, जिसे संस्कृत में सूक्ष्म-शरीर कहा जाता है। इसे आध्यात्मिक शरीर या सूक्ष्म शरीर कहा जा सकता है, और मृत्यु के समय यह आध्यात्मिक या सूक्ष्म शरीर धुंध की तरह भौतिक शरीर से बाहर निकल जाता है। यह एक अदृश्य धुंध होती है। कुछ मनोवैज्ञानिकों में इस धुंध को देखने की क्षमता होती है, और उन्होंने संवेदनशील फोटोग्राफिक प्लेटों की सहायता से इस धुंध की तस्वीरें ली हैं, हालांकि यह मानव आंखों से अदृश्य होती है। वैज्ञानिक प्रयोगों से यह भी सिद्ध हुआ है कि यदि मृत शरीर को एक अत्यंत संवेदनशील तराजू पर रखकर

मृत्यु से ठीक पहले और मृत्यु के तुरंत बाद तोला जाए, तो वजन में निर्णायक अंतर पाया जाएगा। शरीर का वजन लगभग आधा या तीन चौथाई औंस कम हो जाता है। यह तीन चौथाई औंस उस धुंध का वजन है जो शरीर से बाहर निकलती है, और जिसकी तस्वीर ली गई है। ऐसे कई मामले दर्ज किए गए हैं। मैंने पहले भी एक ऐसी युवती का जिक्र किया है जो अपने मरते हुए भाई के बगल में खड़ी थी और उसने कहा: 'माँ, माँ, शरीर के चारों ओर छाई धुंध को देखो।' लेकिन माँ को शरीर के चारों ओर छाई धुंध दिखाई नहीं दे रही थी।
यह धुंध आत्मा का केवल भीतरी आवरण है। यह आत्मा नहीं है। आत्मा केंद्र या नाभिक है, और धुंध उसका सूक्ष्म आवरण है। यह सूक्ष्म शरीर है और वह सूक्ष्म शरीर मृत्यु के बाद भी बना रहता है। मृत्यु के बाद वह कहाँ जाता है? फिर वह शरीर के चारों ओर लंबे समय तक मंडराता रहता है। यदि शरीर को कब्र में रखा जाता है, तो उस भौतिक शरीर का आकर्षण, जिसे उसने इतने वर्षों तक इतने प्रेम से पाला-पोसा और जिसकी उसने इतनी देखभाल की, आत्मा को आकर्षित करता है, या यूँ कहें कि आत्मा उस शरीर से बंधी रहती है।
इसीलिए हिंदू मान्यता है कि शरीर का नाश करना बेहतर है। स्थूल शरीर के नाश से आत्मा भौतिक शरीर से अपने आसक्ति से मुक्त हो जाती है। लेकिन, यदि शरीर को कब्र में रखा जाता है, तो आत्मा शरीर को देखने की इच्छा रखती है और मृत्यु के काफी समय बाद भी, यह जानने की इच्छा और जिज्ञासा बनी रहती है कि कब्र में क्या हो रहा है। यह एक बहुत ही अवांछनीय स्थिति है और आत्मा को दुखी करती है। अपने सुंदर शरीर को सड़ते और विघटित होते देखना दिवंगत आत्मा के लिए पीड़ादायक होता है। यह बहुत ही अवांछनीय है कि आत्माओं को परलोक में भी कष्ट सहना पड़े। इसीलिए दाह संस्कार को शरीर के अंतिम संस्कार का सर्वोत्तम तरीका माना गया है। हिंदू कहते हैं कि शरीर जितनी जल्दी नष्ट हो जाता है, आत्मा उतनी ही जल्दी उसके अस्तित्व को भूल जाती है, जो आत्मा के लिए बेहतर है कि वह पीछे छूटे मृत शरीर के अस्तित्व को भूल जाए।

133
तो फिर आत्मा का क्या होता है? आत्मा सूक्ष्म शरीर के कोमल वस्त्र में लिपटी रहती है और उस सीमा क्षेत्र में प्रवेश करती है जहाँ यह पृथ्वी समाप्त होती है और नया आध्यात्मिक जगत प्रारंभ होता है। इसे ही सीमा

क्षेत्र कहते हैं। लेकिन वास्तव में यह कोई भूमि नहीं है और क्षितिज जैसी कोई विभाजक रेखा बाहरी अंतरिक्ष में नहीं है। यह कंपन की एक भिन्न अवस्था है। यह एक अन्य आयाम है। अभी हम तीसरे आयाम में जी रहे हैं जहाँ हमें लंबाई, चौड़ाई और ऊँचाई का ज्ञान है। लेकिन मृत्यु के बाद हम इन सब बातों को नहीं जान पाते। वह चौथा आयाम है। उस चौथे आयाम में समय और स्थान जैसे विभाजन नहीं होते, फिर भी वह उसी स्थान को घेरे रहता है। कल्पना कीजिए कि पृथ्वी एक खोखली आकृति है, केवल एक रूपरेखा की तरह, और उसमें कोई ठोस पदार्थ नहीं है। वहाँ आत्माएँ विद्यमान होती हैं, और वे उस चौथे आयाम के तल से हमारे तीसरे आयाम में आती हैं, और हम उन्हें देख और महसूस कर सकते हैं। हमारी आत्मा का पृथ्वी पर आना समुद्र की गहराई में उतरने जैसा है। लेकिन जब आप वहाँ पहुँचेंगे, तो आपको क्या करना होगा? आपको गोताखोर का सूट पहनना होगा, जिसका वज़न टनों में होता है। अगर आप इसे नहीं पहनेंगे, तो आप नीचे नहीं जा सकते। अगर आपका शरीर सूक्ष्म है, तो आप इस लोक में आकर नहीं रह सकते। आप एक ऐसे दूसरे लोक में चले जाएँगे जहाँ का कंपन आपके भौतिक स्वरूप के साथ सामंजस्य स्थापित करेगा। इसीलिए हम कहते हैं कि सीमावर्ती क्षेत्र किसी स्थान या गलियारे जैसा नहीं है जो इस कमरे से दीवार के पीछे वाले दूसरे कमरे तक जाता हो। कहा जाता है कि यह एक अलग प्रकार का कंपन है।
वही कंपन निरंतर जारी रह सकता है, लेकिन हमारे पास उस कंपन को महसूस करने की शक्ति नहीं है। यदि हमारे पास सूक्ष्म इंद्रियां हों, तो हम उन्हें देख और उनके अस्तित्व को जान पाएंगे। उदाहरण के लिए, संगीत हो सकता है, कोई संगीत कार्यक्रम हो सकता है, और उसमें अलग-अलग स्वर हों जो ध्वनि के विभिन्न कंपनों या वायु के कंपनों को अलग-अलग सुरों में दर्शाते हों। अब ये सभी मिलकर एक सुंदर सामंजस्य बना सकते हैं, लेकिन यदि आप प्रत्येक ध्वनि या स्वर को अलग-अलग सुरों में स्पष्ट रूप से सुनना चाहते हैं, तो आपको उसके प्रति सचेत रहना होगा। कल्पना कीजिए कि इस अंतरिक्ष में वायरलेस संदेश चल रहे हैं, लेकिन एक दूसरे में हस्तक्षेप नहीं करता, क्योंकि प्रत्येक का कंपन अलग है। इसी प्रकार, शरीर से निकलने वाली प्रत्येक आत्मा अपने साथ अपने कंपन ले जाती है, जो आत्मा के विचार और कल्पनाएं ही हैं। आत्मा के विचार और कल्पनाएं कंपन ही हैं, और वह केंद्र है, जो इन सभी कंपनों को निरंतर विकीर्ण करता है। वह इन्हें अपने साथ ले जाता है, और इसलिए वह किसी अन्य कंपन केंद्र में हस्तक्षेप नहीं करता। वह

उन्हें अपने लोक में ले जाता है और वहाँ कुछ समय तक रहता है, जब तक कि वह एक ऐसी अवस्था में न चला जाए जो एक प्रकार की नींद है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि इस पृथ्वी पर जीवन व्यतीत करते हुए सभी शारीरिक श्रम करने के बाद आत्मा इतनी थक जाती है कि उसे विश्राम करना अच्छा लगता है और वह उस विश्रामपूर्ण नींद में लीन हो जाती है। जब आत्मा उस नींद में प्रवेश करती है तो उसे कोई भी विचलित नहीं कर सकता। यहाँ तक कि ईश्वर भी सोई हुई आत्मा को विचलित नहीं कर सकता। लेकिन जो लोग चिंता, दुःख और पीड़ा में मृत्यु को प्राप्त हुए हैं, उनकी नींद अशांत होगी। वे
134 पूर्ण विश्राम में चले जाते हैं। परन्तु आसक्ति के कारण वे स्वप्न में अपने सांसारिक मित्रों और रिश्तेदारों को रोते-बिलखते और शोक करते देखते हैं। वे मानो नींद में किसी मंदबुद्धि व्यक्ति की तरह चलते हैं, अर्ध-नींद और उन्मत्त अवस्था में। यही कारण है कि séances में उनकी कई अभिव्यक्तियाँ स्वप्निल, अर्ध-नींद में और मूर्खतापूर्ण होती हैं। वे अपने मित्रों के आह्वान से विवश हो जाते हैं, और स्वप्न अवस्था में आकर उनकी सहायता करने का प्रयास करते हैं, परन्तु उन्हें पता नहीं होता कि वे क्या कर रहे हैं।
कुछ आत्माएँ ऐसी होती हैं जिन्हें यह पता ही नहीं होता कि वे मर चुकी हैं। वे भ्रम की स्थिति में होती हैं। उन्हें अपनी मृत्यु का अहसास होने में कुछ समय लगता है। वे कुछ समय तक पृथ्वी से जुड़ी रहती हैं, यानी यदि उनका अपने मित्रों और रिश्तेदारों से गहरा लगाव होता है, जिन्हें वे पृथ्वी पर बहुत प्यार करती थीं, तो वे उनके आसपास मंडराती रहती हैं। लेकिन जब उनके मित्र और रिश्तेदार उनकी उपस्थिति को नहीं पहचानते और उनके साथ उचित व्यवहार नहीं करते, तो उन्हें बहुत दुख और पीड़ा होती है। इसलिए प्रत्येक आत्मा अपने विचारों और कर्मों के अनुसार अपना वातावरण और परिस्थितियाँ स्वयं बनाती है।
इसलिए हम समझते हैं कि सबके लिए एक ही नियम नहीं है। जैसे दो व्यक्ति एक समान नहीं होते, वैसे ही मृत्यु के बाद दो आत्माएँ एक ही कंपन अवस्था में नहीं होंगी। उस सीमावर्ती क्षेत्र में प्रवेश करने के बाद, आत्माएँ उस नींद में चली जाती हैं और अनिश्चित काल तक वहीं रहती हैं। कुछ आत्माएँ उस नींद में अधिक समय तक रहती हैं और कुछ का समय कम। जो आत्माएँ अनैतिक और पशुवत इच्छाओं से दृढ़ता से जुड़ी होती हैं, वे लंबी नींद नहीं सो पातीं,

क्योंकि वे उस अवस्था में उत्पन्न होने वाली अपनी इच्छाओं से जाग जाती हैं। कुछ आत्माएँ पृथ्वी से बंधी रहती हैं, और वे उस अवस्था में रहकर अपनी सांसारिक इच्छाओं को पूरा करती हैं, और शायद कुछ माध्यमों का सहारा लेती हैं जिनके द्वारा वे शराब पीने और अनैतिकता की अपनी इच्छाओं को पूरा कर सकें, और यही कारण है कि बहुत से माध्यम शराबी और अनैतिक निकले हैं।
यह माध्यमों की गलती नहीं है, बल्कि उस आत्मा की गलती है जो माध्यम की इंद्रियों के माध्यम से अपनी अनैतिक प्रवृत्तियों और इच्छाओं को पूरा करने का प्रयास कर रही है। और इसीलिए, इन आत्माओं को हमारे शरीर और अंगों पर कब्ज़ा करने देना बहुत खतरनाक है। इस बारे में एक नियम है और उस नियम को स्पष्ट रूप से समझना चाहिए। हमने यह शरीर अपने पिछले कर्मों और विचारों के फलस्वरूप ग्रहण किया है; हमने इस शरीर का निर्माण स्वयं के लिए, किसी और के लिए नहीं, बल्कि उच्चतर उत्थान और अधिक अनुभव प्राप्त करने के लिए किया है।
मान लीजिए कि हम अन्य आत्माओं को अपने माध्यम से प्रकट होने देते हैं, लेकिन इससे हमें क्या लाभ होता है? वास्तव में, इससे हमें कुछ भी लाभ नहीं होता। हमने अपना अवसर खो दिया है, और यही हमारा नुकसान है। हम कह सकते हैं कि हम मानवता की मदद कर रहे हैं, लेकिन हम ऐसा नहीं कर रहे हैं। हमें सम्मोहन की अवस्था में डाल दिया गया है और हम अचेत हैं। हमारे अंगों का उपयोग किसी और ने, या किसी अन्य शक्ति ने किया है, और यह अन्य शक्ति हमारे माध्यम से अनुभव प्राप्त कर रही है और हम
135 यह हमें उस आत्मा की भलाई के लिए अपने स्वयं के अवसर से वंचित कर रहा है जो हमारे माध्यम से प्रकट हो रही है। इस बात को उन बहुत से लोगों ने अनदेखा कर दिया है जो आत्माओं के प्रकट होने और दिवंगत आत्माओं से संवाद करने में रुचि रखते हैं।
हिंदू वे लोग हैं जिन्होंने अनादिकाल से आध्यात्मिक पक्ष का अध्ययन किया है, उसका ज्ञान संकलित किया है और पीढ़ियों से हमें विरासत में मिला है। विश्व में कोई अन्य राष्ट्र ऐसा नहीं है जिसके पास इन विषयों में भारत जितना परिपूर्ण ज्ञान हो। इसी कारण आप देखेंगे कि हम अपने मित्रों को समाधि या माध्यम बनने की अनुमति नहीं देते, क्योंकि इसमें बड़ा खतरा है। एक बार आप अपनी मानसिक शक्ति का द्वार खोल देते हैं, तो उसे आसानी से बंद नहीं कर सकते। कुछ आत्माएं कपटी होती हैं और किसी और का रूप धारण करके

लोगों को मूर्ख बना सकती हैं। ऐसे मामले दर्ज किए गए हैं। कोई व्यक्ति महान आत्मा के रूप में प्रकट होगा, लेकिन वास्तव में वह महान नहीं होगा। आप उन्हें कैसे पहचानेंगे? निश्चित रूप से, उनके उन ज्ञानवर्धक उपदेशों से नहीं जो वे किसी के अवचेतन मन से प्राप्त कर सकते हैं। यह भेद करना आवश्यक है और हमें उच्च और निम्न आत्माओं के बीच अंतर को समझना चाहिए, और यह भी कि जब भी हम उन्हें किसी संदेश के लिए हमारे पास आने देते हैं, तो हम उन्हें पृथ्वी पर खींच लाते हैं। यह उनके लिए लाभकारी नहीं है। इसी कारण हिंदू मानते हैं कि इन आत्माओं को अकेला छोड़ देना हर तरह से बेहतर है, और यदि वे सो गई हैं, तो उन्हें वहीं विश्राम करने दें और उनके लिए अच्छे विचार भेजें, क्योंकि केवल अच्छे विचार ही उनके लिए उपयोगी और लाभदायक होंगे। हिंदुओं में अंत्येष्टि संस्कार ईसाइयों से भिन्न होते हैं। यह अंतर इस प्रकार है कि दिवंगत आत्माओं के लिए की जाने वाली सेवाएँ, अच्छे कर्म और दान-पुण्य उनके नाम पर इस विचार के साथ किए जाते हैं कि इन कार्यों का फल उन्हें प्राप्त होगा और वे इस धरती के बंधन से मुक्त हो जाएँगे। हम आत्माओं की सहायता उनसे कहीं अधिक कर सकते हैं, क्योंकि वे हमारे विचार जगत के निकट हैं। यदि हम उन्हें कोई अच्छा विचार भेजते हैं, तो हम उनकी सहायता कर रहे हैं, क्योंकि विचार मन की उपज है और दिवंगत आत्माएँ मानसिक जगत में निवास करती हैं, इसलिए विचार उन तक आसानी से पहुँच सकते हैं। अतः, यदि हम उनके नाम पर कोई अच्छा कार्य करते हैं और अपने मन को इस विचार से एकाग्र करते हैं कि इस अच्छे कार्य का फल उन्हें उनके आगे के मार्ग में सहायता करेगा, तो हम उनका भला कर रहे हैं।
वे कभी-कभी हमें कुछ खास संदेश दे सकते हैं। उनमें से कुछ उन्नत ज्ञानी, जिन्होंने कारण और प्रभाव के नियम को समझ लिया है और कारणों से अवगत हैं, परिणामों का पता लगा सकते हैं। उदाहरण के लिए, आपके मन में एक विचार है और यह भविष्य में आने वाले परिणाम का बीज है जो निश्चित रूप से आपको प्राप्त होगा। यदि कोई उस विचार को, जो अभी आपके मन में बीज रूप में है, पढ़ ले, तो वह बता सकता है कि भविष्य में क्या होगा। मनोमितिविद ऐसा कर सकते हैं, उस विचार को गूढ़ बनाकर और एक फूल के खिलने की तरह प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं। यह सब वहीं मौजूद है।
1. परिशिष्ट 136 में नोट 1 देखें। यह मन की एक कंपनशील अवस्था है। इस कंपनशील अवस्था को वे लोग अनुभव कर सकते हैं जो मानसिक स्तरों में उन्नत

हैं और मानसिक शक्तियों का विकास करते हैं। इसलिए हम सबके लिए एक ही नियम नहीं बना सकते।
कुछ आत्माएँ उस नींद में लंबे समय तक सोती रहेंगी, और जो आत्माएँ आध्यात्मिक रूप से उन्नत और उच्च स्तर पर विकसित हैं, वे इन सूक्ष्म रूपों को त्याग देंगी जो आत्मा के आवरण (कोश) के समान हैं। ये सीमाएँ हैं। ये पशुवत इच्छाएँ और प्रवृत्तियाँ, ईर्ष्या और भौतिक वस्तुओं के प्रति प्रेम भी हैं। ये सभी आत्मा की सीमाएँ हैं। आत्मा, कुछ समय तक सोने के बाद, अपनी सीमाओं को महसूस करते हुए, इन्हें त्याग देती है। इन त्यागे गए आवरणों को कभी-कभी सूक्ष्म आवरण कहा जाता है, और ये सूक्ष्म आवरण हवा में तैरते रहते हैं। इनमें आत्मा नहीं होती। ये विचार रूपों के समान हैं, और ये विचार रूप किसी माध्यम या किसी व्यक्ति के विचार से पुनर्जीवित हो सकते हैं। इसलिए आपको कुछ भूत या तत्व दिखाई दे सकते हैं। वे सभी इन्हीं के समान हैं। निम्न पशु आत्माओं के अन्य तत्व भी हैं, अर्थात् वे अभी तक मनुष्य नहीं बने हैं। वे विकास की प्रक्रिया में आगे बढ़ रहे हैं। ये आत्मा-नींद से जागने के बाद प्रकट हो सकते हैं और अनुभव किए जा सकते हैं, और फिर ये आत्माएं सूक्ष्म लोक में प्रवेश करती हैं। वे वहां अत्यंत शांतिपूर्ण विश्राम कर सकते हैं, और फिर उन लोकों में जाते हैं जहां वे अपनी इच्छाओं की पूर्ति का अनुभव कर सकते हैं। इन्हीं लोकों को हम स्वर्ग कहते हैं, जहां हमारी इच्छाओं, विचारों और कर्मों की पूर्ति होती है। यदि हमने अच्छे कर्म किए हैं, तो उनके फल वहां अंकित रहते हैं और वे फल धीरे-धीरे कारण और क्रम के नियम के अनुसार फल उत्पन्न करते हैं। इन फलों को विभिन्न लोकों में व्यक्तियों द्वारा प्राप्त किया जाता है, जिन्हें स्वर्ग कहा जाता है, और यही विभिन्न राष्ट्रों के आदर्श हैं।
तो आप देखते हैं कि जो लोग किसी विशेष स्वर्ग के सुखों का आनंद लेना चाहते हैं, जहाँ खाने-पीने की प्रचुरता हो, छाया हो और ठंडी जगह हो, वे ऐसी अवस्था का सपना देखते हैं। मानो उनके आदर्श साकार हो उठते हैं। विचार-रूप का क्षेत्र उस क्षेत्र के समान है जहाँ उनका विचार सत्य के रूप में साकार होता है, ठीक वैसे ही जैसे सपने में होता है। जब आप सपना देखते हैं, तो आपको यह पता नहीं होता कि यह सपना है, लेकिन आप जानते हैं कि यह वास्तविक है और यह एक विचार-रूप है जिसे आप अनुभव कर रहे हैं। आप इसे देख सकते हैं, इसे छू सकते हैं, इसकी आवाज़ सुन सकते हैं, लेकिन ये सब विचार-रूप के भीतर ही हैं।

इसलिए विचार-रूपों के सिवा कोई वास्तविक दृश्य, पेड़, सड़कें और नहरें नहीं होतीं। यह एक स्वप्नलोक के समान है, और वहाँ आत्मा निवास करती है और उन सुखों का आनंद लेती है, क्योंकि वह उन्हें चाहती है। यह विचारों और इच्छाओं की पूर्ति का लोक है। कुछ समय बाद जब वे इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं, तो आत्मा उस अवस्था से ऊब जाती है। तब आत्मा परिवर्तन चाहती है और उन अवस्थाओं से बाहर निकल जाती है। वह कुछ अलग चाहती है। दूसरे लोक में कई आत्माएं थकी हुई या निराश हैं। वे अपने आदर्शों की अधिक मूर्त और प्रत्यक्ष प्राप्ति चाहती हैं।
137 विचार। इसलिए वे विभिन्न लोकों या क्षेत्रों में जाना पसंद करते हैं। उनमें से कुछ इस पृथ्वी पर आकर अधिक सुख भोगना और अधिक शक्तियाँ विकसित करना चाहते हैं, और इस प्रकार वे जन्म लेते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं। उनमें से कुछ के पास अपने माता-पिता को चुनने की शक्ति होती है। कुछ फिर से सो जाते हैं।
मृत्यु के बाद की नींद जन्म से पहले की नींद के समान होती है। फिर उन्हें दूसरी नींद आती है। इस लोक में आने से पहले वे उस नींद में चले जाते हैं और उपयुक्त वातावरण की ओर आकर्षित होते हैं। यदि मेरे मन में सर्वश्रेष्ठ कलाकार बनने की प्रबल इच्छा हो और यदि मैं सफल न हो पाऊं या अपनी इच्छा पूरी होने से पहले ही मेरा देहांत हो जाए, तो वह इच्छा मेरे भीतर उस आध्यात्मिक नींद में भी बनी रहेगी। वह फिर से अंकुरित होगी। शायद मैं कलाकारों के स्वर्ग में खिंचा चला जाऊं, जहां मेरा अन्य कलाकारों से संवाद और संवाद हो और हम अपने विचारों का आदान-प्रदान करें। फिर मैं इस लोक में उस इच्छा को एक बार फिर प्रकट करने का प्रयास करूंगा, और मैं उपयुक्त परिस्थितियों और वातावरण की ओर आकर्षित होऊंगा जहां मुझे वह भौतिक शरीर प्राप्त होगा जो मेरे आदर्श को साकार करने का साधन बनेगा। यही वह प्रक्रिया है जो घटित होती है।
इसलिए न तो कोई शाश्वत स्वर्ग है और न ही किसी दंड का कोई शाश्वत स्थान। यदि कोई दंड है भी, तो वह वैसा ही है जैसा हमें पृथ्वी पर मिलता है। वह दंड आपको मिलेगा। जब आप किसी वस्तु की इच्छा करते हैं और उसे प्राप्त नहीं कर पाते, तो वह नरक है। यह अवस्था आपको प्रबल आसक्ति के कारण हो सकती है। एक कंजूस व्यक्ति जिसे धन-दौलत के लेन-देन की आदत है, उसे इसमें आनंद आता है और वह इसे पसंद करता है। अब, यदि वह उस लोक या सूक्ष्म लोक में जाता है, तो

वह उस इच्छा को अपने साथ ले जाएगा। लेकिन उसके पास लेन-देन के लिए धन-दौलत नहीं होगी और वह उसी के लिए व्याकुल रहेगा और वही उसका दंड होगा। इसलिए हमारे लिए यह ठीक-ठीक जानना बहुत कठिन है कि किसी गलत काम करने वाले व्यक्ति के लिए नरक या दंड की वह अवस्था क्या होगी। यह सब वही है जो हम अपने विचारों और कर्मों से अपनी ओर आकर्षित करते हैं। ये सपने क्षण भर के लिए वास्तविक हो सकते हैं, क्योंकि सभी सपने तब तक सच होते हैं जब तक हम सपने देख रहे होते हैं। लेकिन, वास्तविकता में, जब उनकी तुलना शाश्वत काल से की जाती है, या जब उनकी तुलना उच्चतम मानक से की जाती है, तो वे केवल थोड़े समय के लिए ही टिकते हैं। इसलिए न तो कोई स्वर्ग शाश्वत है और न ही कोई नरक शाश्वत है। इसीलिए भगवद् गीता (8.16) में कहा गया है:
हे अर्जुन, सृष्टिकर्ता के सर्वोच्च स्वर्ग से नीचे तक इनमें से कोई भी स्वर्ग
यह स्थायी है। इसके निवासी देर-सवेर वहां से अवश्य लौटेंगे।
वे क्षणभंगुर हैं। वे अनंत काल तक एक ही अवस्था में नहीं टिकते। इसलिए, यह वह प्रगति है जो आत्मा कब्र में प्रवेश करने के बाद करती है। या तो वह स्वर्ग जाएगी, या न्याय के नियम के अनुसार भोगेगी। न्याय का नियम बहुत कठोर है। क्षमा जैसी कोई चीज नहीं है, बल्कि न्याय ही क्षतिपूर्ति का संतुलन बनाता है। कारण और परिणाम के नियम की संतुलित अवस्था अटल है। 'जो बोओगे वही काटोगे।'
138 शक्तिशाली और उतना ही वास्तविक जितना आप अभी यहाँ बैठे हैं। आप इसे नकार सकते हैं, लेकिन इससे बच नहीं सकते। आप अज्ञानता के कारण गुरुत्वाकर्षण बल को नकार सकते हैं, लेकिन हर कदम पर आप हिल नहीं सकते, और गुरुत्वाकर्षण बल के बिना पृथ्वी की सतह पर अस्तित्व में भी नहीं रह सकते। एक बच्चा नहीं जानता कि गुरुत्वाकर्षण जैसी कोई चीज होती है या नहीं, और उसकी अज्ञानता इस नियम को किसी भी तरह से प्रभावित नहीं करती। हमारा बचकाना इनकार किसी चीज को अस्तित्वहीन नहीं बना देता, बल्कि यह दिखाता है कि हम इससे बेहतर नहीं जानते। इसलिए कर्म का यह नियम, जो कारण और क्रम का नियम कहलाता है, विधवाओं के आँसुओं या अनाथों के रोने का इंतजार नहीं करता। हमने जो बोया है, उसे हमें या तो इस लोक में या किसी अन्य लोक में काटना ही होगा। इसलिए मृत्यु के बाद हम स्वर्ग लोक में भी अपने विचारों और कर्मों के सुखों का आनंद उठा सकते हैं।

व्यवसाय इस विश्वास पर आधारित हो सकते हैं कि हम कुछ निश्चित कार्य करते रहेंगे। हालांकि, यह सच नहीं है कि हमारे सांसारिक सभी प्रकार के व्यवसाय वहां दोहराए जाएंगे। यह संभव नहीं है। यदि ऐसा होता, तो जीवन जीने योग्य नहीं होता। मान लीजिए कि एक सफाईकर्मी को अनंत काल तक स्वर्ग की सड़कों की सफाई करनी है, एक रसोइया या दर्जी को अनंत काल तक वही काम करते रहना है; तो वह किस प्रकार का स्वर्ग होगा? हमारी धारणा के अनुसार वह बिल्कुल विपरीत स्थान होगा। लेकिन अचेतन स्तर पर भौतिक शरीर के कुछ कार्य और गतिविधियाँ हैं जो अंधकार में व्यथित आत्माओं की सहायता करती हैं और उन्हें एक निश्चित प्रकाश या ज्ञान प्रदान करती हैं, लेकिन यह भी एक नियम का उल्लंघन किए बिना नहीं किया जा सकता, क्योंकि कोई भी हमें तब तक कुछ नहीं दे सकता जब तक हम उसके योग्य न हों।
जिन आत्माओं को सहायता की आवश्यकता होती है, उन्हें सहायता अवश्य मिलती है। इसीलिए यह सर्वविदित कहावत, 'स्वर्ग उनकी सहायता करता है जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं', बिलकुल सत्य है। क्योंकि जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं, वे स्वयं को ब्रह्मांड से सहायता प्राप्त करने के लिए तैयार कर लेते हैं, और यदि हम स्वयं को ब्रह्मांड से सहायता प्राप्त करने के लिए तैयार नहीं करते, तो ब्रह्मांड हमारी सहायता नहीं करता। यह पूरी तरह से हमारे स्वयं के गुणों और दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। और इसीलिए महान गुरुओं ने हमेशा हमें सहायता प्राप्त करने के लिए तैयार रहने और इस पृथ्वी पर ऐसा जीवन जीने के लिए कहा है जो हमें शांति और सुख प्रदान करे और जिसके लिए हमें कभी एक पल के लिए भी पश्चाताप न करना पड़े, क्योंकि हमें अपने कंधों पर मौजूद जिम्मेदारी को समझना चाहिए।
इस पृथ्वी पर आकर और इस सांसारिक जीवन को जीकर, हमने अपने भविष्य और इस पृथ्वी पर अपने द्वारा किए जाने वाले हर कार्य की पूरी जिम्मेदारी अपने कंधों पर ले ली है, क्योंकि हमारा चरित्र और भविष्य हम स्वयं ही बनाते हैं। कोई और आत्मा हमारे भविष्य को आकार नहीं दे सकती, बल्कि हम स्वयं छोटे निर्माता हैं, और एक छोटे पैमाने पर निर्माता के रूप में हम अपने विचारों और कर्मों से अपना भविष्य, अपना भाग्य और अपना चरित्र बना रहे हैं। इसलिए, हमें इसे सचेत और सचेत रूप से करना चाहिए, और अपने जीवन को नियंत्रित करने वाले नियमों को समझना चाहिए, न केवल भौतिक स्तर पर, बल्कि मानसिक, नैतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक स्तर पर भी।

139
यदि हम उन नियमों को समझ लें, तो हम अपने भविष्य की प्रगति के नए द्वार खोल रहे हैं। जब पश्चाताप करने के लिए कुछ नहीं होता, तो हमें किसी बात का अफसोस नहीं होता। यदि हम अपने अस्तित्व के मूल में छिपी वास्तविक परिस्थितियों और सत्यों को जान लें, तो हमारा सांसारिक जीवन सुख और आनंद की एक निरंतर श्रृंखला बन जाएगा। परन्तु ये सत्य हमसे छिपे हुए हैं, क्योंकि हम इन्हें जानने के लिए तैयार नहीं हुए हैं। हम केवल सतही सुखों से ही खेल रहे हैं, परन्तु वह समय अवश्य आएगा जब प्रत्येक आत्मा में वास्तविक सत्य को जानने की इच्छा जागृत होगी। कोई भी आत्मा नष्ट नहीं होगी। प्रत्येक आत्मा अंततः सर्वोच्च ज्ञान या अनुभूति को प्राप्त करेगी और उस अवस्था में प्रवेश करेगी जहाँ न जन्म है, न मृत्यु है, और न ही किसी प्रकार का परिवर्तन है, केवल शाश्वत अस्तित्व, शाश्वत आनंद और शाश्वत ज्ञान है। इसलिए हमें मृत्यु से भयभीत नहीं होना चाहिए।
मृत्यु परिवर्तन के सिवा कुछ नहीं है। हम इस पुराने शरीर को त्याग सकते हैं, क्योंकि यदि हमारी इच्छा हो तो हम एक नया शरीर धारण कर सकते हैं। भगवद् गीता (2.13) में भी यही लिखा है:
जिस प्रकार हमारे भौतिक शरीर में शिशु शरीर और युवावस्था की मृत्यु के बाद भी हम जीवित रहते हैं, उसी प्रकार शिशु शरीर और युवावस्था की मृत्यु के बाद भी हम जीवित रहते हैं।
शरीर, इसलिए हम भौतिक शरीर के रूप को त्यागकर जीते हैं, जैसे हम उसे त्याग देते हैं।
पुराने कपड़े उतारो और नए कपड़े पहनो।
इसलिए मृत्यु के समय हम अपने पुराने शरीर को त्याग देते हैं, जिसने अपना उद्देश्य पूरा कर लिया है, और एक नया और उत्तम शरीर धारण करते हैं। अतः ज्ञानी लोग मृत्यु से कभी भयभीत नहीं होते, बल्कि सदा यह स्मरण रखते हैं कि सभी के लिए शाश्वत जीवन है और कोई भी आत्मा नष्ट नहीं होती। जो सर्वोच्च आध्यात्मिक अनुभूति प्राप्त कर चुके हैं, वे अंततः अनंत के समक्ष उपस्थित होंगे और उस शांति और सुख को प्राप्त करेंगे जो श्री कृष्ण, बुद्ध, ईसा मसीह, रामकृष्ण और संसार के अन्य सभी उद्धारकों ने प्राप्त किया है।

वास्तव में, सर्वोच्च ज्ञान की प्राप्ति ही अध्यात्मवाद का लक्ष्य है और यही समस्त मानव जाति का सार है।

140

अध्याय सोलह

जिन चर्चाओं में भाग लेने का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ
स्वामी के साथ रहें
प्रश्न और उत्तर – सेट 1
प्रश्न: मृत्यु के बाद के लोक में, क्या आत्मा पूर्णता की अवस्था में विकसित होती रहेगी, या पृथ्वी पर वापस आकर पुनर्जन्म लेना आवश्यक है? उत्तर: यह आत्मा की इच्छा पर निर्भर करता है।
प्रश्न: यदि आत्मा बिना वापस आए विकसित हो सकती है, तो क्या वापस न आना ही बेहतर नहीं होगा?
उत्तर: उन्हें परलोक में वैसा अनुभव नहीं मिल सकता जैसा उन्हें यहाँ भौतिक रूप में प्राप्त होता है।
प्रश्न: क्या उन सभी आत्माओं के लिए पर्याप्त शरीर उपलब्ध हैं जो वापस पृथ्वी पर आकर पुनर्जन्म लेना चाहती हैं?
उत्तर: आपने यह गलत धारणा बना ली है कि शरीर आत्माओं की प्रतीक्षा करते हैं। यह सही नहीं है। आत्माएं शरीरों का निर्माण करती हैं। आपने जो विचार व्यक्त किया है, वह पुनर्जन्म की पुरानी मान्यता है, जिसके अनुसार शरीर आत्माओं के आगमन के लिए तैयार किए जाते हैं, लेकिन इसका अर्थ पुनर्जन्म नहीं है। मैंने अपने पुनर्जन्म विषय पर दिए व्याख्यान में इसकी व्याख्या की है। आत्मा विकास के भौतिक नियमों का पालन करते हुए शरीर का निर्माण करती है।
प्रश्न: जब देवदूत को स्वर्ग से निकाल दिया गया, तो क्या उसने अवतार लिया? उत्तर: यह एक पौराणिक मान्यता है। स्वर्ग से आए देवदूत से आपका तात्पर्य उस देवदूत से है जो शैतान बन गया। यह एक पौराणिक मान्यता है कि देवदूत ने स्वयं सृष्टिकर्ता की अवज्ञा की। तब सृष्टिकर्ता ने उसे निष्कासित कर दिया, और इस प्रकार वह इस पृथ्वी पर आ गिरा। यह एक अपरिष्कृत व्याख्या है, जो आदिम बुद्धिजीवियों द्वारा दी गई थी। इसमें कोई वास्तविक सत्य नहीं था। उन्होंने इस पौराणिक कथा के माध्यम से प्रकृति में अच्छाई और बुराई को समझाने का प्रयास किया। यह कोई वास्तविक तथ्य नहीं था।
प्रश्न: आप कहते हैं कि मृतकों को यह पता नहीं होता कि वे मर चुके हैं।

उत्तर: उन्हें पता नहीं होता। उन्हें यह एहसास होने में काफी समय लगता है कि वे बेहोश हो गए थे।

141
प्रश्न: हमें इस बात का क्या आश्वासन है कि हम जीवित हैं?
उत्तर: इसका कोई प्रमाण नहीं है। हम स्वयं को मृत घोषित कर सकते हैं। प्र. आप नशे में धुत आत्माओं को माध्यमों को नशे में धुत करने से कैसे रोकेंगे?
उत्तर: इस पृथ्वी पर शराबी रह चुकी आत्मा अपने साथ वह लालसा लिए घूमती है और शराब पीना चाहती है। लेकिन उसे यहाँ शराब नहीं मिलती और वह वेश्यालयों के आसपास मंडराना चाहती है। इसलिए वह किसी माध्यम या किसी मित्र या रिश्तेदार के शरीर में प्रवेश कर लेती है और उसे शराब पीने के लिए मजबूर करती है, ताकि वह शराब का स्वाद ले सके।
प्र. वह जुनूनी व्यक्ति इसे कैसे रोकेगा?
उत्तर: आपको उसका सम्मोहन मुक्त करना होगा। माध्यम का भूत-प्रेत-निवारण करना होगा, यानी, उच्चतर आध्यात्मिक शक्ति द्वारा इस जुनून का उपचार किया जा सकता है। यदि आप किसी ऐसे व्यक्ति को जानते हैं जिसके पास उच्चतर प्रकृति की कोई परिचित आत्मा है, तो वह उच्चतर आत्मा आदेश या इच्छाशक्ति द्वारा उसे बाहर निकाल देगी, लेकिन रोगी में वह इच्छाशक्ति नहीं हो सकती; उसे ठीक होने के लिए किसी अन्य आत्मा से मुक्ति की आवश्यकता है।
प्रश्न: क्या आत्मा अनिश्चित काल तक एक ही भौतिक शरीर में रह सकती है? उत्तर: हां, ऐसा हो सकता है, यदि उसने नियमों को समझा हो और सही जीवन जिया हो।
प्रश्न: प्राचीन काल के लोग हृदय निकालकर उसकी जगह स्कारैब क्यों रखते थे? उत्तर: यही उनकी मान्यता थी। स्कारैब सृष्टि का प्रतीक था।
प्रश्न: आपने कहा कि यदि शरीर कब्र में पड़ा रहे, तो आत्मा जब वापस लौटेगी और उस शरीर को देखेगी तो उसे कष्ट होगा। क्या शरीर को जलाने से आत्मा को और अधिक कष्ट नहीं होगा?
उत्तर: अगर उन्हें यह एहसास हो कि उनका शरीर नष्ट हो रहा है, तो शायद कुछ समय के लिए ऐसा हो सकता है। उन्हें थोड़ी देर के लिए सदमा लग सकता है, लेकिन शरीर के नष्ट होने के बाद वे भूल जाएंगे। उन्हें भुलाने का यह सबसे

आसान तरीका होगा, क्योंकि वे आकर उसे देख नहीं सकते। लेकिन अगर शरीर को संरक्षित रखा जाए, तो शरीर का आकर्षण आत्मा को नीचे खींच लाएगा, और ऐसा कई बार हो सकता है। इसलिए दाह संस्कार का लाभ है।
प्रश्न: एक आत्मा कितने वर्षों तक कम से कम स्वप्न अवस्था या अचेतन अवस्था में रह सकती है?
उत्तर: हमारा समय उन पर कोई असर नहीं डालता। हमारे पाँच हज़ार साल उनके लिए पाँच सेकंड के बराबर हो सकते हैं।

142
प्र. लेकिन यह कितने समय तक चलेगा? दस साल?
उत्तर: खैर, यह तो मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ।
प्रश्न: हिंदुओं में एक प्रथा है कि किसी की मृत्यु होने पर वे पानी का एक घड़ा और एक तौलिया रखते हैं, और उनका मानना है कि आत्मा उनके लिए आठ बार आती है। इसकी उत्पत्ति कहाँ से हुई?
उत्तर: मैंने ऐसा कुछ कभी नहीं देखा। शायद कुछ अंधविश्वास हो, लेकिन हमने ऐसा कुछ कभी नहीं देखा कि आत्माओं को भोजन की आवश्यकता होती है, कि दिवंगत आत्माओं को पोषण चाहिए। कुछ लोग साल में एक बार भोजन अर्पित करते हैं और हमारे लिए एक साल उनके लिए एक दिन के बराबर हो सकता है; इसलिए वे साल में एक बार उनके नाम पर भोजन अर्पित करते हैं, लेकिन इसका लाभ गरीबों को मिलता है। प्र. क्या हम वहां अपने दोस्तों को जानते हैं?
उत्तर: जी हाँ, हम करते हैं।
प्रश्न: पुनर्जन्म और आत्मा के दूसरे शरीर में जाने में क्या अंतर है? उत्तर: हमारा धर्म पुनर्जन्म की शिक्षा देता है, जो एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने से थोड़ा अलग है। पुनर्जन्म अधिक वैज्ञानिक है। यह नहीं सिखाता कि हम अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए अंधाधुंध मानव शरीर से पशु शरीर में वापस आ जाते हैं।
प्रश्न: क्या मैं सही समझ रहा हूँ कि आत्मा स्वयं को दो भागों में विभाजित करती है?
उत्तर: नहीं, इसे हम सूक्ष्म शरीर कहते हैं। यह वह शरीर है जिसे आत्मा ने पहले ही निर्मित कर लिया है। यह अभी आपमें और मुझमें विद्यमान है। यह

विभाजित नहीं है, बल्कि यह सूक्ष्म आध्यात्मिक रूप में शरण लेती है और जब आत्मा उस सोहवास और उस सूक्ष्म शरीर में जाती है तो उसी में निवास करती है। प्र. आप जिस धुंध की बात कर रहे थे, वह क्या है?
उत्तर: वह धुंध केवल इलेक्ट्रॉनों जैसे सूक्ष्म तत्वों के शरीर से बाहर निकलने का परिणाम है।
प्रश्न: क्या इसका मृत्यु के बाद आत्मा से कोई संबंध है?
उत्तर: आत्मा वह केंद्र है जिसमें जीवन, मन और बुद्धि समाहित होती है, और धुंध वह नहीं है। धुंध तो केवल पदार्थ के कणों का समूह है जो बादल या वाष्प की तरह एकत्रित हो जाते हैं।
प्र. क्या यह अहंकार है?
उत्तर: अहंकार केंद्र में है। यह प्रकट नहीं होता, बल्कि एक नाभिक या परमाणु की तरह कारण-कार्य अवस्था में होता है।
143
प्रश्न: अहम् का क्या होता है?
उत्तर: यह मौजूद है; केवल यह अभी संभावित है, अप्रकट है।
प्रश्न: क्या आत्मा को भौतिक शरीर पर अधिकार दिया गया है?
उत्तर: जी हां, उपचार की शक्ति आत्मा में निहित है।

144

अध्याय सत्रह

हमने यहां अपनी स्मृति से दिया है,
हमारी कुछ चर्चाएँ इस प्रकार थीं:
स्वामी जी के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।
प्रश्न और उत्तर – सेट 2
प्रश्न: स्वामीजी, मृत्यु से ठीक पहले और मृत्यु के बाद आत्माओं का क्या होता है?
उत्तर: मृत्यु से ठीक पहले आत्मा धीरे-धीरे अपनी सभी इंद्रिय शक्तियों को संकुचित और वापस ले लेती है। भौतिक इंद्रियाँ मंद होती जाती हैं, जैसे कोई टिमटिमाती मोमबत्ती की लौ धीरे-धीरे बुझने लगती है; लेकिन इंद्रियाँ और शक्तियाँ तीव्र और प्रबल होती जाती हैं। शरीर छोड़ने से ठीक पहले आत्मा अचेतन अवस्था में रहती है, जैसे नींद में, और उस अवस्था में सूक्ष्म या आध्यात्मिक शरीर धुंध की तरह विलीन हो जाता है।
प्रश्न: तो क्या वास्तव में मृत्यु के बाद आत्माओं की स्थिति भयावह होती है?
उत्तर: जी हाँ। पृथ्वी पर रहने वाली आत्माएँ बहुत कष्ट भोगती हैं। उन्हें यह ज्ञान नहीं होता कि वे मर चुकी हैं। उस नींद की अवस्था में आत्माएँ अपने पूरे जीवन का सार संजोए रखती हैं। जब आत्माएँ नींद से जागती हैं, तो वे सूक्ष्म जगत में प्रवेश करती हैं। यह सूक्ष्म जगत आत्माओं के अपने विचारों का ही प्रक्षेपण है। उनके आयाम कंपन में होते हैं। देहहीन आत्माएँ उस सूक्ष्म जगत में अपने विचारों को साकार होते हुए पाती हैं। वे सोती हैं, लेकिन उनकी नींद की अवधि भिन्न-भिन्न होती है।
प्रश्न: क्या तब वे एक एकांत और पराये क्षेत्र में प्रवेश नहीं करते? उत्तर: जी हाँ। इसे स्पष्ट करने के लिए, आइए एक उदाहरण लेते हैं। मान लीजिए आप कलकत्ता जैसे किसी बड़े और घनी आबादी वाले शहर के निवासी हैं। एक घोर अंधेरी रात में भयानक भूकंप आता है, जिससे पूरा शहर तबाह हो जाता है। घर ढह जाते हैं और पूरा शहर घने अंधेरे में डूबे एक विशाल रेगिस्तान जैसा दिखता है। ऐसे में, अगर आपको आँखों पर पट्टी बांधकर घूमने-फिरने की छूट दी जाए,

तो आपकी क्या हालत होगी? ज़रा सोचिए। मृत्यु के बाद पृथ्वी पर भटकती आत्माओं की यही दयनीय स्थिति होती है।
प्र. क्या सभी आत्माओं के साथ यही स्थिति है?

145
उत्तर: नहीं। इससे केवल साधारण सांसारिक जीव ही पीड़ित होते हैं। सद्गुणी जीवों का मामला बिल्कुल अलग है। वे सहजता और स्वतंत्रता से विचरण करते हैं और अपने ज्ञान और पवित्रता के प्रकाश से अपने मार्ग को देख सकते हैं। प्रश्न: स्वामीजी, क्या हम आपसे एक बार फिर पूछ सकते हैं कि मृत्यु के बाद आत्माएं वास्तव में कहाँ जाती हैं?
उत्तर: वे वहीं जाते हैं जहाँ वे पहले से मौजूद होते हैं। जब आप सोते हैं तो आप कहाँ रहते हैं? आप मन में रहते हैं। मृत्यु के बाद आत्माओं को किसी अन्य स्थान पर जाने की आवश्यकता नहीं होती। वे उसी मानसिक तल में रहते हैं जैसे हम अपनी नींद या स्वप्न (स्वप्न) की अवस्था में रहते हैं। आत्माएँ तब मानसिक तल या मनोमय जगत में निवास करती हैं। वे उस अवस्था में मानसिक रूप से ही गति करती हैं और सब कुछ करती हैं। भौतिक तल का उनके लिए कुछ भी शेष नहीं रहता। उस समय वे जिस शरीर में निवास करती हैं वह सूक्ष्म होता है और सत्रह सूक्ष्म तत्वों से बना होता है। ये हैं: पाँच प्राण, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मन और बुद्धि। सत्रह तत्वों के इस मिश्रित सूक्ष्म शरीर को सांख्य और अन्य हिंदू दर्शनों में सूक्ष्म-शरीर कहा जाता है।
प्रश्न: जीवित व्यक्तियों की प्रार्थनाएँ और अच्छे विचार दिवंगत आत्माओं के लिए किस प्रकार सहायक होते हैं?
उत्तर: मैंने पहले ही कहा है कि मृत्यु के तुरंत बाद आत्माएं अपने पूर्व भौतिक शरीर से अलग होने का अहसास नहीं कर पातीं। वे मृत्यु के तुरंत बाद बेहोश और अचेत अवस्था में रहती हैं। ऐसी स्थिति में शुभचिंतकों की किसी भी प्रकार की प्रार्थनाएं आत्माओं को बहुत सहायता प्रदान करती हैं। रिश्तेदारों और प्रियजनों के अच्छे विचार उनके मानसिक स्तर पर सकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इस प्रकार वे उनकी स्तब्ध मनःस्थिति में एक विशेष कंपन उत्पन्न करते हैं, उनकी छिपी हुई चेतना को पुनर्स्थापित करते हैं, और इस प्रकार आत्माओं को यह अहसास होता है कि वे वास्तव में अपने भौतिक शरीर में

नहीं हैं। उनके रिश्तेदारों का रोना-धोना उन्हें पीड़ा पहुंचाता है और इस प्रकार कुछ आत्माएं अपने सूक्ष्म लोकों से नीचे गिर जाती हैं। लेकिन अच्छी प्रार्थनाएं उनकी चेतना को वापस लाती हैं और फिर वे सीमा क्षेत्र को पार करने का प्रयास करती हैं। कंपन का यह सीमा क्षेत्र आकाश की एक संकरी नदी के समान है, जिसकी तुलना एक तटस्थ क्षेत्र से की जा सकती है। हिंदुओं ने इसे बैतरानी, पारसियों (ज़ोरोस्ट्रियन) ने चिन्नत-पुल और मुसलमानों ने सिरात कहा है।
साधारण या पृथ्वी से जुड़े जीव आसानी से सीमा रेखा पार नहीं कर सकते। वे आम तौर पर ऐसे क्षेत्र में जाते हैं जहाँ स्थायी अंधकार छाया रहता है। उपनिषद में इस अंधकारमय सूक्ष्म जगत का वर्णन इस प्रकार किया गया है:
"असूर्य नाम ते लोक अन्धेन तमसावृतः; तमस्ते प्रेत्यभिगाच्छन्ति ये के" chatmahano janhha.” - Isha Upanishad 1.3:

146
‘स्थायी अंधकार के क्षेत्र हैं; वहां सूर्य या अन्य प्रकाशमान पिंडों का प्रकाश कभी नहीं दिखाई देता। जिन्होंने अपने सच्चे स्वरूप को नहीं जाना है या जो आत्म-साक्षात्कार के लिए प्रयास नहीं करते, उन्हें मृत्यु के बाद उस अंधकारमय क्षेत्र में जाना ही होगा।’
सूर्य, चंद्रमा और तारे आध्यात्मिक जगत में प्रकाशमान नहीं हो सकते, क्योंकि वे हमारे इस भौतिक संसार से संबंधित हैं। मृत्यु के बाद के उस सूक्ष्म जगत में किसी भी सांसारिक या भौतिक वस्तु के लिए कोई स्थान नहीं है।
प्रश्न: क्या मृत्यु के बाद पृथ्वी पर रहने वाली आत्माओं की स्थिति और भी खराब हो जाती है?
उत्तर: जी हाँ। पृथ्वी पर रहने वाले जीवों की इच्छाएँ पूरी नहीं होतीं, इसलिए उनका कष्ट बढ़ता ही जाता है। वे स्वयं अपनी कब्र खोदते हैं। भौतिक सुखों की सभी इच्छाएँ तब चरम पर पहुँच जाती हैं। तब जीव उन अधूरी इच्छाओं की जलती हुई ज्वालाओं से पीड़ित होते हैं।
वास्तव में, जैसा बोओगे वैसा काटोगे। इच्छाएँ संस्कारों के रूप में बनी रहती हैं। शरीर की मृत्यु संस्कारों को नष्ट नहीं कर सकती। मृत्यु के बाद भी वे मन में बीज के रूप में बने रहते हैं।

प्रश्न: स्वामीजी, दोहरे या सूक्ष्म शरीर से क्या तात्पर्य है?
उत्तर: द्वैत या सूक्ष्म शरीर भौतिक शरीर का हूबहू प्रतिरूप होता है। मृत्यु के समय सूक्ष्म शरीर भौतिक शरीर से विमुख हो जाता है, और जब यह विमुख हो जाता है, तब भी सूक्ष्म या वाष्प जैसे पदार्थ का एक पतला धागा या डोरी शेष रह जाती है। अंत में यह भी विलीन हो जाता है। आत्मा तब गर्भ में पल रहे शिशु की तरह कोमा जैसी अवस्था में रहती है।
प्रश्न: क्या मृतकों से संवाद करना संभव है?
उत्तर: बिल्कुल। सामान्यतः अर्धजागृत आत्माएँ आध्यात्मिक मंडलों में माध्यम के द्वारा प्रकट होती हैं। कुछ आत्माएँ हमारी स्वार्थी पुकारों का उत्तर देने के लिए अपनी शांत नींद से जाग उठती हैं, और कुछ स्वयं संवाद करने के लिए उत्सुक होती हैं। वे स्वप्निल अवस्था में प्रकट होती हैं। कभी-कभी यह भी देखा गया है कि माध्यम को खुलते देख वे अपना आत्म-नियंत्रण खो देती हैं।
प्रश्न: क्या निराकार आत्माएं कोई भौतिक रूप धारण कर सकती हैं?
उत्तर: जी हाँ, वे ऐसा कर सकते हैं। दिवंगत आत्माओं के सूक्ष्म शरीर या सूक्ष्म शव, माध्यमों की अचेतन अवस्था में उनकी जीवंतता के माध्यम से अस्थायी रूप से प्रकट हो सकते हैं। वे धुंधली आकृतियों में दिखाई देते हैं, हिलते-डुलते हैं और कभी-कभी बोलते भी हैं। जिन पुरुषों में मानसिक क्षमता होती है, वे ऐसा कर सकते हैं।
147 शक्तियां आत्माओं के इन छायादार रूपों को देख सकती हैं। अध्यात्मवादियों द्वारा कई बार प्रयोग किए गए हैं, जिनसे यह सिद्ध हुआ है कि एक प्रबल माध्यम शक्ति द्वारा इन मानसिक शवों को प्रत्यक्ष जीवन में जागृत किया जा सकता है।
प्रश्न: क्या दिवंगत आत्माएं पृथ्वी पर पुनः जन्म लेती हैं?
उत्तर: जी हाँ। जब तक वे इच्छाओं के बंधनों को तोड़कर जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त नहीं हो जाते, तब तक वे बार-बार पृथ्वी पर जन्म लेते हैं। देर-सवेर, दिवंगत आत्माओं में नए जीवन में पुनः जन्म लेने की तीव्र इच्छा जागृत होती है। उनकी अतृप्त इच्छाओं के बीज उन्हें पृथ्वी पर पुनः जन्म लेने के लिए विवश करते हैं। इसलिए वे जन्म लेने से पहले ही अपने लिए उपयुक्त माता-पिता, परिस्थितियाँ और परिवेश चुन लेते हैं। वे पुनः आध्यात्मिक नींद में लीन हो जाते हैं और सूक्ष्म जगत में उसी प्रकार

मृत्यु को प्राप्त होते हैं जैसे वे पहले पृथ्वी पर हुए थे। विकास और अवनमन की इसी चक्रीय प्रक्रिया द्वारा वे आंशिक नींद की अवस्था में जन्म लेते हैं। वे धीरे-धीरे स्वप्न जैसी अवस्था से पृथ्वी जगत की चेतना में जागृत होते हैं।
प्रश्न: क्या मृत्यु के बाद के संसार के ज्ञान के लिए अध्यात्मवाद का विकास करना अच्छा नहीं है?
उत्तर: मेरे विचार से, जो लोग वास्तव में आत्मा के सर्वोच्च ज्ञान को प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिए यह उचित नहीं है। हमारे जीवन का उद्देश्य क्षणभंगुर और अवास्तविक चीजों का ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि परम सत्य और परम आनंद की प्राप्ति करना है।
आध्यात्मिक जगत अनुभवजन्य दृष्टि से सत्य प्रतीत हो सकता है, लेकिन वास्तव में यह मानव मन की कल्पना मात्र है। आत्माएं अजन्मी और असृजित होती हैं और स्वभाव से अमर होती हैं। जन्म और मृत्यु, आना और जाना मात्र दिखावटी हैं। अज्ञान के पर्दे के कारण ही मनुष्य स्वयं को मृत या जन्मा समझता है। जब आत्मा के स्वयंप्रकाशित प्रकाश से उसका अज्ञान का अंधकार दूर हो जाता है, तब वह स्वयं को अमर आनंद के रूप में अनुभव करता है। अध्यात्मवाद हमें जन्म और मृत्यु के चक्रों से मुक्ति नहीं दिलाता; केवल परम सत्य का ज्ञान ही हमें इससे मुक्त कर सकता है।

148

परिशिष्ट

स्वामी अभेदानंद के अनुभव
आत्माओं
नोट 1: स्वामी प्रजनानंद द्वारा, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता।
स्वामी अभेदानंद के इस कथन से हमें उन दो घटनाओं की याद आती है जिन्हें उनसे सुनने का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ था। उन्होंने बताया कि जब वे अमेरिका में थे, तो एक शाम उन्होंने अपने सामने हवा में तैरती हुई एक आत्मा का चेहरा देखा। आत्मा का चेहरा पीला और पीड़ा से भरा हुआ था।
स्वामी ने आत्मा से पूछा: 'तुम्हें क्या तकलीफ है?'
आवाज आई। ‘मेरी मदद करो। मेरी मदद करो। मैं पीड़ित हूँ। मैंने आत्महत्या करने का प्रयास किया है।’
स्वामी ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा: ‘यदि आपको लगता है कि मेरी प्रार्थनाएँ और आशीर्वाद आपकी सहायता करेंगे, तो मेरी शुभकामनाएँ आपके साथ हैं, मैं आपके लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। आपको शांति मिले।’
स्वामी ने देखा कि आत्मा का पीला और उदास चेहरा चमक उठा और फिर वह मुस्कुराते हुए विलीन हो गई। दूसरा उदाहरण एक नाविक की आत्मा का था जो समुद्र में डूब गया था। वह भी उनके सामने अंधेरे में भटकते हुए व्यक्ति की तरह प्रकट हुआ। स्वामी ने उससे पूछा, 'तुम्हें क्या हुआ है?' आत्मा ने उत्तर दिया कि उसे नहीं पता, वह डूब गया है। उसने स्वामी से मदद की गुहार लगाई। स्वामी ने उसके लिए प्रार्थना की और वह शांत और प्रसन्न चेहरे के साथ विलीन हो गया।
यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि स्वामी अभेदानंद ने भारत में अपने शिष्य स्वामी अद्भुतनंद (लातु महाराज) के देहांत के तुरंत बाद उनकी वाणी सुनी थी। एक दिन स्वामी ने हवा में एक भारी आवाज सुनी: 'काली काली'। (काली स्वामी अभेदानंद का उपनाम था)। उन्होंने तुरंत चारों ओर देखा, लेकिन कोई व्यक्ति नहीं मिला। उन्होंने पूछा कि कौन है, और आवाज आई: 'मैं लातु हूं। मैं आपसे मिलने आया हूं।' स्वामी को अपने प्रिय भाई के देहांत का आभास हुआ और अगले दिन जब उन्हें स्वामी अद्भुतनंद के निधन का दुखद समाचार प्राप्त हुआ, तो यह सच साबित हुआ।

स्वामी ने कवि गिरीश चंद्र घोष की साकार आत्मा को भी देखा, जो प्रकट होते ही चारों ओर थूक रहे थे। स्वामी ने गिरीश चंद्र के इस कार्य की व्याख्या इस प्रकार की: जिस प्रकार हम किसी व्यर्थ, क्षणभंगुर वस्तु पर थूकते हैं, उसी प्रकार कवि भी इस कार्य से मुक्त होकर, निर्जीव हो रहे थे।

149 उसने अपने पार्थिव शरीर के बंधन को क्षणभंगुर सांसारिक वस्तुओं पर थूक दिया, जिनका परम अस्तित्व की तुलना में कोई वास्तविक मूल्य या वास्तविकता नहीं है।
टिप्पणी 2: स्वामी अभेदानंद द्वारा सन् 1925 में कलकत्ता साइकिकल रिसर्च सोसाइटी की वर्षगांठ सभा में दिए गए भाषण का अंश। (पूर्ण विवरण के लिए) भाषण के संबंध में, कृपया संपूर्ण पुस्तक के ‘मृत्यु के बाद जीवन’ खंड में परिशिष्ट ए देखें।
स्वामी अभेदानंद की रचनाएँ, खंड 4)
स्वामी जी ने अपने भाषण में सबसे पहले अमेरिका में आध्यात्मिक आंदोलन की उत्पत्ति, विकास और प्रगति का संक्षिप्त विवरण दिया और बताया कि कैसे धीरे-धीरे यह आंदोलन दुनिया के अन्य देशों में भी फैल गया। उन्होंने कहा कि अमेरिका में अपने लंबे प्रवास के दौरान वे इस आंदोलन और उस महाद्वीप के कुछ प्रसिद्ध नेताओं के संपर्क में आए। फिर उन्होंने बड़े ही आकर्षक ढंग से कुछ प्रसिद्ध आध्यात्मिक सत्रों के प्रत्यक्षदर्शी के रूप में अपने अनूठे अनुभवों का वर्णन किया। वहाँ उन्हें हार्वर्ड के प्रोफेसर विलियम जेम्स, प्रोफेसर मायर्स और अन्य कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों की आत्माओं से संदेश प्राप्त करने का अवसर मिला।
स्वामी जी ने मृत्यु के बाद मनुष्य की विभिन्न अवस्थाओं के बारे में बहुत कुछ कहा। मृत्यु के बाद मनुष्य को आध्यात्मिक जीवन के अनेक चरणों से गुजरना पड़ता है। जिस व्यक्ति ने यहाँ दुष्ट जीवन व्यतीत किया है, उसे ऐसे स्थान पर कष्ट और पीड़ा सहनी पड़ती है जहाँ अनंत काल तक घोर अंधकार छाया रहता है। परन्तु एक धर्मपरायण और गुणी व्यक्ति का मामला बिल्कुल भिन्न होता है।
स्वामी ने आत्माओं से संवाद के अपने विभिन्न अनुभवों का वर्णन करना जारी रखा। एक बार वे एक आध्यात्मिक सत्र में उपस्थित थे और वहाँ एक बहुत ही आश्चर्यजनक घटना घटी।

एक अंधेरे कमरे में मेज पर फास्फोरस से लेपित एक संगीत-पेटी रखी थी। यह कमरा आध्यात्मिक अनुष्ठान के लिए रखा गया था। इसके दरवाजे और खिड़कियां पूरी तरह से बंद थीं। अनुष्ठान शुरू होते ही अचानक संगीत-पेटी ऊपर उठी और धीरे-धीरे छत को छू गई। फिर एक उड़ते हुए पक्षी की तरह, वह किसी विशेष धुन की धुन बजाते हुए कमरे की चारों दीवारों पर सरकने लगी। एक बार तेज आवाज सुनाई दी और पेटी दीवार को भेदते हुए बाहर चली गई। कमरे के बाहर से भी वह उसी तरह सरकने लगी और संगीत की धुन जारी रही। लगभग पंद्रह मिनट बाद एक और तेज आवाज सुनाई दी और कमरे में ही संगीत-पेटी मिली। वही धुन अभी भी बज रही थी। यह पूरी घटना लगभग पंद्रह मिनट में ही पूरी हो गई।
एक अन्य प्रेत-संवेदना सत्र में एक ऐसी घटना घटी जो कम आश्चर्यजनक नहीं थी। स्वामी जी किसी आत्मा का संदेश सुन रहे थे, तभी अचानक उन्हें अपने पूरे शरीर पर कई हाथों का स्पर्श महसूस हुआ। लेकिन उन्होंने पाया कि उनके आसपास कोई भी व्यक्ति नहीं था। वे एक

150 जब उसने कुछ आत्माओं की आवाज़ें सुनीं जो उसे संबोधित कर रही थीं: 'क्या आपको लगता है कि माध्यम ये सब काम कर रहा है?' तो वह थोड़ा आश्चर्यचकित हुआ।
फिर उसी सत्र में एक और घटना घटी जो और भी आश्चर्यजनक थी। जब स्वामी जी अंधेरे पर्दे से वापस आकर अपनी कुर्सी पर बैठने लगे, तो उन्होंने देखा कि उनकी कुर्सी पर एक महिला बैठी है। वह कोई मनुष्य नहीं बल्कि किसी आत्मा का साकार रूप थी। जैसे ही वे उसके पास पहुँचे, आत्मा उठ खड़ी हुई और उनसे हाथ मिलाया। स्वामी जी को लगा कि उसका स्पर्श किसी जीवित मनुष्य के स्पर्श की तरह ही स्पर्शनीय और गर्म था। लेकिन पल भर में ही उनके हाथों में पकड़ी हुई आत्मा का हाथ गायब हो गया।
स्वामी जी ने कहा कि कुछ आत्माओं के लिए माध्यमों की सहायता के बिना भी प्रत्यक्ष रूप में प्रकट होना संभव है और वे सभी से सीधे संवाद कर सकती हैं। उन्होंने यह भी बताया कि उन्होंने सर अल्फ्रेड टर्नर के घर में आयोजित एक प्रेत-संग्रह सत्र में एक स्वतंत्र आवाज को उन्हें और वहां उपस्थित अन्य लोगों को संबोधित करते हुए सुना था, जिसमें उन्होंने कहा था: 'शुभ संध्या, भाई।'

लेकिन शरीर धारण करने की यह शक्ति सभी आत्माओं के पास नहीं होती। केवल उन्नत मानसिक शक्तियों वाली आत्माएँ ही ऐसा कर सकती हैं। एक बात स्पष्ट कर देनी चाहिए कि यद्यपि आत्माएँ भौतिक शरीर धारण कर लेती हैं, वे अपनी भौतिक अवस्था से अवगत नहीं होतीं। इसलिए वे ऐसे शरीरों को अधिक समय तक धारण नहीं कर सकतीं।

151